BAJY - 301/बी०ए०जे०वाई०- 301

वर्ष फल विचार

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाई पास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पास, हल्द्वानी - 263139
फोन नं. 05946 - 261122, 261123
टॉल फ्री नं. 18001804025
फैक्स नं. 05946-264232, ई-मेल info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

पाठयक्रम समिति

प्रोफे0 एच0पी0 शुक्ल
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ0 देवेश कुमार मिश्र
सहायक आचार्य,संस्कृत विभाग
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ संगीता वाजपेयी
अकादमिक एसोसिएट , संस्कृत विभाग
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

प्रोफे0 देवीप्रसाद त्रिपाठी
ज्योतिष विभाग
श्री ला0ब0शा0सं0वि0, नई दिल्ली

प्रोफे0 वासुदेव शर्मा
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग
रा0सं0सं0 , भोपाल परिसर

डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी
अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन एवं संयोजन

डॉ नन्दन कुमार तिवारी
अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन	खण्ड	इकाई संख्या
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी अकादमिक एसोसिएट, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	1	1, 2, 3, 4, 5, 6
डॉ0 विनय कुमार पाण्डेय **एसोसिएट प्रोफेसर , ज्योतिष विभाग** काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी	2	1, 2, 3, 4, 5
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी **अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	3	1, 2, 3, 4, 5, 6, 7
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी **अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	4	1, 2, 3, 4, 5

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष : 2014 ***ISBN No. - 978 – 93 – 84632 – 81-6***

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

मुद्रक : उत्तरायण प्रकाशन , हल्द्वानी , नैनीताल – उत्तराखण्ड

नोट - : (इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।

अनुक्रम

प्रथम खण्ड — वर्षकुण्डली निर्माण	**पृष्ठ - 1**
इकाई 1 : वर्षप्रवेश साधन	2-11
इकाई 2 : भावस्पष्ट एवं चलित चक्र	12-21
इकाई 3 : ग्रहस्पष्ट एवं मुन्था	22-30
इकाई 4 : लग्न स्पष्ट	31-39
इकाई 5 : वर्शेष निर्णय	40-49
इकाई 6 : मुद्दा दशा साधन	50-56
द्वितीय खण्ड - वर्षफल विचार	**पृष्ठ 57**
इकाई 1 : षोडश योग	58-73
इकाई 2 : मुन्था फल	74-83
इकाइ 3 : सहम विचार	84-93
इकाइ 4 : अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार	94-103
इकाई 5 : दशा फल में विशेष	104-114
तृतीय खण्ड — भावफल	**पृष्ठ 115**
इकाई 1 : 1-3 भावफल	116-127
इकाई 2 : 4-6 भावफल	128-139
इकाई 3 : 7-9 भावफल	140-153
इकाई 4 : 10-12 भावफल	154-163
इकाई 5: पंचवर्गी बल निर्णय	164 – 174

इकाई 6 : दशा फल 175 – 185

इकाई 7 : दशा फल में विशेष 186 – 192

चतुर्थ खण्ड - प्रश्न विचार पृष्ठ 193

इकाई 1 : प्रश्न प्रयोजन 194-203

इकाई 2: प्रश्न विधि 204-212

इकाई 3: प्रश्न लग्न सिद्धान्त 213 – 221

इकाई 4: प्रश्नाक्षर सिद्धान्त 222 - 229

इकाई 5 : स्वर सिद्धान्त 230- 238

बी0 ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष

प्रथम पत्र

वर्षफल विचार

खण्ड - 1

वर्षकुण्डली निर्माण

इकाई – 1 वर्षप्रवेश साधन

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 वर्षप्रवेश परिचय
1.4 वर्षप्रवेश साधन
1.5 सारांशः
1.6 पारिभाषिक शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष के प्रथम पत्र वर्षफल विचार के प्रथम इकाई **'वर्षप्रवेश साधन'** से सम्बन्धित है। वर्ष प्रवेश साधन ताजिक शास्त्र से जुड़ा एक भाग है। इससे पूर्व में आपने ज्योतिष के स्कन्धत्रय में गणित एवं होरा स्कन्धों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

किसी वर्ष का प्रवेश किस कालखण्ड में हुआ है ? इसका ज्ञान जिस क्रिया के अन्तर्गत हम करते है, **उसे वर्षप्रवेश** कहा जाता है। वर्ष प्रवेश साधन का गणितीय विधान ताजिक ग्रन्थों में उद्धृत है। ताजिक ग्रन्थ मूल रूप से यवनों का माना जाता है।

इस इकाई में आप वर्षप्रवेश से जुड़े समस्त विषयों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. वर्षप्रवेश क्या है।
2. वर्षप्रवेश का साधन कैसे होता है।
3. वर्षप्रवेश का क्या महत्व है।
4. वर्षप्रवेश साधन के अन्तर्गत कौन – कौन से तत्व आवश्यक है।
5. वर्षप्रवेश का प्रयोजन क्या है।

1.3 वर्ष प्रवेश परिचय

वर्षस्य प्रवेशं वर्षप्रवेशम्। सामान्यतया किसी वर्ष का प्रवेश जिस कालखण्ड में होता है, उस कालखण्ड में उस वर्ष का वर्षप्रवेश माना जाता है। ताजिक ग्रन्थों में इसका निरूपण विस्तारपूर्वक किया गया है। आचार्य **नीलकण्ठ दैवज्ञ** स्वग्रन्थ **'ताजिकनीलकण्ठी'** में लिखते है कि –

गता: समा: पादयुता: प्रकृतिघ्नसमागणात्।
खवेदाप्त घटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुक्ता:।
अब्दप्रवेशे वारादि सप्तष्टेऽत्र निर्दिशेत्॥

अर्थात् गतवर्ष संख्या में उसी के चतुर्थांश जोड़ दे उसमें फिर गत वर्ष संख्या को 1 से गुना करके 40 का भाग देकर लब्ध घटी आदि जोड़ देना फिर उसमें जन्म के वारादिक जोड़कर जो हो उसमें 7 का भाग देकर शेष वर्षप्रवेश के वारादिक समझना चाहिये। वर्षप्रवेश ज्ञान के पूर्व पाठकों को राशि, नक्षत्र, गोल, भौगोलिक स्थिति, ग्रहों की प्रकृति, राशियों प्रकृति, इष्टकाल ज्ञान, ज्योतिष शास्त्र के

स्कन्धत्रय का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। इन विषयों के ज्ञानाभाव में आप वर्षप्रवेश को ठीक – ठीक नहीं समझ पायेंगे।

1.4 वर्षप्रवेश साधन

शुभसम्वत् – 2070, चैत्रशुक्लपक्ष, प्रतिपदा तिथि, सोमवार, इष्टकाल 44। 35, स्पष्टसूर्यः - 11। 12। 22। 17, दिनमानम् – 30। 18, भयातम् - 34। 39, भभोगः - 67। 23, रेवती 48। 53, ऐन्द्र योग - 42। 52, वृश्चिक लग्नम् – 29। 35।

विशेष – इष्टशाके में जन्मकालिक शाके, अथवा इष्ट संवत् जन्मकालिक संवत् घटाने से गतवर्ष की संख्या होती है। वर्ष की गणना सौर प्रमाण से होती है। इसलिए सौरमास से जब वर्ष पूरा होता है तभी अग्रिम वर्ष का प्रवेश होता है। अतएव जन्मकालिक स्पष्टसूर्य के राश्यादि समान जिस समय स्प्ष्ट सूर्य के राश्यादि हो वही वास्तविक वर्षप्रवेश का समय होता है। अतः एक वर्ष में सावन दिनादि संख्या (३६५।१५।३१।३०) ७ से तष्टित करने पर (१।१५।३१।३०) एक वर्ष की दिनादिक ध्रुवा है। इस ध्रुवा को गतवर्ष संख्या से गुनाकर उसमें जन्म वारादिक जोड़कर ७ से तष्टित करने से वर्षप्रवेश का वारादि होता है।

तत्सम्बन्धी दोहा –

वर्ष सवाया वार, पुनि घटी वर्ष के आध ।
डयोढ़ा सम पल जोड़ी कर, वर्ष ध्रुवा लो साथ॥
जन्म दिनादिक जोड़ी पुनि, नगतष्टित करि शेष।
वार – घटी पल में सदा, जानो वर्ष प्रवेश॥

इसी आशय का संस्कृत पद्य –

सस्वांघ्रयब्दसमो वारस्तथाब्दार्धसमा घटी सस्वकार्धाब्दतुल्यानि पलान्येतद्युतिर्ध्रुवः।
जन्मवारादिसंयुक्तो ध्रुवस्सप्तविभाजितः शेषतुल्ये विजानीयाद् दिनाद्येऽब्दप्रवेशनम्॥

अर्थ – गत वर्ष की संख्या जितनी हो उसको सवाया करके दिनादिक वर्ष संख्या को आधा कर घटयादि और उसी संख्या को डयोढ़ा कर पलादिक होता है। इन सभी को जोड़कर गत वर्ष की ध्रुवा होती है, उसमें जन्मवारादिक जोड़कर 7 का भाग देने से वर्ष प्रवेश का वारादिक होता है।

उदाहरण –

उपरिलिखित श्लोक के अनुसार यहॉं वर्षप्रवेश साधन सोदाहरण बताया जा रहा है –

माना कि गत वर्ष – 36

इसी का आधार पर उनका सवाया, आधा और डयोढ़ा

गतवर्ष 36 का सवाया दिन – 45 । 00 । 00

गतवर्ष 36 का आधा घटी - 00 । 18 । 00

गतवर्ष 36 का डयोढ़ा पल - 00 । 00 । 54

जोड़ने से गतवर्ष का ध्रवादिदिनादि- 45 । 18 । 54

जन्मेष्टकाल दिनादि - 1 । 44 । 35

योग करने पर = 47 । 3 । 29

दिन के स्थान में 7 का भाग देने से शेष = 5। 3 । 29 वर्षप्रवेश का दिनादि पूर्वतुल्य ही हुआ।

वर्षप्रवेशकालिक तिथिसाधन –

शिवघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढयः खाग्निशेषतः।

जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथावब्दप्रवेशनम्॥

अर्थ – गतवर्ष को 11 से गुणा कर गुणनफल में अपना 170 वॉं भाग जोड़कर उसमें जन्मकालिक तिथिसंख्या मिलाकर 30 का भाग देने से जो शेष बचे उस तिथि में वर्षप्रवेश होगा।

विशेष – इस प्रकार तिथि के आनयन में कदाचित् 1 तिथि का अन्तर भी हो सकता है, इसीलिये 1 तिथि आगे अथवा पीछे वर्षप्रवेश दिन में जो तिथि हो वही ग्रहण करनी चाहिये, क्योंकि वर्षप्रवेश का दिन वास्तव ही आता है।

उदाहरण –

गतवर्ष 36 को 11 से गुनाकर 396 इसमें इसी का 170 वॉं भाग लब्धि 3 जोड़ने से 398 इसमें जन्मतिथि (कृष्णपक्ष की दशमी की संख्या) 25 जोड़ने से 423 इसमें 30 का भाग देकर शेष 3 शुक्लपक्ष की तृतीया हुई। परं च पंचांग में देखने से तृतीया बुधवार को है और वारानयन विधि से गुरूवार आया है उक्त दिन चतुर्थी है, अत: वर्षप्रवेश की तिथि चतुर्थी ही सिद्ध हुई।

उपपत्ति –

एक सौर वर्ष में तिथिप्रमाण 371।3।52।30 त्रिंशतातष्टिम् 11 । 3 । 52 । 30 अनुपातेन गतसौरवर्ष तिथ्यादिकम् –

गतवर्ष - 11 । 3 । 52 । 30

गतवर्ष – 11 । 3 । 53 = गतवर्ष 11 + 3 + 53 / 60 = 11 + 233 / 60

गतवर्ष - (11 + 233 / 60 × 60) = (11 + 11 / 170) स्वल्पान्तर से। शुक्लप्रतिपदादि से गणना कर तिथि जानना चाहिये।

इस प्रकार वर्षप्रवेशकालिक तिथि का आनयन करना चाहिये।

प्रसंगवश जन्मनक्षत्र और योग पर से वर्ष का नक्षत्र और योग का ज्ञान –

अब्दो दसगुणो हीन: खवेदाश्विलवैर्निजै: ।

द्विधा जन्मभयोगाढयो भतष्टोऽब्दे भयोगकौ ।।

गतवर्ष संख्या को 10 से गुणा कर उसमें अपना 240 वॉ भाग घटा कर फिर उसे दो स्थान में रखकर एक स्थान में जन्मनक्षत्र, दूसरे स्थान में जन्मयोग की संख्या जोड़कर पृथक् – पृथक् 27 का भाग देकर जो शेष बचे वह वर्षप्रवेश का नक्षत्र तथा योग होता है। कदाचित् 1 अन्तर भी होता है।

उदाहरण – गतवर्ष 36 को 10 से गुनाकर 360 इसमें नक्षत्र की संख्या 20 मिलाकर 380 हुआ इसमें 27 से भाग देकर शेष 2 वर्षप्रवेश कालिक भरणी नक्षत्र हुआ।

पुन: उसी दशगुणित वर्ष संख्या 360 में जन्मकाकि योग की संख्या 19 जोड़कर 27 का भाग देने से 1 वर्षप्रवेश दिन का विष्कम्भ योग हुआ।

जन्मलग्न से वर्षप्रवेशकालिक लग्न का ज्ञान –

खरामनन्दघ्नगताब्दवृन्दात् त्रिघ्नाब्दवस्वंशयुतात् त्रिंशत्या।

अवाप्तराश्यादियुतं स्वजन्मलग्नं भवेदब्दविबेशलग्नम् ।।

गतवर्ष संख्या को 930 से गुणा कर उसमें त्रिगुणित गतवर्ष के अष्टमांश जोड़कर 300 का भाग देकर लब्धराश्यादि को जन्मलग्न में जोड़ने से वर्षकालिकलग्न हो जाता है। यदि जोड़ने से संख्या 12 से अधिक हो तो उसे 12 से तष्टित कर लेना चाहिये।

उदाहरण – गतवर्ष संख्या 36 को 930 से गुणा कर 33480 इसमें त्रिगुणित गतवर्ष 108 के अष्टमांश 13। 30 मिलाकर 33493। 30 में 300 के भाग देकर राश्यादि 111। 19। 21। 00 में जन्मलग्न संख्या 8 जोड़कर 119। 19। 21 । 00 इसे 12 से तष्टित करने पर 11। 19। 21। 00 वर्षकालिक लग्न हुआ। परं च स्पष्टलग्नानयन रीति से मेषलग्न आता है। इससे स्पष्ट है कि जन्मकालिक नक्षत्र, योग और लग्न से वर्षकालिक नक्षत्र, योग और लग्न में तिथि के समान ही 1 ही अन्तर होता है। इसीलिये सूक्ष्म प्रकार से ही लग्न आदि बनाकर फल कहना चाहिये।

तात्कालिकस्पष्ट ग्रहसाधन –

गतैष्यदिवसाद्येन गतिर्निघ्नी खषड्हृता।

लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद् ग्रह: ।।

अर्थ - गत दिनादि तथा एष्य दिनादि से ग्रहों की गति कला विकला को गुनाकर 60 का भाग देने से लब्धि अंशादि को पंक्तिस्थ ग्रहों में क्रम से ऋण चालन में घटाने और धन चालन में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह होता है।

विशेष – पंचांग में जिस समय का स्पष्टग्रह बना रहता है वह **पंक्तिकाल** कहलाता है। यदि पंक्तिकाल ही इष्टकाल भी हो तो वे ही ग्रह इष्टकाल के भी होते है। यदि पंक्तिकाल से इष्टकाल आगे हो तो इष्टकाल के दिनादि में पंक्ति के दिनादि को घटाकर शेष ऐष्य दिनादि (धन चालन) कहलाता है। यदि पंक्तिकाल से पहले ही इष्टकाल हो तो पंक्ति दिनादि में इष्टदिनादि घटाने से शेष गत दिनादि (ऋण चालन) कहलाता है।

उदाहरण –

कल्पना किया कि - चैत्रशुक्ल चतुर्थी गुरूवार इष्ट घटी 3। 29 है और चैत्रशुक्ल तृतीया बुधवार की पंक्ति घटी 45। 7 है। यहॉ पंक्ति से इष्टकाल आगे है। अत: इष्ट के दिनादि 5। 3। 29 में पंक्ति के दिनादि 4। 45। 7 को घटाने से 0। 18। 22 यह धन चालन एष्यदिनादि हुआ। अब एष्य दिनादि 0। 8। 22 से सूर्य की गति कला विकला 59। 26 को गुणाकर गोमूत्रिका क्रम से अर्थात् विकलात्मक खण्ड से गुने हुये फल को एक स्थान आगे बढ़ाते हुये रखकर योग करने से 0। 1062। 1766। 572, इसको 60 से सवर्ण करने पर कलादि 18। 11 इसमें 60 का भाग देने से अंशादि 0। 18। 11 इसको धन चालन होने के कारण पंक्तिस्थ सूर्य के अंशादि में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट सूर्य 11। 12। 22। 17 हुआ, इसी प्रकार मंगलादि ग्रहों की गति कला को चालन से गुनाकर जोड़ने से स्पष्ट होते है।

अभ्यास प्रश्न

1.पादयुता: का अर्थ है –

क. प्रथमांश ख. चतुर्थांश ग. षष्ठांश घ. नवमांश

2. 'खेवदा' से तात्पर्य है -

क. 50 ख. 60 ग. 40 घ. 30

3. वर्षस्य प्रवेशं .....।

क. वर्षम् ख. वर्षप्रवेशम् ग. दोनों घ. कोई नहीं

4. शिव शब्द से ग्रहण करते है –

क. 12 ख. 13 ग. 11 घ. 14

5. पंचांग में जिस समय का स्पष्टग्रह बना रहता है वह ..... कहलाता है –

क. चालन ख. पंक्तिकाल ग. स्पष्टग्रह घ. कोई नहीं

6. चालन होता है -

क. धनात्मक ख. ऋणात्मक ग. दोनों घ. कोई नहीं

भयात भभोग ज्ञान –

गतर्क्षनाड़ी खरसेषु शुद्धा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता।

भयात संज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाड़ी सहितो भभोग: ।।

अर्थ – जिस दिन का भयात साधन करना हो, उसके गत दिन के जो नक्षत्र के घटी पल का मान हो, उसको साठ में से घटावें। क्योंकि गत दिन के उदय से वर्तमान दिन के उदय तक साठ में घटावें , क्योंकि गत दिन के उदय से वर्तमान दिन के उदय तक साठ घटी है उसमें गत दिन के नक्षत्र को घटाने पर जो शेष रहा, वह गत दिन में वर्तमान नक्षत्र ही गत खण्ड हुआ। उसको वर्तमान दिन के सूर्योदय से जो इष्ट घटी हो, उसमे जोड़ दिया तो , वर्तमान नक्षत्र का प्रारम्भ से इष्ट काल पर्यन्त खण्ड हुआ, इसको भयात कहते है। और गत दिन के जो गत खण्ड, उसमें वर्तमान दिन के नक्षत्र का जो घटी पल मान हो उसको जोड़ने पर भभोग होगा। अर्थात गत नक्षत्रान्त से वर्तमान नक्षत्रान्त पर्यन्त बन गया, पूरा नक्षत्र का मान हो गया इसीलिये इसका नाम भभोग हुआ।

वर्षप्रवेश का आधार –

वर्षप्रवेश का आधार सदैव और एकमात्र रूप से जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य ही होता है। अर्थात् जन्म समय में सूर्य के स्पष्ट राशि, अंश, कला, विकला जितनी थीं, ठीक उतनी ही जब पुन: होती हैं वही समय वास्तविक वर्ष प्रवेश का होता है।

सूर्य सिद्धान्तानुसार सूर्य एक स्थान से चलकर उसी स्थान पर लौटने में 365 दिन, 15 घटी 31 पल लगाता है। लेकिन अब आधुनिक वेध यन्त्रों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि इस क्रिया में वास्तव में सूर्यसिद्धान्त के काल से साढ़े आठ पल के लगभग या पौने चार मिनट प्राय: कम लगते हैं। अत: अब वेधसिद्ध आधुनिक वर्षमान 365 दिन 6 घंटे , 9 मिनट 9 सेकेंड के लगभग है। इसी वर्षमान के द्वारा वर्ष प्रवेश लग्न का साधन करना चाहिये। कारण यह है कि यदि आज भी पुराने वेध से असिद्ध वर्षमान को मानकर 38 वर्ष के व्यक्ति के की वर्ष कुण्डली बनाएंगे तो प्रतिवर्ष 3.5 मिनट के हिसाब से 38 वर्ष × 3.5 = 133 मिनट या 2 घंटे 13 मिनट का अन्तर पड़ जाएगा। यदि औसत मान से एक लग्न का उदय काल समान 2 घंटे भी मान लें तो लग्न में महान अन्तर उपस्थित हो जाएगा। आजकल सभी मान्यता प्राप्त पंचांगकारों व विद्वान ज्योतिषियों ने आधुनिक विधि से ही वर्ष साधन का समर्थनकिया है।

वर्ष प्रवेश का समय साधन –

जिस वर्ष का प्रवेश समय जानना हो, उस वर्ष, संवत् शक या ईसवी सन् में से अपने जन्म संवत् शक या ईसवी सन् को घटाएँ। शेष गत वर्ष होंगे। अर्थात् उतने आयु वर्ष सम्बन्धित व्यक्ति के बीत चुके हैं तथा उससे अग्रिम वर्ष प्रारम्भ होगा।

उदाहरणार्थ – जब किसी का जन्म ईसवी सन् जनवरी 2005 में हुआ तो जनवरी 2014 में उसके 2014 – 2005 = 09 वर्ष बीत चुकेंगे तथा 10 वॉ वर्ष प्रारम्भ होगा। ईसवी सन् से गणना करने पर

विशेष सुविधा होगी। इसी प्रकार साधित गत वर्ष से आगे सारी क्रिया की जायेगी।

सौर वर्ष में 365 दिन 15 घड़ी 31 पल 30 विपल होते हैं। ये दिन सावन मान से बताए गए हैं। दो सूर्योदय के बीच का समय सावन दिन कहलाता है, यह बात स्पष्ट है। अथवा 365 दिन 6 घंटे, 12 मिनट 36 सेकेण्ड पुराने मान से है।

यदि 365 दिन को 7 से भाग दें तो शेष 1 बचता है। अत: 1 दिन 15 घड़ी 32 पल 30 विपल का अन्तर प्रतिवर्ष पड़ता है। इसीलिए गत वर्ष संख्या को यदि उक्त अन्तरित समय से गुणा कर, गुणनफल को जन्मकालीन वार व इष्ट में जोड़ दिया जाए तो वर्तमान वर्ष का प्रवेश समय ज्ञात हो जाता है। यह विधि सूर्यसिद्धान्त के स्थूल वर्षमान पर आधारित है। इसी आधार पर ताजिक नीलकण्ठी का गता: समा:पादयुता: प्रकृतिघ्न समागणात् इत्यादि श्लोक की या पण्डित लोगों में प्रसिद्ध उक्ति वार सवाए घटिका आधी पल ड्योढ़े कर लेय, आदि उपपत्ति सूर्यसिद्धान्त के उक्त स्थूल वर्षमान से ही सिद्ध होती है। इस पद्धति से कितनी स्थूलता रह जाती है, इस विषय में पहले ही कहा जा चुका है। तब लग्न में अन्तर सम्भावित है।

वास्तव में वर्षप्रवेश का नियामक सूर्यस्पष्ट ही है, तथा वार से सर्वथा निर्णय हो जाता है। अत: वर्ष प्रवेश की चान्द्रतिथि आदि का साधन व्यर्थ का वितण्डा ही हैं। ताजिक नीलकण्ठी के सुप्रसिद्धव सर्वमान्य टीकाकार विश्वनाथ दैवज्ञ कहते हैं -

तत्काले वर्षप्रवेशसमये करणोक्तरीत्या साधित: सूर्यो जन्मकालीन रविणा समस्तुल्यो राश्यंशकलाविकलात्मको भवति, इदमेव वर्षप्रवेशसमये प्रमाणाम्॥

अत: जिस दिन व समय में जन्मकालीन सूर्यस्पष्ट सर्वथा तुल्य हो जाए, वहीं वर्षप्रवेश है। तिथि साधन की व्यर्थता को उन्होंने बड़े शब्दों में प्रतिपादित किया है –

अस्यां तिथौ वर्षप्रवेशो भवतीति नियमो नास्ति, कदाचित्पूर्वतिथौ कदाचिदग्रिमतिथौ च भवत्यत्र वारस्यैव प्रामाण्यम्। तिथित्रयस्य मध्ये यस्मिंस्तिथौ पूर्वानीतवारो भवति सा एव वर्षप्रवेशे तिथिर्ज्ञातव्या॥

इस प्रकार पूर्वप्राप्त वार, घंटा मिनट के आधार पर जातक के वर्तमान नगर के सूर्योदय से इष्टकाल बनाकर या साम्पातिक काल साधन कर जन्म लग्न साधन की तरह वर्ष प्रवेशकालीन लग्न, ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, भावचलित व नवांशादि आवश्यक वर्गों का साधन कर लेना चाहिये। इनकी विधि बिल्कुल जन्म लग्नवत् ही है।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि - वर्षस्य प्रवेशं वर्षप्रवेशम्। सामान्यतया किसी वर्ष का प्रवेश जिस कालखण्ड में होता है, उस कालखण्ड में उस वर्ष का वर्षप्रवेश माना जाता है। ताजिक ग्रन्थों में इसका निरूपण विस्तारपूर्वक किया गया है। वर्षप्रवेश का आधार सदैव और एकमात्र रूप से जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य ही होता है। अर्थात् जन्म समय में सूर्य

के स्पष्ट राशि, अंश, कला, विकला जितनी थीं, ठीक उतनी ही जब पुन: होती हैं वही समय वास्तविक वर्ष प्रवेश का होता है। ताजिकोक्त वर्षप्रवेश का ज्ञान पाठकगण इस इकाई में सम्यक्तया प्राप्त करेगें।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

वर्षस्य – वर्ष का

कालखण्ड – काल का एक निश्चित हिस्सा

ताजिकनीलकण्ठी – ताजिक ग्रन्थ (ज्योतिष का)

पाद – चतुर्थांश

प्रकृति – 1

अब्द – वर्ष

स्कन्धत्रय – सिद्धान्त, संहिता एवं होरा

जन्मकालिक - जन्म के समय का

खाग्नि – 30

खवेद – 40

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ग
3. ख
4. ग
5. ख
6. ग

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वर्षप्रवेश से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. वर्षप्रवेश का साधन कीजिये।
3. वर्षप्रवेश के आधार का स्पष्टीकरण देते हुये कल्पित साधन कीजिये।
4. भयात एवं भभोग का साधन कीजिये।
5. तात्कालिक स्पष्ट ग्रह साधन कीजिये।

इकाई – 2 भावस्पष्ट एवं चलित चक्र

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भावस्पष्ट

बोध प्रश्न

2.4 चलितचक्र

2.5 सारांशः

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष के प्रथम पत्र वर्षफल विचार के द्वितीय इकाई **'भावस्पष्ट एवं चलित चक्र'** से सम्बन्धित है। भाव स्पष्ट से तात्पर्य द्वादशभाव से है। भाव स्पष्ट के अन्तर्गत चलित ग्रहों का भी अध्ययन किया जाता है।

भावों की संख्या द्वादश है तथा चलित का अर्थ होता है – चलायमान। ताजिक शास्त्र में भावस्पष्ट एवं चलित ज्ञान का विवेचन किया गया है।

द्वादश भावों का स्पष्टीकरण के साथ चलायमान ग्रहों का अध्ययन प्रस्तुत इकाई में पाठकगण करने जा रहे है। तत् सम्बन्धित ज्ञान प्रस्तुत इकाई में आपके समक्ष प्रस्तुत है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. भावस्पष्ट से क्या तात्पर्य है।
2. द्वादश भाव क्या है।
3. चलित चक्र का क्या अर्थ है ।
4. चलित चक्र का निर्माण कैसे करते है ।
5. भावों में ग्रहों का स्पष्टीकरण किस प्रकार किया जाता है।

2.3 भावस्पष्ट

जन्मकुण्डली में बनने वाले कोष्ठकों को 'भाव' कहा जाता है। कुण्डली में बारह कोष्ठक अर्थात् भाव होते हैं। इन कोष्ठकों को भाव, भवन, स्थान तो कहते ही हैं, साथ ही इनसे विचार करने वाले विषयों के नाम पर भी इनका नामकरण कर दिया जाता है। जैसे प्रथम भाव को लग्न, तनु, उदय या जन्म, द्वित्तीय भाव को धन, कुटुम्ब या कोश, तीसरे भाव को सहज, पराक्रम,चतुर्थ भाव को सुख, पंचम भाव को विद्या या सुत भाव, षष्ठ भाव को रिपु या ऋण भाव, सप्तम भाव को जाया, अष्टम भाव को मृत्यु , नवम भाव को भाग्य , दशम भाव को कर्म भाव , एकादश भाव में आय भाव, द्वादश भाव को व्यय भाव आदि भी कहते हैं।

प्रथम भाव से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त द्वादश भाव होते है। भाव के अधिपति ग्रह को भावेश कहते हैं। जब हम आयेश कहेंगे तो ग्यारहवें स्थान पर जो राशि है।

उसका स्वामी आयेश होगा। मान लें कि ग्यारहवें स्थान पर सिंह राशि का अधिपति सूर्य है तो यहाँ आयेश का अर्थ सूर्य होगा।

ससन्धि द्वादश भाव –

सषडभे लग्नखे जायातुर्यौ लग्नोनतुर्यतः।
षष्ठांशयुक्तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात्॥
त्रयः ससन्धयो भावा षष्ठांशोनैकयुक्सुखात्।
अग्रे त्रयः षडेवं ते भार्धयुक्ताः परेऽपि षट॥
खेटे भावसमे पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम्॥

अन्वयः - प्रथमलग्न = दशमलग्ने , सषट्भे = षड्राशियुक्ते, तदा जायातुर्यौ = सप्तमचतुर्थभावौ भवतः। (अर्थात् लग्नं षड्राशियुक्तं सप्तमभावः। दशमलग्नं षड्राशियुक्तं तदा चतुर्थभावो भवति।) लग्नोनतुर्यतः = प्रथमलग्नहीनचतुर्थभावात्, षष्टांशयुक् तनुः = लग्नशोधितचतुर्थभावस्य षष्ठांशेन युक्तं लग्नं , तनुः सन्धि = लग्नसन्धिः स्यात् । ततोऽग्रे षष्ठांशयोजनात् ससन्धयः त्रयः = ससन्धिधनसहजसुखभावाः स्युः । अर्थात् लग्ने षष्ठांशयोजननेन लग्नसन्धिः । लग्नसन्धौ षष्ठांशयोजनेन धनभावः। धनभावे तत्षष्ठांशयोजनेन धनसन्धिः। धनसन्धौ तत्षष्ठांशयोजननेन सहजभावः। सहजे षष्ठांशयोजननेन सहजसन्धिः। सहजसन्धौ षष्ठांशयोजनेन सुखभावः ।इति। अथ पंचमादिभावसाधनमुच्यते – षष्ठांशोनैकयुक्सुखात् = षष्ठांश एकराशौ विशोध्यः , शेषं यत्तेन युक् = युक्तं, सुखं = चतुर्थभावो यो भवति तस्मात् , अग्रे = चतुर्थभावात्परे , त्रयः = चतुर्थपंचमषष्ठभावाः भवन्ति। एवं लग्नात् षड्भावाः सिद्धयन्ति। ते = षट् लग्नादिषष्टान्तभावाः , भार्धयुक्ताः = षड्राशियुक्ताः, तदा परे = सप्तमादिद्वादशान्ताः , अपि षट् भावा जाताः । भावसमे = ग्रहे, पूर्ण जातकताजिकोक्तफलं समग्रं भवति । सन्धिसमे खेटे खं = शून्यं फलं भवतीति।

अर्थ – लग्न में छः राशि जोड़ने से सप्तमभाव होता है। दशम लग्न में छः राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव होता है। अब चतुर्थ भाव में लग्न को घटाकर शेष का षष्ठांश बनाना, उसको लग्न में जोड़ने से लग्न की सन्धि हुई। उसमें फिर षष्ठांश जोड़ने से धन भाव, धन भाव में वही षष्ठांश जोड़ने से धन की सन्धि बनी, फिर उसमें षष्ठांश जोड़ने से सहज भाव बना, फिर उसमें षष्ठांश जोड़ने से सहजसन्धि होगी। फिर षष्ठांश जोड़ने से चतुर्थ भाव हुआ। तनु , धन , सहज ये तीन भाव हुये। चतुर्थ भाव तो ज्ञात ही है।

अब उसी षष्ठांश को एक राशि में घटाकर शेष को चतुर्थभाव में जोड़ा, तो चतुर्थ भाव की सन्धि हुई, फिर उसमें वही शेष को जोड़ा तो पंचम भाव हुआ। फिर उसमें वही शेष को जोड़ा पंचम भाव की सन्धि हुई। फिर उसमें शेष को जोड़ा तो षष्ठभाव हुआ। फिर उसमें वही शेष को जोड़ा, तो षष्ठभाव की सन्धि हुई। षष्ठभाव की सन्धि में उसी को जोड़ा तो सप्तम भाव बना, यहॉ सप्तम तो ज्ञात ही था, इसलिये ये 5।6।7 तीन भाव बने। यहॉ यदि शेष जोड़ने से सप्तम भाव, पूर्वसिद्ध सप्तम के तुल्य हुआ तो ठीक हैं, नहीं तो अशुद्ध समझना चाहिये। तब पुनः जोड़ना चाहिये।

इस प्रकार ये छः भाव में छः - छः राशि जोड़ने से शेष छः जाया मृत्यु धर्म कर्म आय व्यय ये भाव हो जायेंगे।

उदाहरण –

प्रथमलग्न - 3।27।7।4 इसमें छ: राशि जोड़ा, तो सप्तम भाव 9।27।7।4 हुआ और दशम लग्न 0।24।42।11 में छ: राशि जोड़ा तो चतुर्थ भाव 6।24 ।42।11 हुआ। अब –

3।27।7।4 इस प्रथम लग्न को चतुर्थभाव 6।24।42।11 में घटाया तो शेष बचा 2।27।35।7 इसका

षष्ठांश	0।14।35।51 शेष 1 रहा,
लग्न	3।27। 7 । 4
जोड़ने से लग्न सन्धि	4।11।42।55
फिर षष्ठांशजोड़ने से धन भाव	4।26।18।46
एवं षष्ठांश जोड़ने से धन सन्धि	5।10।54।37
एवं षष्ठांश जोड़ने से सहज भाव	5।25।30।29

षष्ठांश का शेष में अर्धाधिक ग्रहण से फिर षष्ठांश जोड़ने से सहज सन्धि - 6।10।6।20

इसमें फिर षष्ठांश जोड़ने पर सुखभाव - 6।24।42।11

यहॉ यह जोड़ा हुआ चतुर्थभावगणितागत चतुर्थभाव से मिल गया, ठीक है । अब उस षष्ठांश0।14।35।51 को 30 अंश में घटाया शेष 0।15।24।9 यहॉ एक विकला का षडंश ऋण शेष है, अत: चतुर्थ स्थान में एक घट जायेगा। अर्धाधिक नियम से इस षष्ठांश को –

	00।15।24।9
	06।24।42।11
चतुर्थ भाव में जोड़ा, तो सुख भाव की सन्धि हुई	07।10।06।20
फिर उस शेष को जोड़नें से सुत भाव	07।25।30।28
फिर उस शेष को जोड़ने से सुत सन्धि	08।10।54।37
फिर उस शेष को जोड़ने पर रिपु भाव	08।26।18।46
पुन: उस शेष को जोड़ने पर रिपु सन्धि	09।11।42।55
फिर उस शेष को जोड़ने पर जाया भाव	09।27।7।4

यह सषडभ लग्न के समान हो गया, इसलिये गणित ठीक है। अब इन छ: ससन्धि भावों में छ: छ: जोड़ने पर शेष छ: भाव हो जायेंगे।

निम्नलिखित चक्र में आप अवलोकन कर ससन्धि द्वादश भाव के गणितीय पक्ष को समझ सकते है।

तनु	३	२७	७	४	सन्धि	४	११	४२	५५
धन	४	२६	१८	४६	सन्धि	५	१०	५४	३७
सहज	५	२५	३०	२९	सन्धि	६	१०	६	२०
सुख	६	२४	४२	११	सन्धि	७	१०	६	२०
सुत	७	२५	३०	२८	सन्धि	८	१०	५४	३७
रिपु	८	२६	१८	४६	सन्धि	९	११	४२	५५
जाया	९	२७	७	४	सन्धि	१०	११	४२	५५
मृत्यु	१०	२६	१८	४६	सन्धि	११	१०	५४	३७

धर्म	११	२५	३०	२९	सन्धि	००	१०	६	२०
कर्म	००	२४	४२	११	सन्धि	१	१०	६	२०
आय	०१	२५	३०	२८	सन्धि	२	१०	५४	३७
व्यय	०२	२६	१८	४६	सन्धि	३	११	४२	५५

अथ भावकुण्डली चक्रम् –

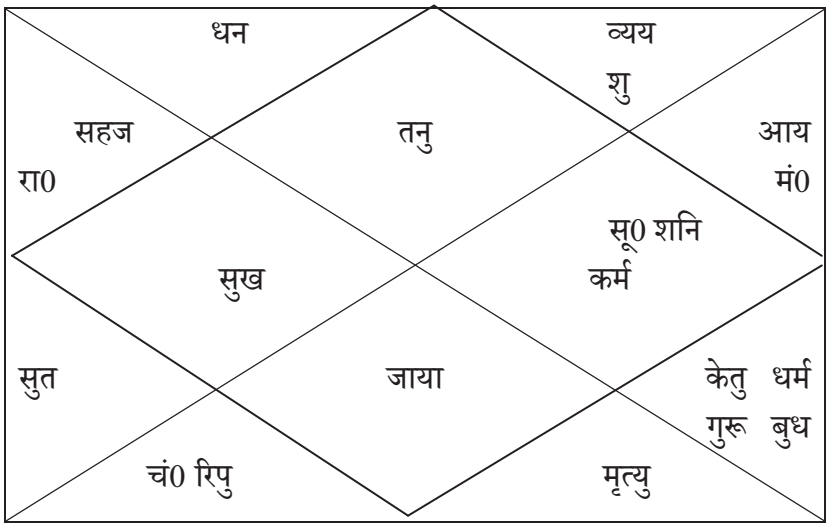

भाव कुण्डली में ग्रहनिवेश विचार पहले कुण्डली लिखकर उसमें तनु, धन, सहज,सुख, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय एवं व्यय ये द्वादश भावों के नाम लिखकर विचारना कि कौन ग्रह किस खाने में होगा ? -

यथा सूर्य ००।१२।५७।५० , तो देखिये धर्म भाव की सन्धि ००।१०।६।२० इससे सूर्य अधिक है, और कर्म भाव ००।२४।४२।११ से न्यून है, इसलिये कर्म भाव ही पड़ा । चन्द्रमा ८।५।३९।३३ है यहॉ यह सुत भाव से अधिक , सुतसन्धि से न्यून है इसलिये सुतसन्धि में पड़ा।

अथ मंगल १।२२।१३।५३ है, यह भावचक्र देखने से कर्मसन्धि से आगे आय भाव के अन्दर पड़ा, इसलिये आय भाव में मंगल हुआ।

बुध ११।२३।५९।०९ है, यह मृत्यु के सन्धि से आगे और धर्म भाव के अन्दर पडा इसलिये धर्म भाव में बुध हुआ।

एवं गुरू ००।०२।४९।८ यह धर्म भाव से अधिक, तथा उसकी सन्धि से न्यून है। इसलिये धर्म की सन्धि में पड़ा। शुक्र ०१।२८।१९।१७ है, यह आय भाव से अधिक, आय भाव की सन्धि से न्यून है। इसलिये आय की सन्धि में शुक्र पड़ा।

शनि ००।१०।५५।१३ है , यह धर्म की सन्धि से अधिक कर्म भाव से न्यून है। इसलिये कर्मभाव में पड़ा।

राहु ०६।००।५।५० है, यह सहज भाव से अधिक, उसकी सन्धि से न्यून है इसलिये सहज सन्धि में लिखा।

केतु ००।००।५।५० , यह धर्मभाव से अधिक , उसकी सन्धि से न्यून है, अत: सन्धि में पड़ा। मुथहा ८।५।३४।१२ है, यह सुत सन्धि में पड़ी।

बोध प्रश्न –

1. जन्मकुण्डली में बनने वाले कोष्ठकों को क्या कहा जाता है –
   क. कुण्डली ख. भाव ग. राशि घ. नक्षत्र
2. भावों की संख्या कितनी है –
   क. 12 ख. 14 ग. 16 घ. 18
3. जाया भाव किस भाव को कहते है –
   क. पंचम भाव ख. षष्ठ भाव ग. सप्तम भाव घ. अष्टम भाव
4. लग्न में छ: राशि जोड़ने पर होता है-
   क. पंचमभाव ख. सप्तम भाव ग. अष्टम भाव घ. नवम भाव
5. चलित से तात्पर्य है –
   क.चलना ख. ग्रहों का चलना ग. खिसकना घ. कोई नहीं
6. चलित कुण्डली को भी कहा जाता है –
   क. चल कुण्डली ख. भाव कुण्डली ग. नवमांश कुण्डली घ. द्रेष्काण कुण्डली
7. चलित कुण्डली के निर्माण का आधार है –
   क. भाव ख. द्वादश भाव ग. ससन्धिद्वादश भाव घ. कोई नहीं

अथ भावस्थग्रहफल-

खेटे सन्धिद्वयान्त:स्थे फलं तद्भावजं भवेत्।
हीनेऽधिके द्विसन्धिभ्यां भावे पूर्वापरे फलम्॥

अर्थ- आरम्भसन्धि और विराम सन्धि के बीच में ग्रह को रहने से उस भाव का फल देता है। यदि आरम्भ सन्धि से ग्रह कम हो तो पूर्वभाग का फल, या विराम सन्धि से अधिक ग्रह हो तो अगलेभाव में रहने का फल देता है।

उदाहरणार्थ यहॉ ससन्धि भावचक्र में सूर्य ००।१२।५७।५ है। यह आरम्भ सन्धि धर्मभाव की सन्धि ००।१०।१०।०० से अधिक है, और विराम सन्धि कर्मभाव की सन्धि १।१०।१०।०० से न्यून है इसलिये ठीक – ठीक कर्मभाव में रहने का जो फल है उसको देंगे। यहॉ शनि आय की सन्धि से न्यून है इसलिये आय भाव का फल देंगे, ऐसे ही बुध मृत्यु भाव के सन्धि से अधिक है, इसलिये धर्मभाव के फल देंगे ।

लग्न को चतुर्थ भाव में घटाने से जो शेषांक हो, उनमें छ: का भाग दे अर्थात् लग्न व चतुर्थ के अन्तर

का षष्ठांश ग्रहण करें। वह षष्ठांश राश्यादि लग्न में जोड़ दे तो लग्न की विराम संधि और धन भाव की आरंभ संधि होती है। उस संधि में षष्ठांश युक्त करने से धन भाव स्फुट होता है। धन भाव में षष्ठांश जोड़ देने से धन भाव की विराम संधि और तृतीय भाव की आरंभ संधि होती है। उस संधि में षष्ठांश युक्त करने पर तृतीय भाव होता है, फिर तृतीय भाव में षष्ठांश युक्त करने पर तृतीय भाव की विराम संधि और चतुर्थ भाव की आंरभ संधि होती है ओर तृतीय भाव संधि में एक जोड़ दे तो वह चतुर्थ भाव की विराम संधि होती है। तृतीय भाव में जोड़ देने से पंचम भाव स्फुट होता है। द्वितीय भाव की संधि में तीन जोड़नेसे पंचम भाव संधि होती है , धन भाव में चार युक्त करने से छठा भाग होता है। लग्न की संधि में पॉच युक्त करने पर रिपु भाव अर्थात् षष्ठ भाव की संधि होती है। संधि सहित लग्नादिक भावों में छः - छः राशि संयुक्त करने से सप्तम आदिक सब भाव सन्धि सहित होते है।

2.4 चलित चक्र परिचय -

ससन्धि द्वादश भावों के स्पष्ट राश्यादि व ग्रहों के स्पष्ट राश्यादि की तुलना करके **चलित** या भाव कुण्डली का निर्माण किया जाता है। लग्न कुण्डली या चन्द्र कुण्डली से हमें यह पता चलता है कि इष्ट समय में ग्रह किस राशि में स्थित है, जबकि चलित कुण्डली से शेष ग्रह की सम्यक् भाव स्थिति का ज्ञान होता है। चलित कहने का तात्पर्य यह है कि – इसमें ग्रहों की स्थिति चल, चलायमान होती है, खिसक सकती है , अत: चलित चक्र कहना सार्थक संज्ञा है।

भाव क्या है ? पूर्व के अध्याय में कहा जा चुका है कि किसी भाव की पिछली सन्धि के राश्यांशों से लेकर अगली सन्धि के राश्यांशों के भीतर यदि ग्रह स्पष्ट पड़ता हो तो उक्त ग्रह उसी भाव में माना जाता है । जब ग्रहस्पष्ट के राश्यादि सन्धि के राश्यादि के बराबर हो, विशेषतया अंश साम्य हों, कलाओं में समानता हो या न हो, तभी ग्रह सन्धि में माना जाएगा। जब ग्रहस्पष्ट आरम्भ सन्धि से कम हो तो पिछले भाव में तथा विराम सन्धि से अधिक हो तो अगले भाव में लिखा जायेगा।

चलित कुण्डली वास्तव में भाव कुण्डली है, अत: उसमें जन्म लग्नवत् राशि सूचक अंक लिखने के बजाए केवल एक, दो , तीन आदि भाव सूचक रोमन अंक या प्र0 द्वित0तृ आदि भाव सूचक आद्यक्षर लिखना ठीक अधिक रहेगा। ध्यान रखिये, भाव चलित केवल भाव स्थित मात्र का ही द्योतक है, न कि राशि स्थिति का यदि कोई ग्रह चलित में अगली या पिछली सन्धियों के आर – पार भी चला जाए तो उससे ग्रह की राशि स्थिति नहीं बदलती है। हमारे उदाहरण का **चलित चक्र निम्नांकित है –**

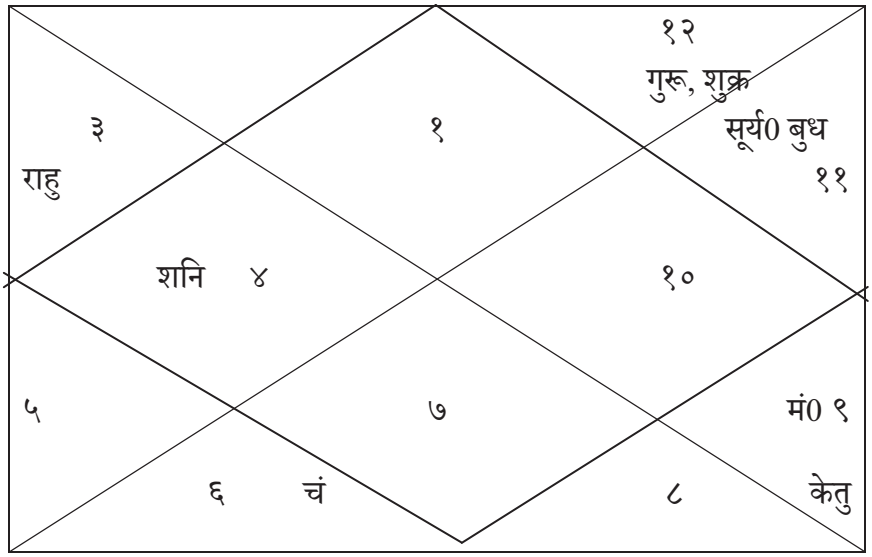

उदाहरणार्थ माना कि यदि सूर्यस्पष्ट 4।27^0।50 है। लग्न कुण्डली में वह ग्यारहवें भाव में है। अब भाव स्पष्ट चक्र में देखा कि एकादश भाव 3।28^0।58।40 से प्रारम्भ होकर 4।28^0।4।00 तक है। सूर्य स्पष्ट उक्त दोनों सन्धियों के मध्य होने से एकादश भाव में ही सूर्य दिखाया गया है इसी प्रकार सब ग्रहों को समझ लेना चाहिये।

भावफल विवेक के नियम –

भाव मध्य किसी भी भाव का शिखर है। उस पर बैठा हुआ ग्रह उस भाव का पूर्ण फल देता है तथा इधर – उधर रहने से उस भावफल में आनुपातिक कमी आ जाती है तथा इधर – उधर रहने से उस भावफल में आनुपातिक कमी आ जाती है। कहा गया है कि सन्धि पर पहुॅच कर ग्रह सर्वथा फलरहित हो जाता है।अर्थात् सन्धिगत ग्रह किसी भी भाव का फल नहीं देता है। इस बात को याद रखने के लिये निम्नलिखित श्लोक को जानना चाहिये –

ग्रहः सन्धिद्वयान्तः स्थः दिशेत्तद्भावजं फलम्।
भावांशतुल्ये सम्पूर्णं न्यूनाधिक्येऽनुपाततः ।।
आरम्भसन्धेः क्षीणांशः पूर्वभावे ग्रहो मतः ।
विरामादधिकांशस्तु प्रथतेऽग्रिमभावजम्।।
सन्धेस्तुल्यांशकः खेटः सदा सन्धिगतो भवेत्।
तुल्यत्वं राशिलवयोर्विचार्यं न कलात्मकम्।।
भावाधिपत्यं सर्वत्र भावमध्यानुसारतः।
विभेदत्वे सदा ज्ञेयं राशिचक्राद्यथाक्रमम्।।

भावचक्रे तु ज्ञातव्या खगानां भावसंस्थितिः ।
राशिस्थितिस्तु विज्ञेया जन्मलग्नप्रमाणतः ।।
भावानामाधिपत्यं सकलखगभावसंस्थितिं चापि ।
ज्ञात्वा विबुधैरेवं भावांगे फलं विनिर्दश्यम् ।।

ग्रह स्पष्ट चक्र लिखते समय यदि अवसर हो तो ग्रहों के नक्षत्र चरण भी लिख देना चाहिये, किन्तु ग्रहों की वक्री मार्गी स्थिति तथा उदयास्त अवश्य लिखना चाहिये ।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि कुण्डली में बारह कोष्ठक अर्थात् भाव होते हैं। इन कोष्ठकों को भाव, भवन, स्थान तो कहते ही हैं, साथ ही इनसे विचार करने वाले विषयों के नाम पर भी इनका नामकरण कर दिया जाता है। जैसे प्रथम भाव को लग्न, तनु, उदय या जन्म, द्वित्तीय भाव को धन, कुटुम्ब या कोश, तीसरे भाव को सहज, पराक्रम,चतुर्थ भाव को सुख, पंचम भाव को विद्या या सुत भाव, षष्ठ भाव को रिपु या ऋण भाव, सप्तम भाव को जाया, अष्टम भाव को मृत्यु , नवम भाव को भाग्य , दशम भाव को कर्म भाव , एकादश भाव में आय भाव, द्वादश भाव को व्यय भाव आदि भी कहते हैं।

प्रथम भाव से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त द्वादश भाव होते है । भाव के अधिपति ग्रह को भावेश कहते हैं। जब हम आयेश कहेंगे तो ग्यारहवें स्थान पर जो राशि है । ससन्धि द्वादश भावों के स्पष्ट राश्यादि व ग्रहों के स्पष्ट राश्यादि की तुलना करके **चलित** या भाव कुण्डली का निर्माण किया जाता है । आशा है कि पाठकगण इस इकाई के अध्ययन से भावस्पष्ट एवं चलित चक्र को समझ गये होंगे ।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

सप्तम – सातवॉ
अधिपति - मालिक
भावेश – भाव के स्वामी
आयेश – आय का स्वामी
षड्राशियुक्त - छः राशि युक्त
चलित - ग्रहों की स्थिति चल
राश्यंश – राशि का अंश
लग्नवत् - लग्न के समान
उर्ध्व - उपर
भावफल – भाव का फल
भावांश – भाव का अंश

खेट: - ग्रह

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ग
4. ख
5. ख
6. ख
7. ग

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार – डॉ0 सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भाव से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. द्वादश भाव स्पष्ट कीजिये।
3. भाव का साधन कीजिये।
4. चलित चक्र से क्या तात्पर्य है ? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये।

इकाई – 3 ग्रहस्पष्ट एवं मुन्था

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 ग्रहस्पष्ट

3.4 मुन्था

अभ्यास प्रश्न -

3.5 सारांशः

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष से सम्बन्धित है। इस इकाई का नाम '**ग्रहस्पष्ट एवं मुन्था**' है। सुविदितमेव सर्वेषां ज्योतिर्विदानां भकक्षायां ग्रहाणां स्पष्टीकरणं ग्रहस्पष्टम्। चालन आदि संस्कारों द्वारा ग्रहों की स्पष्टीकरण करने की प्रक्रिया का नाम 'ग्रहस्पष्ट' है।

ताजिकग्रन्थ में 'मुन्था' नाम से एक ग्रह होता है, जिसकी दैनिक गति 5 कला होती है। जन्म समय मुन्था सदैव जन्म लग्न में ही रहती है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने चलित चक्र एवं भावों का अध्ययन कर लिया है , इस इकाई में आप ग्रहस्पष्ट एवं मुन्था का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. ग्रह से क्या तात्पर्य है।
2. ग्रहस्पष्ट का साधन कैसे होता है ।
3. भकक्षा क्या होता है ।
4. ताजिकोक्त मुन्था क्या है ।
5. ताजिकोक्त मुन्था का साधन कैसे किया जाता है ।

3.3 ग्रहस्पष्ट

ग्रहों की मेषादि राशियों के सापेक्ष पृथ्वी की परिक्रमा को एक 'भगण' कहते हैं। सिद्धांतग्रथों में युग, या कल्पग्रहों, के मध्य भगण दिए रहते हैं। युग या कल्प के मध्य सावन दिनों की संख्या भी दी रहती है। यदि युग या कल्प के प्रारंभ में ग्रह मेषादि में हों तो बीच के दिन (अहर्गण) ज्ञात होने से मध्यम ग्रह को त्रैराशिक से निकाला जा सकता है। भगण की परिभाषा के अनुसार बुध और शुक्र की मध्यम गति सूर्य के समान ही मानी गई है। उनकी वास्तविक गति के तुल्य उनकी शीघ्रोच्च गति मानी गई है। ये ग्रह रेखादेश, अर्थात् उज्जयिनी, के याम्योत्तर के आते हैं, जिन्हें देशांतर तथा चर संस्कारों से अपने स्थान के मयम सूर्योदयासन्नकालिक बनाया जाता है।

मन्द स्पष्टग्रह -

स्पष्ट सूर्य और चंद्रमा की स्पष्ट गति जिस समय सबसे कम हो उस समय के स्पष्ट सूर्य और चंद्रमा का जितना भाग होगा उसे उनके मंदोच्च का भोग समझना चाहिए। स्पष्ट सूर्य - चंद्र और मध्यम सूर्य-चंद्र के अंतर को मंदफल कहते हैं। मंदोच्च से 180 की दूरी पर मंदनीच होता है। मंदोच्च से छह राशि तक स्पष्ट सूर्य चंद्र मध्यम सूर्य चंद्र से पीछे रहते हैं। इसलिये मंद फल ऋण होता है। मंदोच्च से

मध्यम ग्रह के अंतर की मंदकेंद्र संज्ञा है। मंदोच्च से 3 राशि के अंतर पर मंदफल परमार्धिक होता है। उसे मंदांत्य फल कहते हैं। मंदनीच से मंदोच्च तक स्पष्ट ग्रह मध्यम ग्रह से आगे रहता है, अत: मंदफल धन होता है। मंदस्पष्ट रवि चंद्र के मंदफल को ज्ञात करने के लिये दो प्रकार के क्षेत्रों की कल्पना है, जिन्हें भंगि कहते हैं। पहली का नाम प्रतिवृत्त भंगि है। भू को केंद्र मानकर एक त्रिज्या के व्यासार्ध से वृत्त खींचा, वह कक्षावृत्त हुआ। इसके ऊर्ध्वाधरव्यास पर मंद अत्यफल की ज्या के तुल्य काटकर उस केंद्र से एक त्रिज्या व्यास से वृत्त खींचा वह मंदप्रतिवृत्त होगा। मध्यम ग्रह को मंदप्रतिवृत्त में चलता कल्पित किया। यदि कक्षा वृत्त में भी मंदकेंद्र के तुल्य चाप काटें तो वहाँ कक्षावृत्त का मध्यम ग्रह होगा। भूकेंद्र से प्रतिवृत्त स्थित ग्रह तक खींची गई रेखा कक्षावृत्त में जहॉ लगे वह मंदस्पष्ट ग्रह होगा। कक्षावृत्त के मध्यम और मंदस्पष्ट ग्रह का अंतर मंदफल होगा। नीचोच्च भंगि के लिये कक्षावृत्त पर स्थित मध्यम ग्रह से मंदांत्यफलज्या तुल्य व्यासार्ध से एक वृत्त खींच लेते हैं, जिसे मंदपरिधि वृत्त कहते हैं। कक्षावृत्त के केंद्र से मध्यम ग्रह से जाती हुई रेखा जहाँ मंदपरिधिवृत्त में लगे उसे मंदोच्च मानकर, मंद परिधि में विपरीत दिशा में, केंद्र के तुल्य अंशों पर ग्रह की कल्पना की जाती है। ग्रह से भूकेंद्र को मिलानेवाली रेखा (मंदकर्ण) जिस स्थान पर कक्षावृत्त को काटे वहाँ मंदस्पष्ट ग्रह होगा। इस प्रकार मंदस्पष्ट किए गए सूर्य और चंद्र हमें उन स्थानों पर दिखलाई देते हैं, क्योंकि उनका भ्रमण हमें पृथ्वी केंद्र के सापेक्ष दिखलाई पड़ता है। शेष ग्रहों के लिये भी मंदफल निकालने की वैसी ही कल्पना है। उनका मंदोच्च स्पष्ट ग्रह से विलोमरीति द्वारा मंदस्पष्ट का ज्ञान करके ज्ञात करते हैं। ये मंदस्पष्ट ग्रह दृश्य नहीं होते, क्योंकि पृथ्वी उनके भ्रमण का केंद्र नहीं है। ऊपर के विवेचन से स्पष्ट है कि मंदस्पष्ट ग्रह अपनी कक्षा में घूमते ग्रह का भोग (longitude) होता है। अतएव भूदृश्य बनाने के लिये पाँच ग्रहों के लिये शीघ्र फल की कल्पना की गई है।

ग्रहस्पष्ट

मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, तथा शनि को स्पष्ट करने के लिये शीघ्रफल की कल्पना है। इसके लिये भी मंद प्रतिवृत्त तथा मंदनीचोच्च जैसी भंगियों की कल्पना की जाती है, जिसके लिये मंद के स्थान पर शीघ्र शब्द रख दिया जाता है। अंतर्ग्रहों के लिये वास्तविक मध्यमग्रहों को ही शीघ्रोच्च कहते हैं। उनके माध्य अधिकतम रविग्रहांतर कोण (maxium elongation) को परमशीघ्रफल, परमशीघ्रफल की ज्या को शीघ्रांत्य फलज्या कहते हैं। ग्रह (मध्यमरवि) और शीघ्रोच्च का अंतर शीघ्रकेंद्र होता है। इसमें मंदफल के लिये बनाई गई भंगियों की तरह भंगियाँ बनाकर शीघ्रफल निकाला जाता है। इस प्रकार के संस्कार से ग्रह का इष्ट रविग्रहांतर कोण करके ग्रह की स्थिति ज्ञात हो जाती है। बहिर्ग्रहों के लिये रविकेंद्रिक परमलंबन की परमशीघ्रफल तथा रवि को शीघ्रोच्च मानकर शीघ्रफल ज्ञात किया जाता है। शीघ्रफल के संस्कार की विधि आचार्यों ने इस प्रकार निर्द्धारित की है कि उपलब्ध ग्रह का भोग यथार्थ आ सके।

ग्रहों की कक्षाएँ -

ग्रहों की कक्षाएँ चंद्र, बुध, शुक्र, रवि, भौम, गुरु, शनि के क्रम से उत्तरोत्तर पृथ्वी से दूर हैं। इनका केंद्र

पृथ्वी माना गया है। यद्यपि ग्रहों के साधन के लिये प्रत्येक कक्षा का अर्धव्यास त्रिज्यातुल्य कल्पित किया है, तथापि उनकी अन्त्यफलज्या भिन्न होने के कारण उनकी दूरी विभिन्न प्रकार की आती है। शीघ्रांत्यफलज्याओं और त्रिज्याओं की ग्रहकक्षाव्यासार्ध और रविकक्षाव्यासार्ध से तुलना करने पर बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति तथा शनि की कक्षाओं के व्यासार्ध पृथ्वी से रवि की दूरी के सापेक्ष .3694, .7278, .1.5139, .5.1429 तथा 9.2308 आते हैं। आधुनिक सूक्ष्म मान .3871, .7233, 1.5237, 5.2028 तथा 9.5288 हैं। ग्रहकक्षा और क्रांतिवृत्त के संपात को पात कहते हैं। ग्रह के भ्रमणमार्ग को विमंडल कहते हैं। क्रांतिवृत्त तथा विमंडल के बीच के कोण को परमविक्षेप कहते हैं। इनके मान भूकेंद्रिक ज्ञात किए गए हैं। तमोग्रह राहु केतु सदा चंद्रमा के पातों पर कल्पित किए जाते हैं। पात की गति विलोम होती है।

ग्रहणाधिकारों में सूर्य तथा चंद्र के ग्रहणों का गणित है। चंद्रमा का ग्रहण भूछाया में प्रविष्ट होने से तथा सूर्यग्रहण चंद्रमा द्वारा सूर्य के ढके जाने से माना गया है। सूर्यग्रहण में लंबन के कारण भूकेंद्रीय चंद्र तथा हमें दिखाई देनेवोल चंद्र में बहुत अंतर आ जाता है। अत: इसके लिये लंबन का ज्ञान किया जाता है।

चंद्रशृंगोन्नति में चंद्रमा की कलाओं को ज्ञात किया जाता है। ग्रहच्छायाधिकार में ग्रहों के उदयास्त काल तथा इष्टकाल में वेध की विधि और पाताधिकार में सूर्य और चंद्रमा के क्रांतिसाम्य का विचार किया जाता है। भिन्न अयन तथा एक गोलार्ध में होने पर, सायन रिवचंद्र के योग 180° के समय क्रांतिसाम्य होने पर, व्यतिपात तथा एक अयन भिन्न गोलार्ध में होने पर वही योग 360° के तुल्य हो तो क्रांतिसाम्य में वैधृति होती है। ये दोनों शुभ कार्यों के लिये वर्जित हैं। ग्रहयुति में ग्रहों के अति सान्निध्य की स्थितियों का (युद्ध समागम का) गणित है। भग्रहयुति में नक्षत्रों के नियामक दिए गए हैं। अधिंकाश पंचांगों में प्रतिदिन सूर्योदय के समय की ग्रहस्थिति लिखी होती है। कुछ पंचांगों में आधीरात की ग्रहस्थिति लिखी होती है। प्राय: सभी पंचांगों में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, वृहस्पति,शुक्र शनि, राहु और केतु की स्थिति लिखी रहती है। लेकिन कुछ पंचांगकार चन्द्रमा की स्पष्ट स्थिति नहीं लिखते हैं वहॉ नक्षत्रों के भयात और भभोग के आधार पर चन्द्रमा स्पष्ट करना होता है।

ज्योतिष प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में स्पष्ट चन्द्र की विधि बतलायी जा चुकी है। यहॉ अन्य ग्रहों का स्पष्टीकरण दिया जा रहा है।

सूर्यस्पष्ट –

वैशाख शुक्ल प्रतिपदा मंगलवार को दिन में 12 बजे किसी बच्चें का जन्म हुआ है। स्पष्ट सूर्य का साधन करना है –

माना की इष्टकाल – 15 घटी 55 पल।

तथा उक्त तिथि के अनुसार पंचांग में मंगलवार को प्रात: 5।38 सूर्योदयकाल का स्पष्टसूर्य 0।6।14।30 , बुधवार का सूर्योदयकालिक स्पष्टसूर्य 0।7।12।58 , दोनों दिनों के ग्रहों का अन्तर कर यह पता करते हैं कि 24 घण्टे में सूर्य की कितनी गति हुई ? 0।7।12।58 – 0।6।14।30 =

0।0^0।58।28 = 24 घण्टे में गति = 58।28 है। या 24 घण्टे = 60 घटी है, तो 60 घटी में गति 58।28 हुई। मंगलवार सूर्योदय काल में सूर्य की स्पष्टराश्यादि 0।6^0।14।30 ज्ञात है। बच्चे का जन्म सूर्योदय के 15 घटी 55 पल है। इतने समय में सूर्य कितना चलेगा यह ज्ञात करना है –

चूँकि 60 घटी में 58'। 28' गति है।

इसलिए 1 घटी में 58।28 / 60

15 घटी 55 पल में 58।28 × 15।55 /60 = 930 ।35।40 /60 = 15'।30'।36' इसे मंगलवार के सूर्योदयकालिक स्पष्टसूर्य राश्यादि में जोड़गें तो जन्मकालिक होगा। जैसे 0 ।6^0।14।30 + 0।0^0।15।31 = 0 ।6^0।30।1 यह जन्मकालिक स्पष्ट सूर्य हुआ। इसी आधार पर अन्य ग्रहों का जन्मकालिक स्पष्ट साधन किया जाता है।

3.4 मुन्था –

ताजिक मत में मुन्था, मुन्थहा, इन्थिहा आदि नामों से एक अन्य ग्रह (अप्रकाशमान व भौतिक पिण्ड रहित) माना गया है। इसकी दैनिक गति 5 कला होती है। अत: यह एक मास में 30 × 5 = 150 या 2^0 30 चलने से वार्षिक गति 1 राशि या 30^0 के तुल्य रखती है।

जन्म समय मुन्था सदैव जन्म लग्न में ही रहती है। अत: वर्तमान वर्ष में मुन्था की राश्यात्मक स्थिति जानने के लिए जन्म लग्न राशि में गत वर्ष जोड़कर 12 का भाग देना चाहिए। शेष अंक के तुल्य राशि में मुन्था होती है। ताजिक ग्रन्थ में मुन्था साधन का श्लोक इस प्रकार है -

स्वजन्मलग्नात् प्रतिवर्षमेकैकरारशिभोगान् मुथहाभ्रमोऽत: ।

स्वजन्मलग्नं रवितष्टयातशरद्युतं सा भमुखेन्थिहा स्यात् ।।

अर्थात् जन्म लग्न में एक वर्ष तक जन्मलग्न में ही मुथहा रहती है। दूसरे वर्ष में जन्म लग्न से दूसरे स्थान में इस क्रम से प्रत्येक वर्ष में एक एक राशि भोग से मुथहा का भ्रमण होता है। इसलिये जन्मलग्न में राशिस्थान में गत वर्ष को जोड़कर 12 से भाग दें, तो शेष तुल्य राशि और अंशादिक तो लग्न के अंशादिवत् इस प्रकार वर्ष में मुथहा होती है। अर्थात् सभी वर्षों में मुथहा के राशि ही बदलती है , अंशादि स्थिर ही रहता है।

प्रत्यहं शरलिप्ताभिर्वर्द्धते साऽनुपातत: ।

सार्धमंशद्वयं मास इत्याहु: केऽपि सूरय: ।।

भाषार्थ - प्रत्येक सौर दिन में 5 कलायें , प्रत्येक एक मास में अढ़ाई अंश अनुपात से मुथहा बढ़ती है। स्पष्टता के लिये यह किसी आचार्य का कथन है। इसका प्रयोजन मासप्रवेश और दिन प्रवेश में पड़ता है। क्योंकि वर्षप्रवेश कुण्डली में जो मुथहा है वह एक वर्ष तक वहॉ ठहरती है, परन्तु प्रथममास प्रवेश में भी वही मुथहा का मान हुआ । अब दूसरे मास प्रवेश बनाने में वर्षप्रवेश कालिक मुथहा में अढ़ाई अंश जोड़ने से मुथहा होती है, तीसरे मास प्रवेश बनाने में द्विगुणित अढ़ाई अंश अर्थात् पॉच अंश जोड़ने से मुथहा होती है। ऐसे ही चौथे मास प्रवेश में साढ़े सात अंश जोड़ने से मुथहा बनती है।

दिन प्रवेश बनाने में प्रतिदिन प्रवेश में जो मुथहा है उसमें 5 कला, जोड़ने से अगले दिन प्रवेश की मुथहा बनती है।

यहॉ वर्षप्रवेश में मुथहा मान जानने के लिये उदाहरण –

माना कि जन्म लग्न – 5।5।34।12 में राशि स्थान में गतवर्ष 15 जोड़ा 20।5।34।12 अब राशि स्थान में 12 बारह से भाग दिया शेष 8।5।34।12 तुल्य मुन्था हुई। इब इसमें अढ़ाई अंश जोड़ा तो अग्रिम द्वितीय मास प्रवेश में मुथहा हुई। 5 अंश जोड़ा तो तृतीय मास प्रवेश में मुथहा हुई। एवं वर्षप्रवेश के प्रथम दिन प्रवेश की मुथहा वही होती है जो वर्ष प्रवेश की मुथहा है इसमें पॉच कला जोड़ दिया तो दूसरे दिन की मुथहा बनी। इसी प्रकार आगे का भी साधन करना चाहिये।

अभ्यास प्रश्न -

1. ग्रहों की मेषादि राशियों के सापेक्ष पृथ्वी की परिक्रमा को कहते है –
   क.राशि ख. नक्षत्र ग. भगण घ. ग्रह
2. स्पष्ट सूर्य – चन्द्र और मध्यम सूर्य – चन्द्र के अन्तर को क्या कहते है –
   क. मंदफल ख. शीघ्रफल ग. मन्दोच्च घ. शीघ्रोच्च
3. मन्दोच्च से कितनी दूरी पर मंदनीच होता है।
   क. 60^0 ख. 180^0 ग. 90^0 घ. 120^0
4. सूर्य – चन्द्र स्पष्टीकरण में आवश्यक होता है –
   क. मंदफल ख. शीघ्रफल ग. मन्दफल एवं शीघ्रफल दोनों घ. कोई
5. विमण्डल और क्रान्तिवृत्त के संपात को कहते है –
   क. संपात ख. पात ग. विकदम्ब घ. विमण्डल

मुन्था फल विचार –

1. मुन्था पर मुन्थेश की दृष्टि (ताजिक दृष्टि) होने से, क्रूर ग्रहों की मुन्था से परस्पर केन्द्र स्थिति न होने पर मुन्था वर्ष में शुभ होती है।

2. शुभ ग्रहों व स्वामी ग्रहों से दृष्ट युक्त व शुभ भाव 9,10,11 में मुन्था बहुत शुभ फल देती है। 1,2,3,5 में मध्यम शुभ अर्थात् परिश्रम से लाभ एवं शेष 4,6 ,7,8,12 में बहुत अशुभ होती है। सर्वत्र क्रूर व शुभ ग्रहों के योगादि से फल में तारतम्य बिठाना चाहिए।

3. शुभ ग्रहों से इत्थशाल करने पर मुन्था या अन्य प्रकार से बली या शुभ ग्रहों से युत दृष्ट मुन्था, भाव के शुभ फल को बढ़ाती है तथा अशुभ फल को कम करती है। इसके विपरीत अशुभ मुन्था भाव के शुभ फल को नष्ट करके अशुभ फल की वृद्धि करती है।

4. जन्म लग्न से भी 4,6,7,8,12 राशियों में मुन्था रहने पर प्राय: अशुभ फल ही देती है। अत: जन्म लग्न व वर्षलग्न दोनों से अशुभ होने पर निश्चय ही मुन्था अत्यन्त अशुभ फल देती है।

5. राहु के मुख में विद्यमान मुन्था शुभ होती है। यदि गुरू शुक्र का योग या दृष्टि भी हो तो निश्चय से पद प्रतिष्ठा दिलाती है। लेकिन राहु के पुच्छ भाग में विद्यमान मुन्था यदि विशेषतया पापग्रहों के योग या दृष्टि में हो तो अचल सम्पत्ति, धन – धान्य व सुख की हानि करती है।

वर्षेश होने के पॉच अधिकारियों का निर्णय – जन्मलग्न का स्वामी, वर्ष लग्न का स्वामी, मुन्था की राशि का स्वामी, त्रैराशिश व समयेश ये पॉच ग्रह पंचाधिकारी कहलाते हैं। इन्हीं पॉचों में से कोई एक सर्वाधिक बली होकर लग्न को देखता हो तो वही वर्षपति या वर्षेश होता है। वर्षेश की स्थिति से भी वर्ष का सम्पूर्ण शुभाशुभ फल प्रभावित होता है । तदनुसार पहले तीन अधिकारियों का निर्णय सरल ही है। शेष दो का निर्णय इस प्रकार होता है।

समयेश व त्रैराशीश –

दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य की राशि का स्वामी एवं रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा की राशि की स्वामी समयेश कहलाता है।

त्रैराशीश भी बारहों लग्नों के पृथक् पृथक् दिन रात्रि लग्न के भेद से 24 होते हैं। अर्थात् दिन में प्रवेश हो तो वर्ष लग्नानुसारी दिन का त्रैराशीश व रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर रात्रि का त्रैराशीश वर्ष लग्न की राशि से देखना होगा।

त्रैराशीश चक्र –

	मे0	वृ0	मि0	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	म0	कु0	मीन
दिन	सू0	शुक्र	शनि	शुक्र	गुरू	चन्द्र	बुध	मंगल	शनि	मंगल	गुरू	चन्द्र
रात्रि	गुरू	चन्द्र	बुध	मंगल	सूर्य	शुक्र	शनि	शुक्र	शनि	मंगल	गुरू	चन्द्र

जन्मेश – मंगल, **मुन्थेश** – बुध, **त्रैराशीश** – मंगल , **वर्ष लग्नेश** – चन्द्रमा, **समयेश** – शनि, **वर्षपति** – विचारणीय।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप ने जाना कि ग्रह क्या है, उनकी संख्या कितनी होती है तथा ग्रहों के स्पष्टीकरण किस प्रकार किया जाता है। मंदफल, शीघ्रफल क्या है। सूर्यादि ग्रहों के स्पष्टीकरण में मंदफल एवं शीघ्रफल की भूमिका क्या है। मंदफल की आवश्यकता किस – किस ग्रहों में तथा शीघ्रफल की आवश्यकता किस – किस ग्रहों की स्पष्टीकरण में पड़ती है। ग्रहों के मूलभुत अध्ययन के साथ – साथ उनके स्पष्टीकरण की प्रक्रिया को उदाहरण सहित आपने जाना। ग्रहस्पष्टीकरण के साथ – साथ इस इकाई में ताजिकोक्त मुन्था से भी परिचित हुये। मुन्था क्या है उसका साधन किस प्रकार किया जाता है आदि इत्यादि का अध्ययन आपने इस इकाई में अध्ययन कर लिया है। वस्तुत: ग्रहस्पष्टीकरण ज्योतिष शास्त्र का मूलाधार माना जाता है, उसी के आधार पर जनमानस के लिये मुहूर्त्तादि विवेचन तथा उसके व्यक्तिगत जीवन का शुभाशुभ फल बताया जाता

है। ताजिकोक्त मुन्था का ज्ञान भी परमावश्यक है। वस्तुत: मुन्था केवल ताजिक शास्त्र में ही पाया जाता है, ज्योतिष के अन्य ग्रन्थों में मुन्था का समावेश नहीं है।।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

भगण – राशियों का समूह

कल्प - 1 हजार महायुग के बराबर

अहर्गण – दिनों का समूह

मेषादि – मेष, वृष, मिथुनादि द्वादश राशियॉ

त्रैराशिक - गणित साधन की वैदिक रीति

सूर्योदयासन्नकालिक - सूर्योदय के आस – पास का समय

परमान्तर – सर्वाधिक अन्तर

कक्षावृत्त - ग्रह जहॉ भ्रमण करते है

लम्बन - सूर्य – चन्द्र के गर्भीय पृष्ठीय का अन्तर

भूछाया – पृथ्वी की छाया

उदयास्त – उदय और अस्त

पंचांगकार – पंचांग निर्माण कर्ता

दैनिक गति – प्रतिदिन की गति

मुन्था - ताजिकोक्त ग्रह

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. क
3. ख
4. क
5. ख

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ग्रहस्पष्ट से आप क्या समझते है ?
2. मन्दफल एवं शीघ्रफल को समझाइये ।
3. जन्मकालिक ग्रहस्पष्ट साधन कीजिये ।
4. मुन्था से क्या तात्पर्य है ? स्पष्ट कीजिये ।

इकाई – 4 लग्नस्पष्ट

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 लग्नस्पष्ट

अभ्यास प्रश्न –

4.4 सारांशः

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष के प्रथम पत्र वर्षफल विचार के चतुर्थ इकाई **'लग्नस्पष्ट'** से सम्बन्धित है। लगतीति लग्नम्। लग्न जन्मकुण्डली का प्राण माना जाता है।

लग्न का अर्थ होता है – लगना। उदयक्षितिज वृत्त क्रान्ति वृत्त में पूर्व दिशा में जहॉ लगता है,उसे लग्न कहते है।

इससे पूर्व की इकाई में आपने ग्रहस्पष्ट एवं मुन्था का अध्ययन कर लिया है यहॉ लग्न संबंधित विषयों का अध्ययन प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है। तत् सम्बन्धित ज्ञान प्रस्तुत इकाई में आपके समक्ष प्रस्तुत है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. लग्न से क्या तात्पर्य है।
2. लग्न का साधन कैसे होता है ।
3. लग्न के प्रकार कितने है ।
4. ताजिकोक्त लग्न क्या है ।
5. लग्न का ज्योतिष में क्या महत्व है ।

4.3 लग्नस्पष्ट

लग्नानयन की सैद्धान्तिक रीति के लिये कहा गया है –

तत्काले सायनाऽर्कस्य भुक्तभोग्यांश संगुणात्।
स्वोदयात्खाग्नि लब्धं यद् भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत्॥
इष्टनाड़ी पलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयान्।
शेषं खत्र्या हतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्॥
अशुद्धशुद्धभे हीन युक्तनुर्व्ययनांशकम्।

अर्थात् तात्कालिक स्पष्टसूर्य में अयनांश जोड़ने से सायन सूर्य होता है। सायन सूर्य के भुक्त या भोग्यांशों को सायन सूर्य की राशि के स्वोदय मान से गुणा करें। तब गुणनफल में 30 का भाग देने से लब्धि भोग्य या भुक्त काल होती है। इस भोग्य भुक्त काल को इष्टकाल के पलों में से घटाकर जो शेष रहे उसमें से आगे की राशियों के भुक्त प्रकार प्रकार में पिछली राशियों के स्वोदय मान को घटाते जाएँ। जब न घटे तो शेष को 30 से गुणाकर अशुद्ध राशिमान से भाग देने से लब्धि अंश कलादि होती है। उस अंश कला के पहले अशुद्ध राशि में से एक घटाकर रखने से **'सायन लग्न'** व

उसमें से अयनांश घटाने पर '**निरयण लग्न**' होता है। उदाहरणार्थ -

लग्नानयनम् -

माना कि **सूर्यस्पष्ट** – 4।27^0।50।0 राश्यादि है , **अयनांश** - 23^0।45।35 है, पूर्व अध्याय के अनुसार पलभा एवं चरखण्ड का ग्रहण कर लेते है, इष्टकाल 8।20 घटयादि है तो लग्नानयन श्लोकानुसार इस प्रकार से होगा –

स्पष्ट सूर्य - 4।27^0।50।0

अयनांश - + 23^0।45।35

5 । 21^0। 35 ।35 - **सायन सूर्य**

30^0। 00 ।00

- 21^0 । 35 ।35 घटाने पर

8^0 । 24 । 25 भोग्यांश

लग्न साधन भुक्त या भोग्य प्रकार से किया जा सकता है, यहॉ भोग्य रीति से किया जा रहा है।

सायन सूर्य कन्या राशि का है अत: कन्या राशि के उदय मान 345 से भोग्यांश को गुणा किया। गुणनफल 2898 । 11 । 25 आया। इसमे 30 का भाग देने पर 96।36।22 पलात्मक मान आया जो भोग्यकाल है।

हमारा इष्टकाल 8।20 घटयादि है तथा उसका पलात्मक मान 8 × 60 + 20 = 500 पल हुआ।

अब इष्ट पलों में से भोग्य को घटाया –

500 । 00 । 00

- 96 । 36 । 22

403 । 23 । 38 पल मिले।

इन पलों में से जहॉ तक का पलात्मक मान घट सके, घटाने पर –

403 । 23 । 38

- 345 । 00 ।00 तुला राशि का मान - तुला शुद्धराशि

58 । 23 । 38

अशुद्ध राशि वृश्चिक हुई, (नहीं घटने के कारण) ।

शेष पलों को 30 से गुणा किया –

58।23।38

× 30

1740। 690 । 1140

इसमें अशुद्ध राशि वृश्चिक के उदय मान 352 से भाग दिया , भाग देने पर 4 अंश 56 कला 36 विकला आया, अत: 7 । 4^0 । 56 । 36 सायन लग्न है।

इनमें से पूर्व युक्त अयनांश घटाने से निरयण लग्न होगा अत: -

$$
\begin{array}{r}
7 \mid 4^0 \mid 56 \mid 36 \\
- \quad 23^0 \mid 45 \mid 35 \\
\hline
6 \mid 11^0 \mid 11 \mid 01
\end{array}
$$

- अयनांश

6 । 11⁰ । 11 । 01 निरयण लग्न स्पष्ट ।

इसी लग्न स्पष्ट के आधार पर हम जन्मांग चक्र का भी निर्माण करते है । जन्मांग चक्र में जातक का जिस समय में जन्म हुआ होता है, उस समय को हम पंचांग में दैनिक लग्न सारिणी में देख लेते है । पश्चात् उस लग्न को जन्मांग चक्र में लिखकर तात्कालिक प्रश्न कुण्डली का निर्माण कर लेते है । किन्तु जन्मांग चक्र में गणितीय रीति से लग्नस्पष्ट का साधन कर जन्मांग चक्र में लग्न को लिखते है। सूर्योदय के समय सूर्य जिस राशि में हो वही राशि लग्न होगी, यह निश्चित है । लग्न शब्द से ही प्रतीत होता है कि एक वस्तु का दूसरे वस्तु में लगना । इसीलिए कहा गया है कि **- लगतीति लग्नम्** । वस्तुत: लग्न में यहीं होता है क्योंकि इष्टकाल में क्रान्तिवृत्त का जो स्थान उदयक्षितिज में जहॉ लगता है , वही राश्यादि (राशि, अंश, कला , विकला) लग्न होता है । यथा गोले –

भवृत्तं प्राक्कुजे यत्र लग्नं लग्नं तदुच्यते ।
पश्चात् कुजेऽस्त लग्नं स्यात् तुर्यं याम्योत्तरे त्वधः ।
उर्ध्वं याम्योत्तरे यत्र लग्नं तद्दशमाभिधम् ।
राश्याद्य जातकादौ तद् गृह्यते व्ययनांशकम् ।

अर्थात् क्रान्तिवृत्त उदयक्षितिज वृत्त में पूर्व दिशा में जहॉ स्पर्श करता है, उसे लग्न कहते है । पश्चिम दिशा में जहॉ स्पर्श करता है,उसे सप्तम लग्न तथा अध: दिशा में चतुर्थ लग्न और उर्ध्व दिशा में दशम लग्न होता है। लग्न की यह परिभाषा सैद्धान्तिक गोलीय रीति से कहा गया है । पंचांग में भी दैनिक लग्न सारिणी दिया होता है । उसमें एक लग्न 2 घण्टे का होता है । इस प्रकार से 24 घण्टे में कुल 12 लग्न होता है । यह लग्न पंचांग में मुहूर्त्तों के लिये दिया गया होता है । किस लग्न में कौन सा कार्य शुभ होता है तथा कौन अशुभ, इसका विवेचन पंचागोक्त लग्न के अनुसार ही किया जाता है । जिस दिन सूर्य अपनी राशि का संक्रमण करते है अर्थात् सूर्य संक्रान्ति के दिन प्रात: काल सूर्योदय का समय व सूर्य की अधिष्ठिति राशि के लग्न का प्रारम्भ प्राय: एक ही होता है अर्थात् मेष राशि में सूर्य 14 अप्रैल को जाता है । अत: जिस समय सूर्योदय होगा, उसी समय मेष लग्न का प्रारम्भ होगा । तत्पश्चात् वृष, मिथुन, कर्क ,सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु , मकर , कुम्भ एवं मीन आदि द्वादश लग्न होते है ।

साम्पातिक काल से लग्नस्पष्ट –

साम्पातिक इष्टकाल बनाकर उसी के माध्यम से साम्पतिक लग्नस्पष्ट होता है । ध्यातव्य हो कि साम्पातिक लग्नानयन के लिये एफेमेरिज सारणी का प्रयोग किया जाता है । सर्वप्रथम स्टै0 टा0 9:30 A.M को स्थानीय समय बनाये । एतदर्थ स्टै0 अन्तर 21 मिनट 8 सेकेण्ड को स्टै0 टा0 में से घटाया तो 9.30.00 - 0.21.08 = 9.08.52 A.M स्थानीय समय या LMT हुआ । यह समय दोपहर 12 बजे से कितना पहले है यह जानने के लिये इसे 12 बजे में से घटाया तो 12:00 -

9.08.52 = 02.51.08 घण्टे अन्तर प्राप्त हुआ। इसे प्रतिघण्टा 10 से0 की दर से बढ़ाया, क्योंकि पृथ्वी भ्रमण के 24 घण्टे × 10 सेकेण्ड = 24 ×60 ×60 × 10 सेकेण्ड = 24 × 36000 सेकेण्ड = 864000 सेकेण्ड वाले भेद को मिटाना आवश्यक है। इसके लिये लहरी की लग्न सारिणी के पृष्ठ 5 पर एक सारणी भी दी गई है।

2घण्टे का संस्कार = 20 सेकेण्ड

51 मिनट का संस्कार = + 08 सेकेण्ड लगभग

28 सेकेण्ड

अत: शुद्ध व कार्य योग्य अन्तर 2.51.08 घंटे + 0.00.28 घंटे जोड़ने से 2.51.36 हुआ। इसे 12 बजे के साम्पातिक काल 11.34.00 में से घटाया –

11.34.00 घंटे 12 बजे का साम्पातिक काल

2 .51.36 घंटे संस्कृत का अन्तर

8.42.24 अभीष्ट कालीन साम्पातिक काल

हमने दिल्ली के अक्षांश 28^0. 39 पर निर्मित लग्नसारिणी लहरी की पुस्तक का अवलोकन किया। हमारा साम्पातिकइष्टकाल 8.42.24 घंटे है।

	रा0अं0क0
8 घंटे 40 मिनटपर लग्न	6 . 11. 56
2 मिनट का संस्कार	0. 0. 26
24 सेकेण्ड का अन्तर	+ $6\|12^0\|$ 27

उक्त लग्न प्राप्त हुआ। इसमें अभी अयनांश संस्कार करना शेष है। लहरी की सभी लग्न सारिणियॉ 23 अंश अयनांश के आधार पर बनी हैं। वर्तमान में अयनांश 23^0 .45 है। अत: 45 इसमें से घटाना आवश्यक है,तब हमारा अभीष्ट निरयण लग्न होगा।

6.12^0.27 हुआ 23 अयनांश पर लग्न

45

6.11^0.42 हुआ 23^0 45 अयनांश पर लग्न।

लग्न साधन की प्रक्रिया द्वारा ही दशम लग्न का ज्ञान भी लहरी की लग्न सारिणी से दशम लग्न वाले पृष्ठ से किया जा सकता है।

8 घंटे 40 मिनट पर दशम लग्न -	3.14.35
2 मिनट 24 सेकेण्ड का संस्कार - +	0.0.36
	$3\|15^0\|11$

इसमें लग्न की तरह ही 45 का अयनांश संस्कार करने से अभीष्ट दशम लग्न या 3.14^0.26 प्राप्त हुआ।

इस प्रकार से हम लग्नायन को जानकर जन्मांग चक्र का भी निर्माण कर लेते है, और जन्मांग चक्र को स्पष्ट ग्रहों के आधार पर कुण्डली का निर्माण कर लेते है। जन्मांग चक्र में स्थित ग्रहों के अनुसार निम्न प्रकार से फलादेश आदि कर्तव्य करते है -

जन्मांग चक्र के द्वादश भाव में द्वादश राशि स्थित कर जन्मांग चक्र का निर्माण किया जाता है, यह स्पष्ट हो चुका है। प्रथम भाव में जो राशि लिखी जाती है,उसे लग्न कहते है। प्रत्येक लग्न के फल भिन्न – भिन्न हैं और वह निम्नलिखित अनुसार हैं । जैसे: -

मेष लग्न - इस लग्न में जन्म लिया हुआ जातक प्रचण्ड अभिमानी, गुणवान, क्रोधी , मित्र विरोधी, दुष्टसंगति वाला, अपने पराक्रम से यश प्राप्त करने वाला व अत्यन्त रोषयुक्त होता है।

वृष लग्न - वृष लग्न वाला जातक बहुत गुणवान, धन से पूर्ण, रणधीर, शूर वीर, शान्त चित्त , प्रियवचन बोलने वाला गुरूजनों का भक्त होता है।

मिथुन लग्न - मिथुन लग्न वाला जातक भोगी, श्रेष्ठ अनेक पुत्र व मित्रवाला,गुप्त बात को गुप्त रखने वाला,धनवान, सुशील और राजा के समान उसकी स्थिति होती है।

कर्क लग्न - कर्क लग्न वाला जातक साधुजनों का भक्त , नम्र स्वभाव, निरन्तर उदार चित्त, दानशील, जलविहार करने वाला , कामी व मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है।

सिंह लग्न - सिंह लग्न वाला जातक दुर्बल शरीर, महापराक्रमी, भोगी, अल्प पुत्रोंवाला,अल्प भोजन करने वाला, बुद्धिमान व अभिमानी होता है।

कन्या लग्न - कन्या लग्न वाला जातक उत्तम ज्ञानी, गुणी, बल व भलाई से युक्त, सदैव प्रसन्नचित्त, नित्य लक्ष्मी प्राप्त करने वाला होता है।

तुला लग्न - तुला लग्न वाला जातक अधिक गुणी, धनलाभयुक्त, व्यापार कार्य में अति निपुण, उसके गृह में लक्ष्मी नित्य वास करती हैं और वह अपने कुल का श्रेष्ठ व भूषण होता है।

वृश्चिक लग्न - वृश्चिक लग्न वाला जातक अनेक विद्या में निपुण, सदा कलहप्रिय, शूर वीर वृत्ति का होता है।

धनु लग्न – धनु लग्न वाला जातक सत्यवादी , राजा का सेवक, बुद्धिमान, दूसरों के मन की बात जानने में निपुण, ज्ञानवान, धनुर्विद्या में निपुण व कलाकुशल होता है।

मकर लग्न - मकर लग्न वाला जातक कठोर मनवाला, जो मन में आये वह काम करनेवाला, सठ, अनेक सन्तानों वाला, अति चतुर होते हुये बहुत लोभी होता है।

कुम्भ लग्न - चंचल स्वभाव वाला, अतिकामी, लोगों से मित्रता रखनेवाला, दम्भी और धान्य से युक्त होता है।

मीन लग्न - मीन लग्न वाला जातक बहुत चतुर, अल्पकामी, उत्तम रत्न आभूषण धारण करनेवाला, चंचल, धूर्त, शिल्पशास्त्र में निपुण होता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. तात्कालिक स्पष्ट सूर्य + अयनांश = ?

क. स्पष्ट सूर्य ख. मध्यम सूर्य ग. सायन सूर्य घ. निरयण सूर्य

2. सायन का शाब्दिक अर्थ है –

क. अयनांश रहित ख. अयनांश सहित ग. अयनांश घ. कोई नहीं

3. क्रान्तिवृत्त उदयक्षितिज वृत्त में पूर्व दिशा में जहॉ स्पर्श करता है, उसे कहते है –

क. लग्न ख. दशम लग्न ग. चतुर्थ लग्न घ. सप्तम लग्न

4. 1 लग्न में कितने घण्टे होते है –

क. 2 ख. 3 ग. 4 घ. 5

5. लग्नों की संख्या होती है –

क. 10 ख. 11 ग. 12 घ. 13

यह लग्न फल शुभ ग्रहों की युति – योगादि पर अवलम्बित है अन्यथा यदि लग्न भाव पर पापग्रहों की युति व दृष्टि हो अथवा लग्न निर्बल हो तो यह फल कम प्रमाण पर मिलेगा। यह पाठक को ध्यान रखना होगा।

सूक्ष्म लग्न साधन रीति –

लग्न सिद्ध करने के लिये सूर्य के उदय समय का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है, यह स्पष्ट है कि किन्तु पूर्व से पश्चिम के शहरों में भिन्न - भिन्न समय पर सूर्योदय होना सम्भव है। ऐसे स्थिति में

मेष - 278 पल	कर्क – 323 पल	तुला – 278 पल	मकर – 323 पल
वृष – 299 पल	सिंह - 299 पल	वृश्चिक – 299 पल	कुम्भ – 299 पल
मिथुन – 323 पल	कन्या – 278 पल	धनु – 323 पल	मीन – 278 पल

जिस स्थान पर सूर्योदय निश्चित करना हो उस शहर के पलभा पर से चरखण्ड जानकर उपर दिये हुये तीन राशि में से घटाओ और कर्क से कन्या राशि के के पलों में जोड़ो, जिससे किसी भी शहर के सूर्योदय का पलात्मक उदय का ज्ञान होगा व तुला से धन राशि के पलों में जोड़ने और मकर से मीन राशि के पलों में घटाने से द्वादश राशि का पलात्मक रवि उदय समय ज्ञात किया जा सकता है।

पलभा आनयन की विधि पूर्व के अध्यायों में की जा चुकी है। अत: उसी आधार पर जिस शहर की पलभा का आनयन करना हो, करके उसी आधार पर उस शहर का अभीष्ट समय का ज्ञान किया जा सकता है। इसी आधार पर उस शहर में जन्मे किसी जातक का अभीष्ट लग्न का आनयन करना चाहिये।

लग्न में रवि से शनि तक सप्त ग्रह में जो ग्रहस्थिति हो उसका फल निम्न अनुसार करना चाहिये –

1. **लग्न में सूर्य का फल** - मध्यम ऊँचा शरीर, लाल गौर वर्ण, तामसी, धाड़सी, उत्साही, पित्तप्रकृति, कम बोलने वाला।
2. **लग्न में चन्द्रमा का फल** – रूपवान, गोरा वर्ण, सुन्दर शरीर, मितभाषी, तेज ऑखें , चंचल स्वभाव, दुबला – पतला शरीर, कफ वात पित्त प्रकृति, स्त्रियों को प्रिय।

3. **लग्न में मंगल का फल** - कृश शरीर, लाल वर्ण नेत्र, चेहरे पर माता के दाग,धैर्यवान, उदार , चंचल स्वभाव, क्रूरदृष्टि , उग्र स्वभाव, तामसी, क्रोधी।
4. **लग्न में बुध का फल** – प्रसन्नमुख, विनोदी भाषण,मजबूत शरीर व बुद्धिमान,बोलने में प्रवीण, पिंगल नेत्र,कफ – वात –पित्त प्रकृति।
5. **लग्न में गुरू का फल** – गोरा , स्थूल देही, लम्बी नाक , ऊँचा मस्तक, गोल नेत्र , सदाचारी,विद्वान,स्थिर चित्त, गम्भीर स्वभाव, ग्रन्थपठन प्रेमी।
6. **लग्न में शुक्र का फल** – गोरा , कोमल सुन्दर शरीर,तेजस्वी कान्ति,पानीदार ऑखें, घुंघरवाले बाल, ऐंठबाज, पोशाक का शौकीन, व्यवस्थितकारभारप्रिय, स्त्रीप्रिय व सुगन्धित पदार्थों का शौकीन ।
7. **लग्न में शनि का फल** - कृश शरीर, काला रंग, पीले नेत्र,मन्दबुद्धि, बलहीन, कृपण,आलसी, मितभाषी परन्तु क्रोधी, कड़े बाल, उत्साही व वात प्रकृति।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि क्रान्तिवृत्त उदयक्षितिज वृत्त में पूर्व दिशा में जहॉ स्पर्श करता है, उसे लग्न कहते है। पश्चिम दिशा में जहॉ स्पर्श करता है,उसे सप्तम लग्न तथा अध: दिशा में चतुर्थ लग्न और उर्ध्व दिशा में दशम लग्न होता है। लग्न की यह परिभाषा सैद्धान्तिक गोलीय रीति से कहा गया है। पंचांग में भी दैनिक लग्न सारिणी दिया होता है। उसमें एक लग्न 2 घण्टे का होता है। इस प्रकार से 24 घण्टे में कुल 12 लग्न होता है। यह लग्न पंचांग में मुहूर्त्तों के लिये दिया गया होता है। किस लग्न में कौन सा कार्य शुभ होता है तथा कौन अशुभ, इसका विवेचन पंचागोक्त लग्न के अनुसार ही किया जाता है।

जिस दिन सूर्य अपनी राशि का संक्रमण करते है अर्थात् सूर्य संक्रान्ति के दिन प्रात: काल सूर्योदय का समय व सूर्य की अधिष्ठिति राशि के लग्न का प्रारम्भ प्राय: एक ही होता है अर्थात् मेष राशि में सूर्य 14 अप्रैल को जाता है। अत: जिस समय सूर्योदय होगा, उसी समय मेष लग्न का प्रारम्भ होगा। तत्पश्चात् वृष, मिथुन, कर्क ,सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु , मकर , कुम्भ एवं मीन आदि द्वादश लग्न होते है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

सायन सूर्य – अयनांश सहित सूर्य

भोग्यांश - भोगा हुआ अंश मान

गुणनफल – गुणा करने पर प्राप्त फल

इष्टकाल – अभीष्ट समय

अशुद्ध राशिमान - जो राशिमान घटा न हो

लग्नानयन - लग्न का आनयन अर्थात् स्पष्टीकरण

भवृत्त – क्रान्तिवृत्त
प्राक् - पूर्व
उर्ध्व - उपर
अधः – नीचे
पंचांगोक्त – पंचांग में कहे गये
संक्रमण – परिवर्तन

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. क
5. ग

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र
ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

जातकपारिजात – आचार्य वैद्यनाथ – चौखम्भा विद्याप्रकाशन
वृहत्पराशर होरा शास्त्र – चौखम्भा विद्याप्रकाशन
वृहज्जातक – वराहमिहिर – चौखम्भा प्रकाशन
फलदीपिका – चौखम्भा विद्याप्रकाशन

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. लग्न से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. लग्नस्पष्ट कीजिये।
3. लग्न फल लिखिये।

इकाई – 5 वर्शेष निर्णय

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 वर्षेश निर्णय

अभ्यास प्रश्न -

5.4 सारांशः

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष के प्रथम पत्र वर्षफल विचार के पंचम इकाई **'वर्षेश निर्णय'** से सम्बन्धित है । वर्षेश निणर्य ताजिक ग्रन्थ का एक महत्वपूर्ण विषय है । ताजिकनीलकण्ठी में संज्ञातन्त्र के अन्तर्गत इसका विवेचन किया गया है।

पंचाधिकारियों में सर्वाधिक बली को वर्षेश की संज्ञा दी जाती है। वर्षेश ज्ञान हेतु पंच अधिकारी का विचार किया जाता है।

इससे पूर्व की अध्यायों में आपने ग्रहस्पष्ट, मुन्था एवं लग्नस्पष्ट को समझ लिया है। यहॉ आइये अब हम वर्षेश निर्णय का अध्ययन करते है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. वर्षेश से क्या तात्पर्य है।
2. वर्षेश निर्णय कैसे होता है ।
3. वर्षेश निर्णय के लिए आवश्यक तत्व क्या है ?
4. ताजिकोक्त वर्षेश का क्या महत्व है ।

5.3 वर्शेष निर्णय

वर्षेश का प्रयोजन –

त्रिराशिपा: सूर्यसितार्किशुक्रा दिने निशीज्येन्दुबुधक्षमाजा: ।
मेषाच्चतुर्णो हरिभाद्विलोमं नित्यं परेष्वार्किकुजेज्यचन्द्रा: ।।

अर्थात् दिन में प्रवेश हो, तो मेष का सूर्य, वृष का शुक्र , मिथुन का बुध, कर्क का मंगल त्रिराशीश होते हैं । सिंहादि चार राशियों में दिन में वर्षप्रवेश होने से, मेषादि चार राशियों के जो रात्रि के त्रिराशीश, वे क्रम से त्रिराशीश होते हैं। मेषादि चार राशियों के जो दिन के त्रिराशीश वे सिंहादि चार राशियों के रात्रि में होते हैं। शेष धनु, मकर, कुम्भ, मीन इन राशियों के दिन या रात्रि में क्रम से शनि, मंगल, गुरू और चन्द्रमा त्रिराशीश होते हैं।

वर्षेशार्थ दिननिशाविभागोक्तास्त्रिराशिपा: ।
पंचवर्गीबलाद्यर्थे द्रेष्काणेशान्विचिन्तयेत् ।।

अर्थ – त्रिराशिपा: सूर्यसितार्किशुक्रा इस श्लोक से जो त्रिराशीश , दिन रात्रि विभाग करके कथित हैं

वह केवल वर्षेशनिर्णय के लिए ही हैं। पंचवर्गीयबल साधन के लिये आद्या: कुजाद्या रवितोऽपि मध्यमा:। इस श्लोक के अनुसार जो द्रेष्काणेश कथित है वह ग्रहण करना चाहिए ।

निम्नलिखित चक्र द्वारा आप त्रिराशीश को समझ सकते है –

राशि	**मे.**	**वृ.**	**मि.**	**क.**	**सिंह**	**क.**	**तु.**	**वृ.**	**ध.**	**म.**	**कु.**	**मी.**
दिने	सू.	शु.	श.	शु.	वृ.	चं.	बु.	मं.	श.	मं.	वृ.	चं.
रात्रौ	वृ.	चं.	बु.	मं.	सू.	शु.	श.	शु.	श.	मं.	वृ.	चं.

वर्षेशनिर्णयार्थ पंचाधिकारी –

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिप:।
सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रमाधीश्वरो निशि विमृश्य पंचकम्॥
बली य एषां तनुमीक्षमाण: स वर्षपो लग्नमनीक्षमाण:।
नैवाब्दपो दृष्टयतिरेकत: स्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्या:॥

अर्थ – जन्मकालिक लग्न का स्वामी, वर्षकालिकलग्नका स्वामी,मुथहा का स्वामी, त्रिराशीश, दिन में वर्षप्रवेश होने से सूर्य जिस राशि में हो उसका स्वामी रात्रि में वर्षप्रवेश होने से चन्द्रमा जिस राशि में हो, उसका स्वामी, इन पॉचों को विचार कर उसमें जो सर्वाधिक बली हो और वर्ष लग्न को भी देखता हो, वही वर्षेश होता है। जो वर्ष लग्न को नहीं देखता हो वह सर्वाधिक बलवान होने पर भी वर्षेश नहीं होता है। यदि उन पंचाधिकारियों में सभी या चार, तीन अथवा दो भी सम बलशाली हों तो जिनकी दृष्टि लग्न पर विशेष हो, वह वर्षेश होता है।

दृष्टिसाम्ये व्यवस्था –

दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिप: स्यान्मुथहेश्वरस्तु।
पंचापि चेन्नो तनुमीक्षमाणा वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्य:॥

भाषार्थ – यदि पॉचों अधिकारी ग्रहों के बल तथा लग्न के उपर दृष्टि समान हो या सब निर्बल हों तो मुथहा के स्वामी ग्रह ही वर्षेश होता है। अगर पंचाधिकारी ग्रहों में कोई भी लग्न को नहीं देखे तो उन पॉचों में जो सबसे अधिक बली हो वही वर्षेश जानना चाहिए।

अथ वर्षप्रवेशनिर्णय: -

यहॉ जन्मलग्नपति - बुध

वर्षलग्नपति – चन्द्र

मुथहेश – गुरू

त्रिराशिपति – शुक्र

सूर्यराशीश: - मंगल

बलप्रदर्शक चक्र –

ग्रह	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र
बल	१०।३५	७।२७	९।१९	११।४८	१३।५८
दृष्टि संख्या	००	००।४०	००।४५	००।१५	००।४०

यहॉ जन्मलग्नेश बुध, वर्षलग्नेश चन्द्रमा , मुथहेश वृहस्पति, त्रिराशीश शुक्र, सूर्यराशीश मंगल हैं, इन ग्रहों में सबसे अधिक बलवान शुक्र ही है, वह लग्न को देखता है, इसलिये शुक्र ही वर्षेश हुआ। पंचाधिकारियों में सबसे बलवान ग्रह यदि लग्न को नहीं देखे, तो उससे आसन्न न्यून बली जो लग्न को देखे वही वर्षेश होता है। वर्षेश होने में बल और दृष्टि दोनों की आवश्यकता है।

अन्य मत में दृष्टिबलह साम्ये वर्षेशनिर्णय –

बलादिसाम्ये रविराशिपोऽह्नि निशीन्दुराशीडिति केचिदाहु:।

येनेत्थशालोऽब्दविभु: शशी स वर्षाधिपश्चन्द्रभपोऽन्यथात्वे ।।

भाषार्थ – बल और दृष्टि की समता में दिन में वर्षप्रवेश होने से सूर्य जिस राशि में हों, उसके स्वामी वर्षेश होते हैं, रात्रि में चन्द्रमा जिसके राशि में हों वह वर्षेश होता है। उक्त नियम से यदि चन्द्रमा वर्षेश हो और वह पंचाधिकारियों में किसी से इत्थशाल करता हो, तो वह इत्थशाल करनेवाला ग्रह ही वर्षेश होता है। यदि चन्द्रमा इत्थशाल किसी से न करता हो, तो चन्द्रमा जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी वर्षेश होता है। यहॉ इस नियम से चन्द्रमा वर्षेश नहीं सिद्ध हुआ, लेकिन रात में वर्षप्रवेश हो , और चन्द्रमा अपने ही राशि में स्थित हो तो उस हालत में चन्द्रराशीश स्वयं चन्द्रमा ही हुआ, अत: वही वर्षेश होगा।

वर्षेश निर्णय – वर्षेश बनने के पॉच अधिकारियों – जन्मलग्नेश, वर्ष लग्नेश , मुन्थेश समयेश व त्रैराशीश में से किसे वर्षेश माना जाय,इस प्रकार से समझा जा सकता है –

1. पॉचों में से जो ग्रह सबसे अधिक पंचवर्गी बल से युक्त हो और वर्ष लग्न को देखता हो तो वही वर्षेश होगा।
2. यदि बलानुसार सर्वाधिक बली होने पर भी वह ग्रह लग्न को न देखता हो तो वर्षेश नहीं हो सकता।

3. ऐसी स्थिति में वह ग्रह जो सर्वाधिक बली ग्रह से कम बली भी हो, लेकिन लग्न को देखता हो तो वही वर्षेश होगा।
4. यदि कभी संयोगवशात् सभी ग्रहों का पंचवर्गी बल समान हो जाए तो जो ग्रह लग्न को अधिक कला दृष्टि से देखता हो, वही वर्षेश होगा।
5. यदि संयोगवशात् सभी विचारणीय ग्रहों की दृष्टि भी समान हो और बल भी समान हो या पॉचों में से किसी की भी दृष्टि लग्न पर न हो तो ऐसी स्थिति में सर्वबली ग्रह को वर्षेश माना जाएगा।
6. यदि पॉचों में से किसी की भी दृष्टि लग्न पर न हो तो ऐसी स्थिति में सर्वबली ग्रह को वर्षेश माना जाएगा।

दृष्टि व बलानुसार निर्णय न हो सके तो कुछ आचार्य मुन्थेश को व कुछ आचार्य त्रैराशीश को वर्षेश मानने का पक्ष रखते है। त्रैराशिश को वर्षेश मानने पर एक समस्या और उठ खड़ी होती है। उस स्थिति में चन्द्रमा भी वर्षेश हो सकता है। प्राय: आचार्य चन्द्रमा को वर्षेश मानने के पक्ष में नहीं है। चन्द्रमा को यदि वर्षेश प्राप्त हो, जैसा कि रात्रि के वर्षप्रवेश में कर्क राशिस्थ चन्द्रमा होने पर तो चन्द्रमा भी पंचाधिकारियों में स्थान पा जाएगा। तब चन्द्रमा जिस ग्रह से इत्थशाल करे, उसे वर्षेश मानना चाहिए।

विचारणीय है कि चन्द्रमा संयोगवशात् इत्थशाल न करे तब क्या होगा ? तब तो चन्द्रमा को ही वर्षेश मानना पड़ेगा। अत: लम्बे परिवर्तन के बजाय यही माना जाए कि जो बलवान ग्रह लग्न को देखे या पूर्वोक्त अन्य नियमों से सातों ग्रहों में से जो भी वर्षेश आता हो, उसे ही वर्षेश माना जाए तथा विवाद की स्थिति में मुन्थेश को वर्षेश माना जाए। यदि ऐसा न होता तो ताजिकनीलकण्ठी में चन्द्रमा के वर्षेश होने का फल भला क्यों लिखा जाता ? अत: चन्द्रमा भी वर्षेश हो सकता है।

मुन्थेश के पक्ष में यह बात भी रहती है कि मुन्थेश सदैव जन्म लग्न से सुदर्शन विधि में चलने वाली वार्षिक दशा का अधिपति या सुदर्शनपति भी होता है।

वर्षेश्वर निर्णय -

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इति त्रिराशिप:।
सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रभाधीश्वरो निशि विमृश्य पंचकम्॥
बली य एषां तनुमीक्षमाण: स वर्षपो लग्नमनीक्षमाण:।
नवाब्दपो दृष्टयतिरेकत: स्याद् बलस्य साम्ये विदेरेवमाद्या:॥
दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिप: स्यान्मुथहेश्वरस्तु।
पंचापि नो चेत्तनुमीक्षमाण वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्य:॥

अर्थात् जन्म लग्न का स्वामी १, वर्षलग्नेश २ , मुथहेश ३, त्रिराशीश ४ दिन में वर्षप्रवेश होने से सूर्य जिस राशि में हो उसका स्वामी, रात में वर्षप्रवेश होने से चन्द्रराशीश अर्थात् चन्द्र जिस राशि में हो, उसका स्वामी ५, इन पॉचों को विचार कर के, कौन सा ग्रह किसका अधिकारी है ? यह विचार करना चाहिये,इन पॉचों में जो सबसे बलवान हो और लग्न को भी देखता हो वही वर्षेश होगा । सर्वाधिक बली होकर भी अगर लग्न को नहीं देखता तो वह वर्षेश नहीं होता ।

अगर पॉचों अधिकारी समान बल वाले हों , तो जो ग्रह लग्न को अधिक दृष्टि से देखे , वही वर्षेश होगा ।

अभ्यास प्रश्न

1. दिन में प्रवेश हो तो कर्क का त्रिराशीश होता है –
   क. सूर्य ख. मंगल ग. बुध घ. गुरू
2. वर्ष निर्णय में प्रयोगार्थ होता है –
   क. त्रिअधिकारी ख. पंचाधिकारी ग. षड्अधिकारी घ. कोई नहीं
3. जो वर्ष लग्न को देखता हो कहा जाता है –
   क. वर्षेश ख. राशीश ग. त्रिराशीश घ. मुथहेश
4. मुथहेश है –
   क. राशि का स्वामी ख. मुथहा का स्वामी ग. लग्न का स्वामी घ. नक्षत्र का स्वामी
5. पूर्णबली वर्षेश सूर्य हो तो –
   क. दु:ख ख. सुख ग. हानि घ. कोई नहीं

यदि पंचाधिकारियों के बल और दृष्टि भी समान हो, और पॉचों दुर्बल ही हों ऐसी स्थिति में मुथहेश्वर जो ग्रह है, उसी को वर्षेश समझना चाहिये । अगर पॉचों में एक भी ग्रह लग्न को नहीं देखे, तो जो ग्रह सब से पंचाधिकारियों में अधिक बलवान हो वही वर्षेश होता है ।

वर्षेश फल –

अब्दाधिपो व्ययषडष्टमभिन्नसंस्थो लब्धोदयोऽब्दजनुषो: सदृशो बलेन् ।
नि:शेषमुत्तमफलं विदधाति काये नैरूज्यराज्यबललब्धिरतीव सौख्यम् ।।
बलपूर्णेऽब्दपे पूर्णं शुभं मध्ये च मध्यमम् ।
अधमे दु:खशोकारिभयानि विविधा: शुच: ।।

अर्थात् यदि वर्षेश ६।८।१२ इन स्थानों से अन्यत्र हों , उदित हो, वर्षप्रवेश और जन्मकाल में भी बलवान हों तो सभी फल उत्तम होते हैं । शरीर में आरोग्य, बल, पुष्टि, राज्यप्राप्ति और अत्यन्त सुख होता है ।

पूर्णबली सूर्य वर्षेश होने से, राज्यसुख, पुत्र, धन लाभ, वंश के अनुसार समुचित अधिकार, परिजन सुख, पूर्णयश, गृहसुख, अनेक प्रकार की प्रतिष्ठा, शत्रुनाश आदि फल होते हैं । यहॉ जन्मकाल के

ग्रहों के बलाबल समझते हुये फल विषय में विचार करना चाहिये। जैसे – जन्म और वर्ष समय में पूर्ण बली हो तो पूरा शुभफल होगा। यदि दोनों काल में एक में पूर्णबली, दूसरे में मध्यबली तो अपेक्षाकृत कम शुभ फल होता है। यदि, एक काल में पूर्णबली दूसरे काल में हीनबली हो, तो मध्यमफल, यदि दोनों समय में मध्यम बली ही हो, तो मध्यमफल ही कहना चाहिये। यदि एक काल में मध्यमबली दूसरे में क्षीणबली हो तो न्यून शुभफल कहना चाहिये। यदि दोनों काल में हीनबली ही हो, तो अत्यन्त न्यून शुभफल, प्रत्युत विशेष अशुभ ही फल कहना चाहिये। जैसे – शुभफल की मात्रा घटेगी, वैसे अशुभ फल की मात्रा बढ़ेगी यह समझना चाहिये।

मध्यम बली सूर्य का वर्षेश फल

स्यान्मध्यमे फलमिदं निखिलं तु मध्यं
स्वल्पं सुखं स्वजनतोऽपि विषादमाहुः।
स्थानच्युतिर्न च सुखं कृशता शरीरे
भीतिनृपान्मुथशिलो न शुभेन चेत्स्यात्॥

अर्थात् पॉच - दश के बीच बल वाले मध्यम बली सूर्य यदि वर्षेश हों तो यह जो पूर्णबली वर्षेश में सभी फल कहें गये है वे साधारण फल है ऐसा समझना चाहिये। और अल्प सुख, अपने परिजन से भी विवाद हो, और स्थान नाश, सुख नहीं , शरीर में दुर्बलता, राजा से भय हो, यदि शुभग्रह से वर्षेश का इत्थशाल नहीं होता हो तो ऐसा समझना चाहिये अर्थात् मध्यबली होता हुआ भी यदि शुभग्रह से इत्थशाल करता हो, तो शुभ फल ही कहना चाहिये।

हीनबली सूर्य का वर्षेश फल –

सूर्ये बलेन रहितेऽब्दपतौ विदेशयानं धनक्षयशुचोऽरिभयं च तन्द्राः।
लोकापवादभयमुग्ररूजोऽतिदुःखं पित्रादितोऽपि न सुखं सुतमित्रभीतिः॥

अर्थात् बलहीन पॉच से न्यून बल युक्त सूर्य यदि वर्षेश हो, तो परदेश गमन, धननाश,शोक, रोग, शत्रुभय, आलस्य , लोकापवाद, कठिन रोग, अत्यन्त क्लेश, पिता आदि प्रेमी परिजनों से भी सुख नहीं, प्रत्युत पुत्र दोस्त से भी डर होता है। ऐसा समझना चाहिये।

चन्द्र वर्षेश फल –

चन्द्रेऽब्दपे मुथशिलं येनासावब्दपोऽस्य चेत्।
कम्बूलमिन्दुना जन्म निशि वर्षे तदोत्तमम्॥

अर्थात् चन्द्रमा वर्षेश होकर जिस किसी ग्रह से इत्थशाल करे, वही वर्षेश होता है यह कह आये हैं, अब वह वर्षेश यदि चन्द्रमा से कबूल योग करता है और रात का जन्म हो तो वह वर्ष उत्तम होता है।

पूर्णबली चन्द्र का वर्षेश फल –

वीर्यान्विते शशिनि वित्तकलत्रपुत्र
मित्रालयस्य विविधं सुखमाहुरार्याः।
स्रग्गन्धमौक्तिकदुकूलसुखानुभूति

र्लाभ: कुलोचितपदस्रू नृपै: सखित्वम् ।।

पूर्णबली 10 से अधिक बल वाला चन्द्रमा यदि वर्षेश हो, तो धन , स्त्री – पुत्र मकान के अनेक प्रकार का सुख होगा ऐसा फल कहना चाहिये । माला, सुगन्धित द्रव्य, मोती , वस्त्र, सुखों का अनुभव हो । अपने कुलोचित पद का स्थानाधिकार का लाभ हो । राजाओं से मित्रता होगी । ऐसा फल कहना चाहिये ।

मध्यमबली चन्द्र का वर्षेश फल –

वर्षाधिपे शशिनि मध्यबले फलानि
मध्यान्यमूनि रिपुता सुतमित्रवर्गै: ।
स्थानान्तरे गतिरथो कृशता शरीरे
श्लेष्मोद्भवश्च यदि पापकृतेसराफ: ।।

भाषार्थ - यदि मध्यबली चन्द्रमा वर्षेश हो तो पूर्णबली चन्द्रमा वर्षेश होने से जो फल कहा है, वे सभी साधारण चाहिये और पुत्र मित्र वर्गों से भी शत्रुता, दूसरे जगह में जाना , शरीर में दुर्बलता होना आदि फल मुख्य रूप से होता है । यदि वैसा मध्यबली चन्द्रमा वर्षेश होकर पापग्रह से ईसराफ योग करता हो तो कफ का प्रकोप होता है ।

क्षीणबली चन्द्र का वर्षेश फल –

नष्टेऽब्दपदे शशिनि शीतकफादिरोगश्चौर्यादिभी: स्वजनविग्रहमप्युशन्ति ।
दूरे गति: सुतकलत्रसुखक्षयश्च स्यान्मृत्युतुल्यमतिहीनबले शशांके ।।

अर्थात् अस्तंगत चन्द्रमा वर्षेश होने से शीत, कफ, यक्ष्मा, खांसी, रोग होता है । स्वजनों से चोरी आदि का भय होता है । यदि अतिहीन बल चन्द्रमा वर्षेश हों तो दूर देश में जाना पड़ता है अर्थात् विदेश प्रवास , पुत्र , स्त्री का सुख नष्ट होता है तथा मृत्युतुल्य कष्ट होता है । ऐसा फल होगा, समझना चाहिये ।

इसी प्रकार सभी ग्रहों का वर्षेश फल विचार किया गया है ।

5.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि दिन में प्रवेश हो, तो मेष का सूर्य, वृष का शुक्र , मिथुन का बुध, कर्क का मंगल त्रिराशीश होते हैं । सिंहादि चार राशियों में दिन में वर्षप्रवेश होने से, मेषादि चार राशियों के जो रात्रि के त्रिराशीश, वे क्रम से त्रिराशीश होते हैं । मेषादि चार राशियों के जो दिन के त्रिराशीश वे सिंहादि चार राशियों के रात्रि में होते हैं । शेष धनु, मकर, कुम्भ, मीन इन राशियों के दिन या रात्रि में क्रम से शनि, मंगल, गुरू और चन्द्रमा त्रिराशीश होते हैं । दृष्टि व बलानुसार निर्णय न हो सके तो कुछ आचार्य मुन्थेश को व कुछ आचार्य त्रैराशीश को वर्षेश मानने का पक्ष रखते है । त्रैराशिश को वर्षेश मानने पर एक समस्या और उठ खड़ी होती है । उस स्थिति में चन्द्रमा भी वर्षेश हो सकता है । प्राय: आचार्य चन्द्रमा को वर्षेश मानने के पक्ष में नहीं है । चन्द्रमा को

यदि वर्षेश प्राप्त हो, जैसा कि रात्रि के वर्षप्रवेश में कर्क राशिस्थ चन्द्रमा होने पर तो चन्द्रमा भी पंचाधिकारियों में स्थान पा जाएगा । तब चन्द्रमा जिस ग्रह से इत्थशाल करे, उसे वर्षेश मानना चाहिए। इसी प्रकार वर्षेश का बोध करना चाहिए।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

त्रिराशीश – तीन राशियों का स्वामी

सित - शुक्र

कुज – मंगल

अर्कि – शनि

वर्षप्रवेश - वर्ष का प्रवेश

सिंहादि - सिंह राशि आदि में हो जिसके

पंचाधिकारी – वर्षेश निर्णयार्थ

वर्षलग्नपति - वर्ष लग्न का अधिपति

जन्मलग्नपति - जन्म लग्न का अधिपति

मुथहेश – मुथहा का स्वामी

ससन्धि – सन्धि सहित

खेटः - ग्रह

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. ख

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वर्षेश से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।

2. ताजिक शास्त्र कथित वर्षेश निर्णय कीजिये ।

3. उदाहरण द्वारा वर्षेश को समझाइये ।

इकाई – 6 मुद्दा दशा साधन

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मुद्दा दशा परिचय

6.4 मुद्दा दशा साधन

अभ्यास प्रश्न -

6.5 सारांशः

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 ज्योतिष तृतीय वर्ष के प्रथम पत्र वर्षफल विचार के षष्ठ इकाई '**मुद्दा दशा साधन**'' से सम्बन्धित है। ताजिक शास्त्र के प्रमाणित ग्रन्थ ताजिकनीलकण्ठी में मुद्दा दशा का विचार नहीं किया गया है।

मुद्दा दशा भी ताजिक शास्त्र का ही एक भाग है जिसका साधन विंशोत्तरी दशा के समान ही होता है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने लग्नस्पष्ट, वर्षेश निर्णय का अध्ययन किया है, आइये अब इस इकाई में मुद्दा दशा को समझते है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. मुद्दा से क्या तात्पर्य है।
2. मुद्दा दशा का साधन कैसे होता है ।
3. ताजिकोक्त मुद्दा क्या है ।
4. मुद्दा दशा साधन का ताजिक में क्या उपयोग है ।

6.3 मुद्दा दशा साधन

वर्ष सम्बन्धी बहुप्रचलित व प्रामाणिक ग्रन्थ 'ताजिक नीलकण्ठी' में मुद्दा दशा का कहीं भी उल्लेख नहीं है। मूल ग्रन्थ में इसका विवेचन नहीं हुआ है। वहॉ हीनांश पात्यंश दशा बताई गई है। लेकिन आजकल क्या प्राचीन समय से विंशोत्तरी दशा पद्धति पर आधारित वर्ष में मुद्दा दशा या मुग्धा दशा या गौरी दशा सर्वत्र प्रचलित है। यहॉ उसकी विधि बताई जा रही है। आजकल समस्त वर्ष दशा फल मुद्दा दशा पर ही आधारित है।

मुद्दा दशा साधन – कृत्तिका से पूर्वाफाल्गुनी तक के 9-9 नक्षत्रों में सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु , वृहस्पति, शनि, बुध, केतु एवं शुक्र वाले आधार से ही विंशोत्तरी के अनुसार आवृत्तियॉ दशेशों की होती है।

अश्विनी से आरंभ करके जन्म – नक्षत्र की संख्या में आयु के बीते वर्ष या गत वर्ष जोड़े। उसमें से 2 घटा कर 9 का भागदेने पर शेष उपरोक्त क्रम से दशेश होता है। इसी बात को इस श्लोक में कहा गया है –

जन्मर्क्षसंख्यासहितागताब्दैः नेत्रोनिता नन्दहृतावशेषात्।

आचंकुराजीशबुकेशु पूर्वा मुद्दादशा स्यात् किल वर्ष वेशे ।।

उदाहरणार्थ – माना कि बालक का जन्म नक्षत्र मृगशिरा है। इसकी संख्या अश्विनी से गणना करने पर 5 आया है। इसमें गत वर्ष 10 जोड़कर आये 15 में से 2 घटाकर शेष 13 में 9 का भाग दिया तो शेष बचा। अत: चौथी राहु की दशा वर्ष प्रवेश के समय विद्यमान हुई।

दशा की अवधि – विंशोत्तरी दशा में ग्रहों के जो दशा वर्ष हैं, उस वर्ष संख्या को तीन से गुणा करने पर जो संख्या मिले, उतने ही दिन की मुद्दा दशा होती है। जैसे सूर्य की विंशोत्तरी दशा 6 वर्ष की है तो 6 × 3 = 18 दिन की सूर्य की मुद्दा रहेगी। इसी प्रकार अन्य ग्रहों की दशा के दिन होते हैं।

ग्रह	**विंशोत्तरी वर्ष**	**मुद्दा दशा दिन**
सूर्य	6	6 × 3 = 18
चन्द्र	10	10 × 3 = 30
मंगल	7	7 × 3 = 21
राहु	18	18 × 3 = 54
गुरू	16	16 × 3 = 48
शनि	19	19 × 3 = 57
बुध	17	17 × 3 = 51
केतु	7	7 × 3 = 21
शुक्र	20	20 × 3 = 60
योग	**120 वर्ष**	360 दिन (सौर)

इसका विंशोत्तरी दशा की तरह ही मुद्दशा दशा चक्र लिखना चाहिये। मुक्तावली के अनुसार मुद्दा दशा में भी विंशोत्तरी की तरह वर्षेष्ट से भयात, भभोग वर्ष प्रवेश नक्षत्र का जानकर उससे जन्मवत् मुद्दा दशा में भुक्त भोग्य भी निकालने के पक्ष में है, लेकिन कई आचार्यों का मत यही है कि वर्षप्रवेश में पूरी मुद्दा दशा, बिना भुक्त – भोग्य साधन के ही लगाई जाये।

मुद्दा दशा में अन्तर्दशा - सूक्ष्मता के आग्रह पर मुद्दा दशा में अन्तर्दशा भी विंशोत्तरी आदि की तरह आता है। 360 दिन में सूर्य की दशा 18 दिन तो 18 दिन में सूर्यान्तर कितना ? इस प्रकार अनुपात करने पर -

$$\frac{18 \times 18}{360}$$

$$= \frac{18}{20} \text{ दिन या } \frac{9}{10} \text{ दिन या 54 घटी सूर्य मुद्दा दशा में सूर्य की अन्तर्दशा रहेगी।}$$

लेकिन अन्तर्दशा दिन घटी पलों या दिन घंटा, मिनटों में रहेगी। तब चक्र में तारीख के साथ – साथ वर्षप्रवेश का घंटा मिनट भी लिखना चाहिये – यथा –

सूर्य मुद्दान्तर्दशा –

दशा	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र
दिन	0	1	1	2	2	2	2	1	3
घटी	54	30	3	42	24	51	33	3	0
पल	0	0	0	0	0	0	0	0	0

चन्द्र मुद्दान्तर्दशा

दशा	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य
दिन	2	1	4	4	4	4	1	5	1
घटी	30	45	30	0	45	15	45	0	30
पल	0	0	0	0	0	0	0	0	0

मंगल मुद्दान्तर्दशा

दशा	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र
दिन	1	3	2	3	2	1	3	1	1
घटी	13	9	48	19	58	13	30	3	45
पल	30	0	0	30	30	30	0	0	0

राहु मुद्दान्तर्दशा

दशा	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल
दिन	8	7	8	7	3	9	2	4	3
घटी	6	12	33	31	9	0	42	30	9
पल	0	0	0	0	0	0	0	0	0

गुरू मुद्दान्तर्दशा

दशा	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु
दिन	6	7	6	2	8	2	4	2	7
घटी	24	36	48	48	0	24	0	48	12
पल	0	0	0	0	0	0	0	0	0

शनि मुद्दान्तर्दशा

दशा	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू
दिन	9	8	3	9	2	4	3	8	0
घटी	1	4	19	30	51	45	19	33	36
पल	30	30	30	0	0	0	30	0	0

बुध मुद्दान्तर्दशा

दशा	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि
दिन	7	2	8	2	4	2	7	6	8
घटी	13	58	30	33	15	58	39	48	4
पल	30	30	0	0	0	30	0	0	30

केतु मुद्दान्तर्दशा

दशा	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध
दिन	1	3	1	1	1	3	2	3	2
घटी	13	30	3	45	13	9	48	19	58
पल	30	0	0	0	30	0	0	0	30

शुक्र मुद्दान्तर्दशा

दशा	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु
दिन	10	3	5	3	9	8	9	8	3
घटी	0	0	0	30	0	0	30	30	30
पल	0	0	0	0	0	0	0	0	0

अभ्यास प्रश्न

1. मुद्दा दशा को भी कहते है –

   क. विंशोत्तरी दशा ख. अष्टोत्तरी दशा ग. मुग्धा दशा घ. कोई नहीं

2. राहु का मुद्दा दशा दिन है –

   क. 21 ख. 54 ग. 57 घ. 51

3. नेत्र से क्या तात्पर्य है –

   क. 2 ख. 3 ग. 4 घ. 5

4. सम्प्रति वर्ष दशा फल आधारित है –

   क. योगिनी दशा पर ख. अष्टोत्तरी दशा पर ग. मुद्दा दशा पर घ. कोई नहीं

5. शुक्र का मुद्दा दशा दिन है –

क. 21 ख. 51 ग. 57 घ. 60

6.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वर्ष सम्बन्धी बहुप्रचलित व प्रामाणिक ग्रन्थ 'ताजिक नीलकण्ठी' में मुद्दा दशा का कहीं भी उल्लेख नहीं है। मूल ग्रन्थ में इसका विवेचन नहीं हुआ है। वहॉ हीनांश पात्यंश दशा बताई गई है। लेकिन आजकल क्या प्राचीन समय से विंशोत्तरी दशा पद्धति पर आधारित वर्ष में मुद्दा दशा या मुग्धा दशा या गौरी दशा सर्वत्र प्रचलित है। यहॉ उसकी विधि बताई जा रही है। आजकल समस्त वर्ष दशा फल मुद्दा दशा पर ही आधारित है कृत्तिका से पूर्वाफाल्गुनी तक के 9-9 नक्षत्रों में सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु , वृहस्पित, शनि, बुध, केतु एवं शुक्र वाले आधार से ही विंशोत्तरी के अनुसार आवृत्तियॉ दशेशों की होती है।

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

मुद्दा – ताजिकोक्त दशा
जन्मर्क्ष - जन्म समय का नक्षत्र
गताब्द – गत वर्ष
नेत्रोनिता – 2 संख्या घटाना
मुक्तावली - टिका ग्रन्थ
अन्तर्दशा - दशा के अन्तर दशा
वर्षेष्ट - अभीष्ट वर्ष
विंशोत्तरी - 120 वर्ष की दशा

सूक्ष्मता – छोटा रूप

आग्रह – विनय पूर्वक किया गया निवेदन

वर्षप्रवेश - वर्ष का प्रवेश

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ग
5. घ

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मुद्दा से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. मुद्दा दशा साधन कीजिये।
3. मुद्दा दशा अन्तर्दशा को स्पष्ट कीजिये ।

खण्ड - 2
वर्ष फल विचार

इकाई – 1 षोडश योग

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 षोडश योग

अभ्यास प्रश्न

1.4 सारांशः

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई ज्योतिष तृतीय वर्ष प्रथम पत्र के द्वितीय खण्ड का प्रथम इकाई **'षोडश योग'** से सम्बन्धित है। ताजिकशास्त्र कथित षोडश योगो के आधार पर वर्षफल विचार किया जाता है।

षोडश योग से तात्पर्य ताजिकनीलकण्ठी में कहे गये इकबाल आदि १६ प्रकार के योग है। षोडशयोगाध्याय नाम से एक स्वतन्त्र अध्याय ताजिकनीलकण्ठी नामक ग्रन्थ में कथित है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वर्षप्रवेश,वर्षेश निर्णय, मुद्दादि का अध्ययन कर लिया है, आइये अब इस इकाई में षोडश योग का अध्ययन करते है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. षोडश योग क्या है।
2. षोडश योगों के नाम क्या है ।
3. षोडश योग का साधन कैसे किया जाता है ।
4. षोडश योग का ताजिक शास्त्र में क्या उपयोग है ।
5. वर्षफल विचार में षोडश योग का क्या महत्व है।

1.3 षोडश योग

वर्षपत्र निर्मित करने हेतु ग्रहभाव स्पष्ट, लग्न कुण्डली व पंचाधिकारी निर्णय करने के पश्चात् उसमें मुद्दा दशा लिखा जाता है। उसी क्रम में वर्ष लग्न से विशेष फल निर्णय करने के लिये ताजिक शास्त्र में 'षोडश योग' कहे गये है –

प्रागिक्कवालो पर इन्दुवारस्तथेत्थशालोऽपर ईसराफः।

नक्तं ततः स्याद्यमया मणाऊ कब्बूलतो गैरिकबूलमुक्तम्॥

खल्लासरं रद्दमथो दुफालिकुत्थं च दुत्थोत्थदिवीरनामा।

तम्बीरकुत्थौ दुरफश्च योगाः स्युः षोडशैषां कथयामि लक्ष्म॥

इस श्लोक में षोडश योगों का नाम कहा गया है। यथा – इकवाल, इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, नक्त, यमया, मणाऊ, कब्बूल, गैरिकबूल, खल्लासर, रद्द, दुफालिकुत्थ, दुत्थोत्थादि, तम्बीर, कुत्थ, दुरफ। इन षोडश योगों में इक्कवाल, इन्दुवार एवं इत्थशाल ये तीन योग मुख्य हैं। इनके ही सम्मिश्रण से प्रायः शेष योग बनते हैं।

इक्कवाल इन्दुवार योग –

चेत्कण्टके पणफरे च खगा: समस्ता: ।

स्यादिक्कबाल इति राज्यसुखाप्तिहेतु: ।।

आपोक्लिमे यदि खगा: स किलेन्दुवारो

न स्याच्छुभ: क्व च न ताजिकशास्त्रगीत: ।।

अर्थ – यदि समस्त ग्रह लग्न से १,४,७,१० या २,५,८,११ इन स्थानों में हों, तो इक्कवाल योग होता है, वह राज्य, सुख के प्राप्ति का कारण होता है या दूसरे शब्दों में वर्षकुण्डली में सभी ग्रह केन्द्र और पणफर स्थान में होने पर ही इक्कवाल योग होता है। यह समृद्धि व प्रतिष्ठादायक होता है।

समस्त ग्रहों की स्थिति आपोक्लिम (३,६,९,१२) स्थानों में होने पर इन्दुवार योग होता है। यह योग अशुभ होता है।

केन्द्रादिकों का अध्ययन आपने द्वितीय वर्ष में प्राप्त कर लिया है, तथापि संक्षेप में आपको बताया जा रहा है –

केन्द्रचतुष्टयकण्टकसंज्ञा लग्नास्तदशमचतुर्थानाम् ।

तस्मात् परत: पणफरमापोक्लीमं च तत्परत: ।।

१,४,७,१० वें स्थान को **केन्द्र** , २,५,८,११ वें स्थान को **पणफर** एवं ३,६,९,१२ वें स्थान को **आपोक्लिम** कहते है।

उदाहरण –

उत्तम इक्कवाल योग

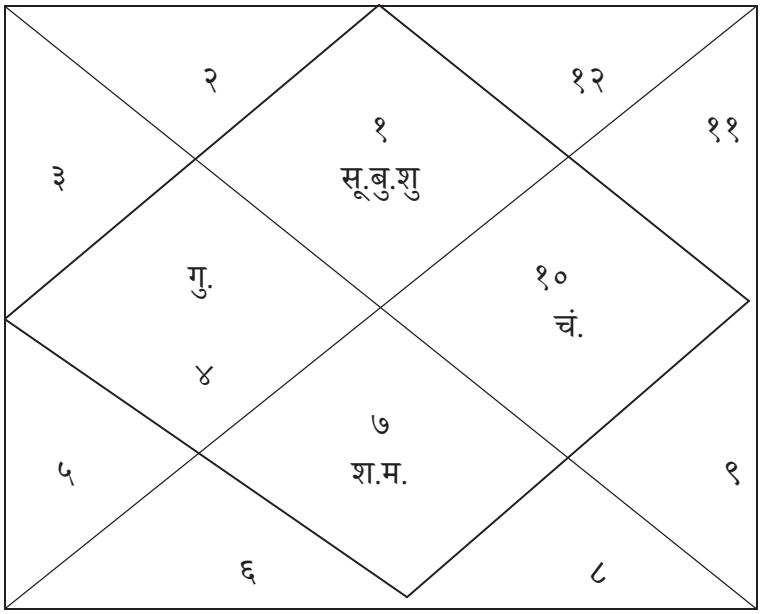

मध्यम इक्कवाल योग

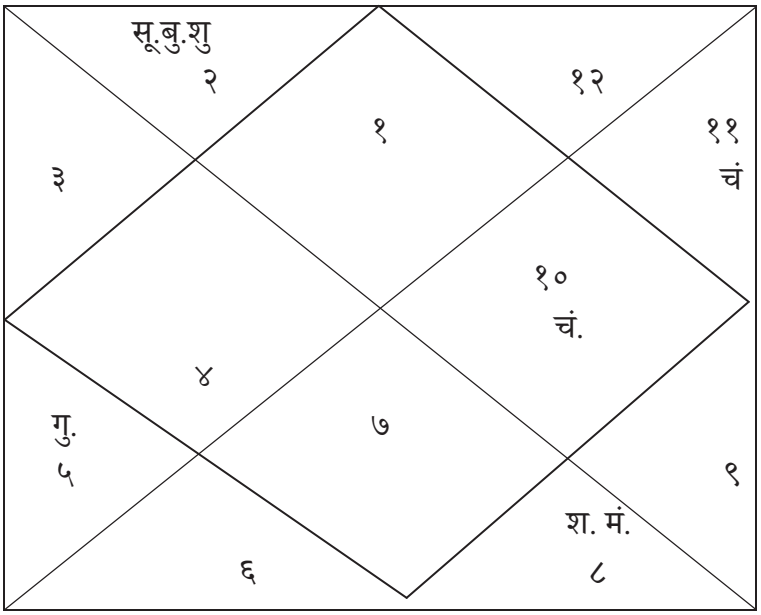

इन्दुवार योग –

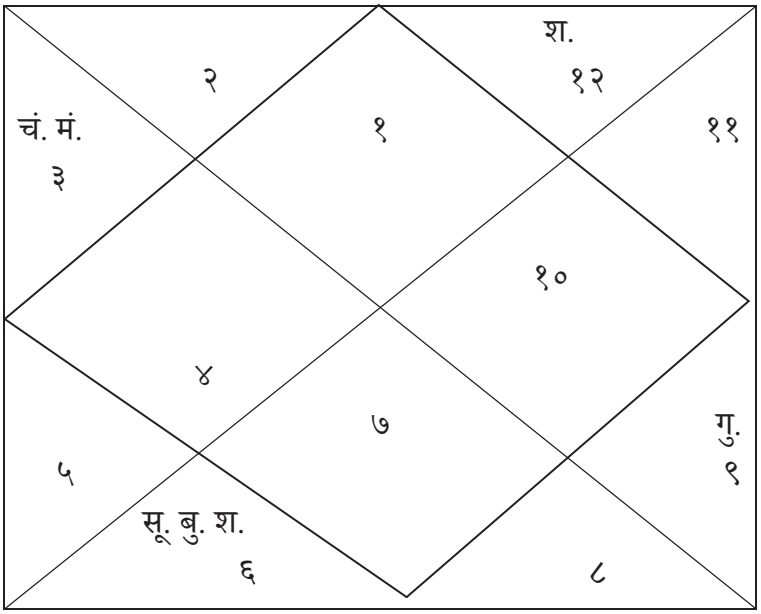

इत्थशाल योग –

शीघ्रोऽल्पभागैर्घनभागमन्देऽग्रस्थे निजं तेज उपाददीत।

स्यादित्थशालोऽयमथो विलिप्ता लिप्तार्धहीनो यदि पूर्णमेतत्॥

इत्थशाल योग किन्हीं दो दृष्टि कारक ग्रहों में देखा जाता है। एक ग्रह मन्द गति से चलने वाला व दूसरा अपेक्षाकृत तीव्र चलने वाला होगा। चन्द्रमा, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, गुरू एवं शनि ये क्रमश: उत्तरोत्तर मन्द गति वाले ग्रह हैं।

इत्थशाल वास्तव में परस्पर देने का ही नाम है। यह तभी सम्भव होता है जब विचारणीय ग्रह परस्पर दृष्टि रखते हों या एक ही राशि में स्थित हों। ताजिक शास्त्र के अनुसार १-७ स्थान में अशुभ दृष्टि होती है।

जब शीघ्र गति ग्रह मन्द गति ग्रह से पीछे हो, अर्थात् अलग राशियों में होने पर भी परस्पर दृष्टि होने से जब शीघ्रगति ग्रह के भुक्तांश कम हों व मन्दगति के अधिक हों तो अल्प समय में ही शीघ्रगति ग्रह मन्दगति के तुल्य या दीप्तांशों के भीतर पहुॅच कर अपना प्रभाव मन्दगति ग्रह को देगा। वही इत्थशाल योग है।

यदि दोनों ग्रहों में दीप्तांशों के बराबर अन्तर हो तो इत्थशाल योग है। अर्थात् इत्थशाल योग चल रहा है।

यदि दोनों ग्रहों में से शीघ्रगति ग्रह केवल ३० विकला पीछे हो तो पूर्ण इत्थशाल होता है। अर्थात् इत्थशाल पूरा हो चुका है, अत: योग शत प्रतिशत फलदायी है। यदि राशि के अन्तिम अंशों में शीघ्रगति ग्रह व अगली राशि में स्थित मन्द गति ग्रह दीप्तांशों के भीतर हो तो भी इत्थशाल योग होता है।

भविष्यत् इत्थशाल तब होता है जब शीघ्रगति ग्रह मन्दगति ग्रह से पीछे हो और दीप्तांशों के बीच में प्रवेश करने ही जा रहा हो।

एतदर्थ शीघ्रगति ग्रह स्पष्ट में उसके दीप्तांशों को जोड़कर देखें। यदि वह योगफल दोनों ग्रहों के दीप्तांशों के योगफल के आधे पर पड़े तो इत्थशाल होता है।

इस तरह इत्थशाल से तीनों कालों का फल विद्वानों ने प्रश्न एवं वर्ष में देखना बताया है।

जिस भाव से सम्बन्धित प्रश्न या फल विचार करना अभीष्ट हो, वह भाव **'कार्य स्थान'** एवं उसका स्वामी **'कार्येश'** कहलाता है।

वर्ष लग्नेश या वर्षेश का जिस कार्येश से इत्थशाल वर्ष पत्र में होता हो, वह कार्य उस वर्ष में अवश्य फलीभूत होता है, यदि जन्म पत्र में भी ऐसी सम्भावना हो।

६,८,१२ भावेशों में इत्थशाल नहीं होना चाहिए, वह अशुभ होता है। जहॉ इत्थशाल हो वहॉ फल अवश्य होगा ।

इत्थशाल योग का लक्षण – जिस किसी दो ग्रहों में इत्थशाल होना विचारना हैं, उन में जो अधिक गति वाला ग्रह हो वह शीघ्रगति ग्रह कहलाता है। जो न्यून गति वाला ग्रह हो, वह मन्दगति

ग्रह कहलाता है। वहॉ यदि मन्दगति ग्रह से शीघ्र गति ग्रह न्यून हो, परस्पर दृष्टि सम्भव हो और दोनों के अन्तर करने से अंशस्थान में दीप्तांशा से न्यून संख्या हो, तो इत्थशाल योग होता है।

एक राशि में या भिन्न - भिन्न राशियों में भी लग्नाधीश, कार्याधीश रहें और दीप्तांशा के अन्दर रहकर परस्पर दृष्टि सम्बन्ध होता हो तो इत्थशाल योग होता है।

इत्थशाल योग का तत्व –

जब दृष्टि संयोग सम्बन्ध पूर्वक ग्रहों के संयोग ही को इत्थशाल कहा है, तो अधिक चलने वाला ग्रह पीछे हो, अल्प गति वाला ग्रह आगे हो , दोनों यदि मार्गी हो इस दशा में पीछे से तेज चलने वाला ग्रह, धीरे – धीरे चलते हुए आगे के मन्द गति ग्रह को अवश्य कभी न कभी पकड़ेगा ही। जैसे वर्तमान काल में किसी एक स्थान से एक कोस पर जब कोई एक आदमी जा रहा है, जो धीरे – 2 चलता है। और दूसरा आदमी तभी उसी स्थान से उससे अधिक वेग से चला, तो आगे वाले को पीछे वाला रास्ते में अवश्य पकड़ेगा। यहॉ लग्नेश हुआ कार्य करने वाला व्यक्ति, कार्येश हुआ उस कार्य का स्वामी, अत: उन दोनों की मेल होने से काम होता है।

इत्थशाल योग का उदाहरण –

यथा राज्य लाभ प्रश्न में वृश्चिक लग्न है, तो लग्नेश मंगल, कार्येश दशमेश सूर्य हुआ। लग्नेश लग्न में १६ अंश से हो। कार्येश सूर्य सिंह में दो अंश से हो, तो यहॉ सूर्य और मंगल में शीघ्रगतिग्रह सूर्य पीछे है, मन्दगति ग्रह मंगल आगे है, दोनों का अंशान्तर १४ दीप्तांश के अन्दर हुआ, परस्पर दृष्टि पड़ रही है, इसलिये इत्थशाल योग घटित है। **उदाहरणार्थ –**

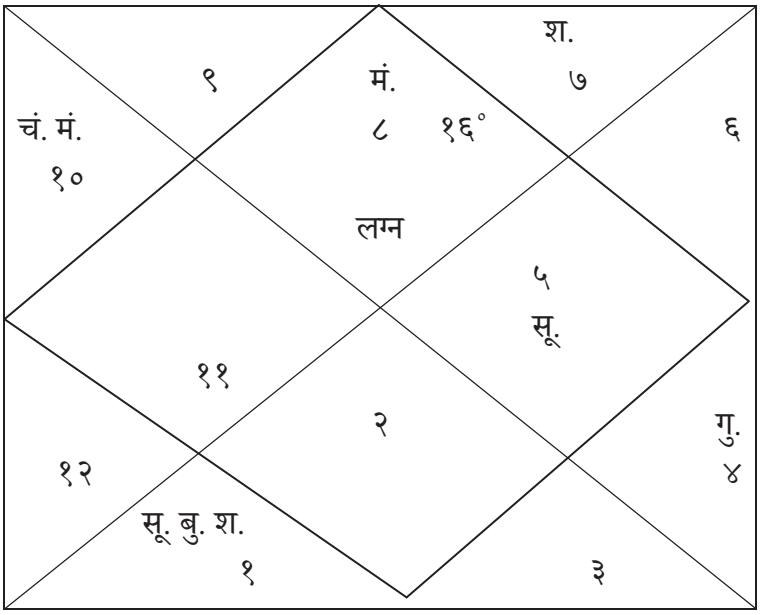

मुथशिल योग –

शीघ्रो यदा भान्त्यलवस्थितः सन् मन्देऽग्रभस्थे निद्धाति तेजः ।
स्यादित्थशालोऽयमथैष शीघ्रदीप्तांशकांशैरिह मन्दपृष्ठे ।।
तदा भविष्यद्गणनायमित्थशालं त्रिधैवं मुथशीलमाहुः ।
लग्नेशकार्याधिकपयोर्यथैष योगस्तथा कार्यमुशन्ति सन्तः ।।

किसी राशि के अन्तिम अंश ३० में वर्तमान शीघ्रगतिग्रह यदि अग्रिम राशि में स्थित मन्दगतिग्रह पर अपना तेज रखता हो, अर्थात् शीघ्रगतिग्रह से आगे दीप्तांशा के अन्दर ही मन्दगतिग्रह हो तो इत्थशाल योग होता है। यह समान्य लक्षण है।

यदि शीघ्रगतिग्रह, मन्दगति ग्रह से पीछे दीप्तांशा से अधिक अंश के अन्तर पर हो जैसे चन्द्रमा २।२९।५८।०२ बुध ३।१४।२५।४० यहॉ चन्द्रमा से आगे चन्द्रमा के दीप्तांश १२ से अधिक अन्तर पर बुध है, तो अवश्य आगे मुथशील होने वाला है। यह भविष्यत इत्थशाल का योग है। इस प्रकार तीन प्रकार के इत्थशाल कहा जाता है। जिस प्रकार लग्नाधीश का योग हो उसी प्रकार कार्य कहना चाहिये अर्थात् वर्तमान योग में वर्तमान कार्य सिद्धि। पूर्णेत्थशाल में कार्य पूर्ण होंगे, ऐसा कहना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न -

1. ताजिक शास्त्र में प्रमुख योगों की संख्या कितनी है।
   क. दशम ख. द्वादश ग. षोडश घ. विंशति
2. यदि समस्त ग्रह लग्न से १,४,७,१० भावों में स्थित हो तो –
   क. इन्दुवार योग होता है ।
   ख. इक्कवाल योग होता है।
   ग. ईसराफ योग होता है।
   घ. नक्त योग होता है।
3. ३,६,९,१२ वें स्थान को कहते है –
   क. केन्द्र ख. पणफर ग. आपोक्लिम घ. कोई नहीं
4. बुध - शुक्र में अपेक्षाकृत मन्दगति वाला ग्रह है –
   क. शुक्र ख. बुध ग. दोनों घ. इनमें से कोई नहीं
5. यदि शीघ्र और मन्दगति वाले ग्रहों में दीप्तांशों के बराबर अन्तर हो, तो होता है –
   क. इत्थशाल योग ख. मणऊ योग ग. कबूल योग घ. खल्लासर योग
6. इत्थशाल योग कितने प्रकार के होते है –
   क. 2 ख. 3 ग. 4 घ.
7. ताजिकनीलकण्ठी के रचयिता है –
   क. भास्कराचार्य ख. कमलाकर भट्ट ग. नीलकण्ठ दैवज्ञ घ. कोई नहीं

ईसराफ व कम्बूल योग –

शीघ्रो यदा मन्दगतेरथैकमष्यंशमभ्येति तदेसराफ: ।
कार्यक्षयो मूसरिफे खलोत्थे सौम्ये न हिल्लाजमतेन चिन्त्यम् ।।

यदि शीघ्रगति ग्रह मन्दगति ग्रह से १ अंश भी आगे हो गया हो तो इसका योग ईसराफ या व्यतीत इत्थशाल होता है, यह कार्यनाशक होता है ।

आचार्यों के मतानुसार कम से कम ६०' या १^0 का अन्तर होने पर ही व्यतीत इत्थशाल मानना चाहिए। इसके लिए अंश कलाओं का अन्तर करके देखें। केवल गतांशों से नहीं देखना चाहिए।

यदि इत्थशाल कारक दोनों ग्रहों के साथ या किसी एक के साथ चन्द्रमा भी इत्थशाल करे तो यह योग कम्बूल योग कहलाता है। एक प्रकार से ये सभी इत्थशाल के ही रूपान्तर हैं। तीनों ग्रहों की शुभ राशि स्थिति से यह 'उत्तम कम्बूल' व नीचादि गत होने से अधम कम्बूल कहा जाता है।

यदि इत्थशाल कारक ग्रह निर्बल, नीचास्तंगत या शत्रु क्षेत्री आदि हों तो इत्थशाल का फल नहीं मिलता है।

नक्त व यमय योग –

लग्नेशकार्याधिपयोर्न दृश्टिर्मिथोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्र: ।
आदाय तेजो यदि पृष्ठसंस्थान्नयसेदथान्यत्र हि नक्तमेतत् ।।
अन्त:स्थितो मन्दगतिस्तु पश्येद्दीप्तांशकैर्द्वावथ शीघ्रतस्तु ।
नीत्वा महो यच्छति मन्दगाय कार्यस्य सिद्धयै यमय: प्रदिष्ट: ।।

यदि दो विचारणीय ग्रहों लग्नेश व कार्येश में परस्पर दृष्टि न हो, लेकिन उन दोनों के बीच में स्थित कोई अन्य शीघ्रगति ग्रह उनसे इत्थशाल कर रहा हो या दीप्तांशों के भीतर हो तो वह मध्यस्थ ग्रह पिछले शीघ्रगति ग्रह से प्रभाव लेकर आगामी मन्द गति ग्रह को देता है। इसका नाम 'नक्त योग है। यह प्राय: शुभ माना जाता है।

इसी प्रकार दोनों विचारणीय ग्रहों के बीच में दृष्टि न रहने पर बीच में कोई मन्दगति ग्रह दीप्तांशों के भीतर हो तो भी अपने आगे पीछे वाले ग्रहों में परस्पर सम्बन्ध बना देता है तथा शुभ फलदायक माना जाता है। इसका नाम यमय योग है।

उदाहरण –

राज्याग्निपृच्छातुललग्ननाथो मेषे सितस्त्वष्टिलवैर्वृषस्थ: ।
चन्द्रो रसांशैर्यदि राज्यनाथो दृष्टिस्तयोर्नास्ति गुरूस्तु मन्द: ।।
दिगंशकै: कर्कगतस्तु पश्यन्नुभौ महो दीप्तलवै: स चान्द्रम् ।
ददौ सितायेति पदस्रू लाभोऽमात्येन भावीति विमृश्य वाच्यम् ।।

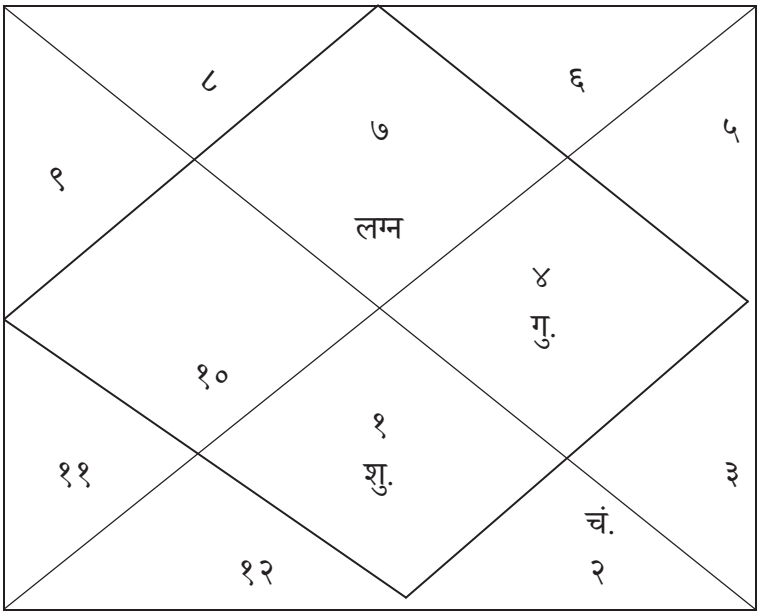

चक्र के राज्य लाभ प्रश्न में यथा तुला लग्न है लग्न का स्वामी शुक्र सोलह अंश से मेष में है। राज्य का विचार दशमभाव से होता है, इसलिये तुला से दशम कर्क हुआ, अत: छ: अंश से वृष राशि में है, इन दोनों में एक से दूसरा दूसरे बारहवें होने से दृष्टि नहीं है। और इन दोनों से मन्द गति ग्रह गुरू दश अंश से कर्क राशि में होकर, लग्नेश कार्येश को देखता हुआ चन्द्रमा का तेज दीप्तांशा से लेकर शुक को देता है। इसलिये मन्त्री के द्वारा पद का लाभ भावी है, यह विचार कर कहना चाहिये। यह यमया योग का उदाहरण है।

मणऊ योग –

वक्र: शनिर्वा यदि शीघ्रखेटात्पश्चात्पुरस्तिष्ठिति तुर्यदृष्टया।
एकर्क्षसप्तर्क्षभुवा दृशा वा पश्यन्नथांशैरधिकोनकैश्चेत्॥
तेजो हरेत्कार्यपदेत्थशाली स्थितोऽपि वाऽसो मणऊ शुभो न।

मणऊ योग एक प्रकार से इत्थशाल का भंग योग है। दो इत्थशाल कर्ता ग्रहों के उपर यदि शनि या मंगल की शत्रुदृष्टि हो अर्थात् इत्थशाल कारकों से केन्द्र में मंगल या शनि हो और दीप्तांशों के भीतर हो तो कार्य का नाश होता है। इस योग का नाम 'मणऊ' है। यह कार्यनाशक है।

उदाहरण –

स्त्रीलाभपृच्छा तनुरस्ति कन्याऽत्र ज्ञो दिगंशैस्तिथिभि: सुरेज्य:।
कलत्रग: खेऽवनिजो भवांशै: पूर्वे बुधो भौमहृतस्ततेजा:॥
जीवेन पश्चान्मिलतीति लाभो नार्यास्तु नो पृष्ठगतेऽथवाऽस्मिन्॥

स्त्री लाभ के प्रश्न में जैसे कन्या लग्न है उसका स्वामी बुध, उसी राशि में दश अंश का हो और यहॉ

कार्याधीश गुरू १५ अंश से सातवें मीन राशि में हो दोनों को परस्पर शत्रु दृष्टि है और मंगल ११ अंश से दशवें मिथुन राशि में हों, तो पहले मंगल से हरण हो गया है तेज ऐसे जो बुध वह वृहस्पति से मिलते हैं अर्थात् वृहस्पति से बुध शीघ्रगतिग्रह है, इसलिये मार्गीबुध अवश्य वृहस्पति से मिलेंगे इसलिये स्त्री का लाभ नहीं होगा ऐसा समझना चाहिये।

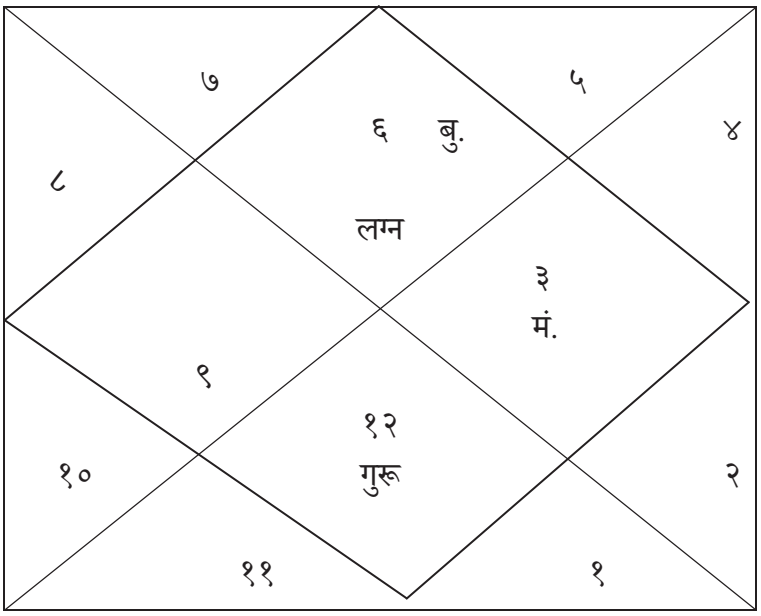

गैर कम्बूल –

यदीन्दुः स्वगृहोच्चस्थस्तादृशौ लग्नकार्यपौ।
इत्थशाली कबूलं तदुत्तमोत्तममुच्यते॥
लग्नकार्येशयोरित्थशाले शून्याध्वगः शशी।
उच्चादिपदशून्यत्वान्नेत्थशालोऽस्य केनचित्॥
यद्यन्यर्क्षे प्रविश्यैष स्वर्क्षाच्चस्थेत्थशालवान्।
गैरिकम्बूलमेत्त पदोनेनाशुभं स्मृतम्॥

इत्थशाल करने वाले ग्रहों में से किसी एक पर या दोनों पर चन्द्रमा का भी इत्थशाल हो तो कम्बूल योग होता है। इसी से मिलता जुलता यह योग है। जब चन्द्रमा इत्थशाल कारकों से स्वयं इत्थशाल न करता हो तथा चन्द्रमा स्वक्षेत्रोच्चादि में या स्वनीचशत्रुक्षेत्र में भी न हो, ऐसी स्थिति में चन्द्रमा यदि राशि के अन्तिम अंश में विद्यमान हो, अर्थात् अगली राशि में प्रवेश करना ही चाहता हो तथा उस अगली राशि में स्थित बलवान ग्रह से चन्द्रमा इत्थशाल करे तो गैर कम्बूल योग होता है। यह कार्यसाधक होता है।

मध्यमोत्तम कबूल का उदाहरण –

स्वीयहद्दाद्रेकाणाङ्कभागस्थेनेत्थशालतः।

मध्यमोत्तमकम्बूलं हीनाधिकृतिनोत्तमम्॥

चन्द्रमा अपने गृह में उच्च का हो तथा निज हद्दा द्रेष्काण नवमांश में स्थित लग्नेश या कार्येश से इत्थशाल करता हो तो उत्तमपक्ष का मध्यम कबूल होता है। यदि वैसे ही चन्द्रमा अपने अधिकार से हीन लग्नेश या कार्येश के साथ इत्थशाल करता हो, तो केवल उत्तम कबूल होता है।

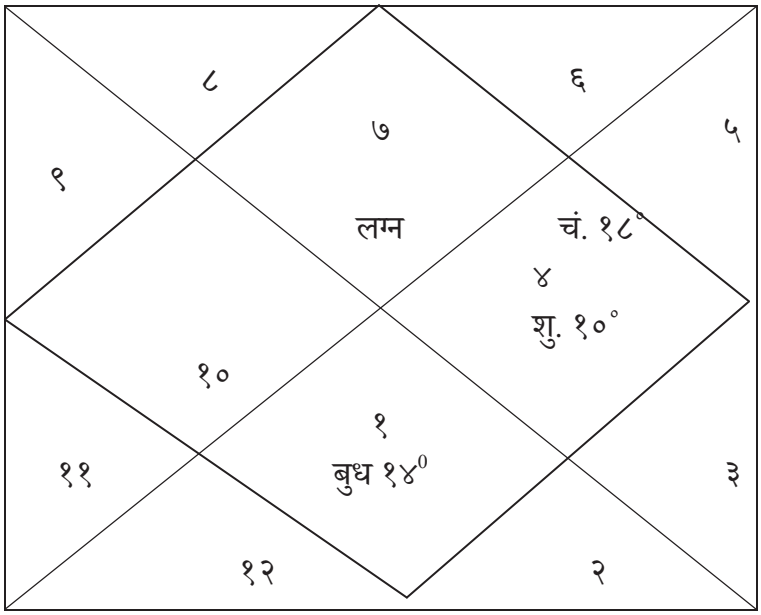

चक्र में तुला लग्न है, लग्नेश शुक्र कर्क में १० अंश में अपनी हद्दा में है। भाग्येश बुध मेष में १४ अंश में है, इन दोनों में इत्थशाल होता है। कर्मेश चन्द्रमा कर्क में १८ अंश से रहकर दोनों लग्नेश कर्मेश से इत्थशाल योग करता है, इसलिये उत्तम पक्ष का मध्यम कबूल हुआ।

नीचे के चक्र में उत्तम कबूल योग का उदाहरण भी आप समझ सकते है –

मिथुन लग्न की कुण्डली है, लग्नेश बुध समगृही में है। दशमेश गुरू भी समगृही कन्या में है। चन्द्रमा वृष में है इन दोनों के इत्थशाल होने से उत्तम कबूल योग हुआ।

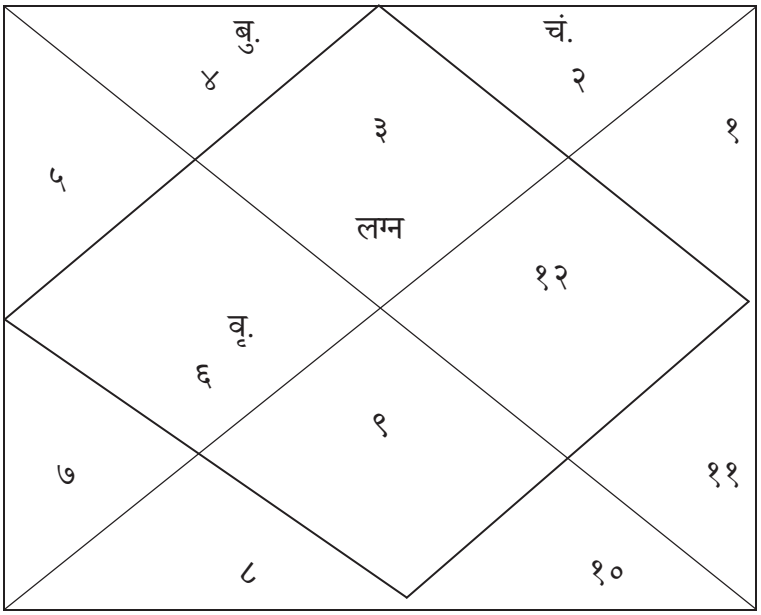

अथ परम उत्तम कबूल लक्षणम् –

इन्दुः पदोनः स्वर्क्षोच्चस्थितेनाप्युत्तमं तु तत् ।
स्वहद्दादिगतेनापि पूर्ववन्मध्यमुच्यते ।।

चन्द्रमा अपने उच्च गृह आदि अधिकार से रहित होकर अपने गृह उच्चगत लग्नेश से या कार्येश से इत्थशाल करता हो तो उत्तम कबूल होता है । यदि उसी प्रकार से चन्द्रमा अपनी हद्दादि पद गत लग्नेश व कार्येश से इत्थशाल करता हो तो पहले के ऐसा मध्यम कबूल होता है । उदाहरणार्थ -

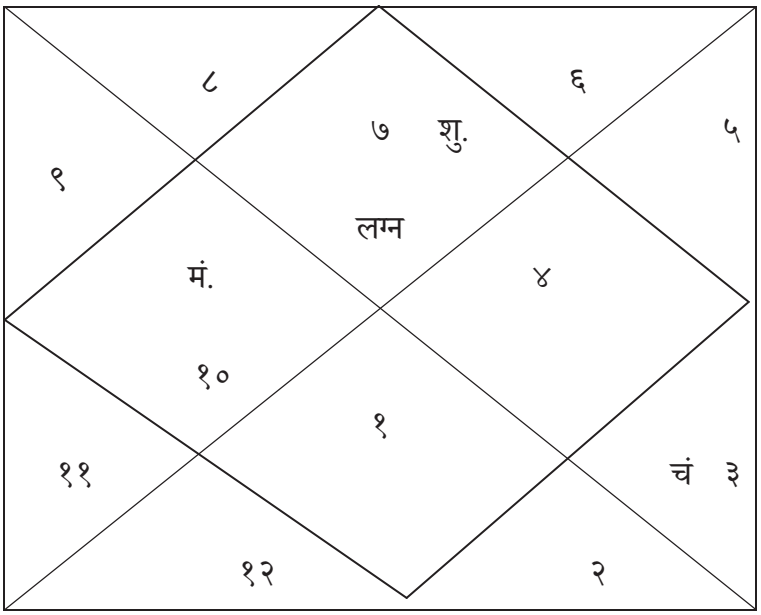

कुण्डली में धन लाभ के प्रश्न में तुला लग्न है य यहॉ लग्नेश शुक्र लग्न में ही है और कार्येश (धनेश) मंगल मकर (उच्च) में है , चन्द्रमा मिथुन में सम ग्रह के द्रेष्काण में है , इन सभी में एक से दूसरे को इत्थशाल होता है , इस से मध्यमोत्तम कबूल होता है ।यहॉ भाग्योदय होगा ऐसा कहना चाहिये ।

मध्यम कबूल योग का उदाहरण –

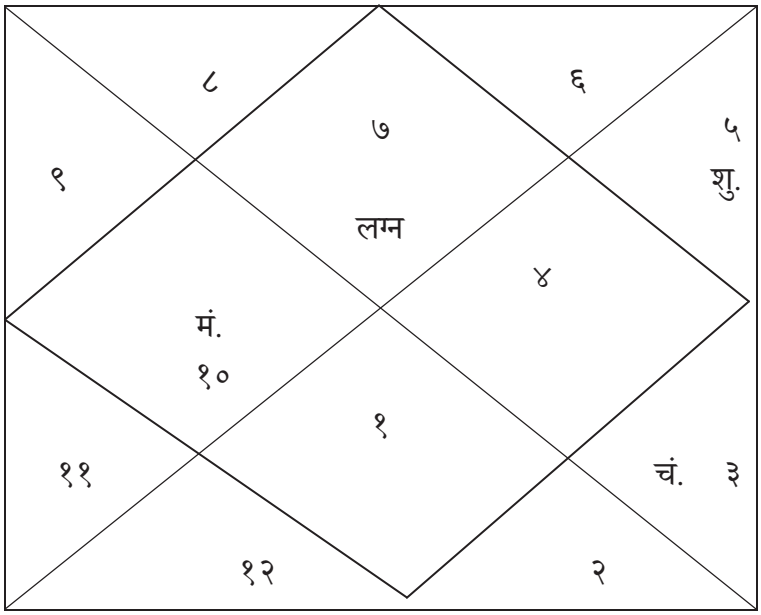

यहॉ कुण्डली में धन लाभ के प्रश्न में तुला लग्न ही है, उसका स्वामी शुक्र सिंह राशि में अपनी हद्दा में दस अंश पर है और धनेश (कार्येश) मंगल अपनी हद्दा में चन्द्रमा मिथुन के दस अंश पर सम द्रेष्काण में है, इन सभी को इत्थशाल होने से मध्यम कबूल होता है । यहॉ धन लाभ साधारण होगा ऐसा कहना चाहिये ।

खल्लासर योग –

शून्येऽध्वनीन्दुरूभयोर्नेत्थशालो न वा युति: ।
खल्लासरो न शुभद: कम्बूलफलनाशन: ।।

यह भी इत्थशाल पर ही आधारित योग है । यदि किसी भी इत्थशालकर्ता ग्रह से चन्द्रमा योग, इत्थशाल, दृष्टि आदि न रखता हो, अर्थात् कम्बूल योग का कोई भेद न बनता हो तो खल्लासर योग होता है । लेकिन उक्त प्रकार का चन्द्रमा शून्य मार्ग में गया हुआ होना चाहिए । जब कोई ग्रह स्वक्षेत्रोच्च व हद्दा , द्रेष्काण आदि में या नीच शत्रुक्षेत्र , हद्दा द्रेष्काण नवांश में कहीं भी न हो तब वह शून्य मार्गगत कहा जाता है । यह योग इत्थशाल का नाश नहीं करता, अपितु कम्बूल योग का नाश करता है ।

रद्द योग –

अस्तनीचरिपुवक्रहीनभा दुर्बलो मुथशिलं करोति चेत् ।
नेतुमेष न विभुर्यतो महोऽन्ते मूखेऽपि न स कार्यसाधक: ।।

जब इत्थशाल कारक ग्रह अत्यन्त दुर्बल हो अर्थात् वक्री, तेजहीन, अस्तंगत , नीचगत, शत्रुक्षेत्री हो तो इत्थशाल योग बनने पर भी वह उसका फल नहीं दे पाता । यह इत्थशाल योग को रद्द करने वाला होने से रद्द योगकहलाता है ।

दुष्फालिकुत्थ योग –

मन्द: स्वभोच्चादिपदे स्थितश्चेत् पदोनशीघ्रेण कृतेत्थशाल: ।
तत्रापि कार्यं भवतीति वाच्यं वक्रादिनिर्वीर्यपदे न चेत्स्यात् ।।

जब इत्थशाल योग होने पर मन्द गति ग्रह स्वोच्चादि क्षेत्र, हद्दा, द्रेष्काणादि में हो और शीघ्रगति ग्रह स्वोच्चादि में न होता हुआ भी दुर्बल न हो तो यह शुभ दुष्फालिकुत्थ योग कार्यसाधक योग होता है ।

दुत्थोत्थदिबीर योग –

वीर्योनितौ कार्यविलग्ननाथौ स्वर्क्षादिगेनान्यतरो युनक्ति ।
अन्यौ यदा द्वौ बलिनौ तदाऽन्यसाहाय्यत: कार्यमुशन्ति सन्त: ।।

इत्थशाल कारक ग्रह दोनों ही दुर्बल हों , लेकिन उनमें से कोई एक भी अन्य बलवान ग्रह से स्वक्षेत्रादिगत इत्थशाल करे तो यह दुत्थोत्थदिबीर योग होता है । अथवा अन्य कोई दो बलवान ग्रह लग्नेश व कार्येश से इत्थशाल करें तो भी यही योग होता है । इस योग में दूसरे की सहायता से कार्य सिद्धि होती है ।

कुत्थ व दुरफ योग –

लग्नेऽथ केन्द्रे निकटेऽपि वाऽस्य विलग्नदर्शी स्वगृहोच्चदृक्के ।
मुसल्लहे स्वे नीचहद्दगो वा बली ग्रहो मध्यगतिस्त्वशीघ्र: ।।

कुत्थ का अर्थ है बलवान । अत: लग्नेश कार्येश से कोई भी उक्त योग कार्यसाधक न बने तब देखना है कि वे जातक प्रकरणोक्त स्थानबल, उच्चबल, हद्दाबल, नवांशबल, दिग्बल, दिनरात्रिबल, पक्षबल, अयनबल, चेष्टाबल, आदि से युक्त हैं या नहीं । यदि उनमें से कोई भी ग्रह पंचवर्गी या द्वादशवर्गी में या षड्बलैक्य में बली हो तो कुत्थ योग है तथा वह कार्यसाधक होता है ।

यदि उक्त प्रकार के अतिरिक्त केवल हर्षबली भी हो तो भी वह कार्य साधक कुत्थ योग बनाएगा ।

इसके विपरीत लग्नेश व कार्येश में से कोई निर्बल हो अर्थात् कुत्थ की विपरीत स्थिति में हो तो दुरूफ्फ योग होता है । यह सर्वथा कार्यनाशक है ।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वर्षपत्र निर्मित करने हेतु ग्रहभाव

स्पष्ट, लग्न कुण्डली व पंचाधिकारी निर्णय करने के पश्चात् उसमें मुद्दा दशा लिखा जाता है। उसी क्रम में वर्ष लग्न से विशेष फल निर्णय करने के लिये ताजिक शास्त्र में षोडश योग कहे गये है – इकवाल, इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, नक्त, यमया, मणाऊ, कब्बूल, गैरिकबूल, खल्लासर, रद्द, दुफालिकुत्थ, दुत्थोत्थादि, तम्बीर, कुत्थ, दुरफ । इन षोडश योगों में इक्कवाल, इन्दुवार एवं इत्थशाल ये तीन योग मुख्य हैं। इनके ही सम्मिश्रण से प्राय: शेष योग बनते हैं। ताजिकनीलकण्ठी नामक ग्रन्थ में इन षोडश योगों का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

इक्कवाल – ताजिकोक्त षोडश योग में एक योग
केन्द्र - १,४,७,१० वें स्थान को
पणफर – २,५,८,११ वें स्थान को
आपोक्लिम – ३,६,९,१२ वें स्थान को
मुक्तावली - टिका ग्रन्थ
विचारणीय - विचार करने योग्य
मन्दगति - अल्प गति
कार्येश - कार्य का स्वामी
दशमेश – दशम का स्वामी
आगामी – आने वाला
मध्यस्थ - बीच वाला
इत्थशाल – षोडश योग में एक योग

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. ग
4. क
5. क
6. ख
7. ग

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. षोडश योग क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. इकबाल, इन्दुवार योग को उदाहरण सहित बताइये ।
3. इत्थशाल योग का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये ।

इकाई – 2 मुन्था फल

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मुन्था परिचय

2.4 मुन्था फल विचार

अभ्यास प्रश्न -

2.5 सारांशः

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई - 301 के द्वितीय खण्ड की द्वितीय इकाई **'मुन्था फल'** से सम्बन्धित है। ताजिकशास्त्र कथित मुन्था एक ग्रह है जिसका वर्षकुण्डली में फलादेश के रूप में उपयोग किया जाता है।

ताजिक शास्त्र में मुन्था एक अप्रकाशमान व भौतिक पिण्ड रहित ग्रह है। मुन्था को इन्थिहा के नाम से भी जाना जाता है।

इससे पूर्व की इकाई में आपने षोडश योग का अध्ययन कर लिया है, आइये अब इस इकाई में मुन्था फल का अध्ययन करते है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. मुन्था क्या है।
2. मुन्था साधन कैसे किया जाता है ।
3. मुन्था का ताजिक शास्त्र में क्या प्रयोजन है।
4. मुन्था का महत्व क्या है ।
5. वर्षकुण्डली विचार में मुन्था का क्या उपयोग है।

2.3 मुन्था परिचय

ताजिक मत में 'मुन्था' 'मुन्थहा' 'इन्थिहा' आदि नामों से एक अन्य ग्रह (अप्रकाशमान व भौतिक पिण्ड रहित) माना गया है। इसकी दैनिक गति ५ कला होती है। अत: इसके एक मास में ३० × ५ = १५०' या २°३० चलने से वार्षिक गति १ राशि या ३०° के तुल्य होता है। जन्म समय मुन्था सदैव जन्म लग्न में रहती है। अत: वर्तमान वर्ष में मुन्था की राश्यात्मक स्थिति जानने के लिए जन्म लग्न राशि में गत वर्ष जोड़कर १२ का भाग देना चाहिए। शेष अंक के तुल्य राशि में मुन्था होती है। मुन्था साधन का श्लोक है –

जन्मलग्नात्समारभ्य गतवर्षाणि योजयेत्।

द्वादशभिर्हरेद्भागं शेषा मुन्था मता बुधै: ॥

2.4 मुन्था फल विचार –

मुन्था पर मुन्थेश की दृष्टि (ताजिक दृष्टि) होने से, क्रूर ग्रहों की मुन्था से परस्पर केन्द्र स्थिति न होने

पर मुन्था वर्ष में शुभ होती है।

- ❖ शुभ ग्रहों व स्वामी ग्रहों से दृष्ट युक्त व शुभ भाव ९,१०,११ स्थानों में मुन्था अधिक शुभ फल देती है । १,२,३,५ स्थानों में मध्यम शुभ अर्थात् परिश्रम से लाभ एवं शेष ४,६,७,८,१२ स्थानों में अधिक अशुभ होती है। सर्वत्र क्रूर व शुभ ग्रहों के योगादि से फल से तारतम्य स्थापित करना चाहिए।
- ❖ शुभ ग्रहों से इत्थशाल करने पर मुन्था या अन्य प्रकार से बली या शुभ ग्रहों से युत दृष्ट मुन्था, भाव के शुभ फल को बढ़ाती है तथा अशुभ फल को कम करती है। इसके विपरीत अशुभ मुन्था भाव के फल को नष्ट करके अशुभ फल को वृद्धि करती है।
- ❖ जन्म लग्न से भी ४,६,७,८,१२ राशियों में मुन्था रहने पर प्राय: अशुभ फल ही देती है। अत: जन्म लग्न व वर्ष लग्न दोनों से अशुभ होने पर मुन्था अत्यन्त अशुभ फल निश्चय ही देती है।
- ❖ राहु के मुख में विद्यमान मुन्था शुभ होती है। यदि गुरू, शुक्र का योग या दृष्टि भी हो तो निश्चय से पद प्रतिष्ठा दिलाता है। लेकिन राहु के पुच्छ भाग में विद्यमान मुन्था यदि विशेषतया पापग्रहों के योग या दृष्टि में हो तो अचल सम्पत्ति, धन – धान्य व सुख की हानि करती है।

कल्पित उदाहरण –

श्री शुभ संवत् २०४९, शकाब्द: १९१४, मार्गशीर्षमासे शुक्लपक्षे सप्तम्यां भौमवासरे, धनिष्ठा नक्षत्रे देहल्यां सायं ८:४७ IST समये वृश्चिकार्कगतांशा: १५° / ५३ तत्र श्री सूर्योदयादिष्टकाल: ३४:२७, साम्पातिक काल: १.८.४६ घंटादि कर्क लग्नोदये लग्नस्पष्ट: ३.३°.१६ चि0 वर्ष प्रवेश एकादश:। गताब्दा: १०। **वर्षलग्नम् -**

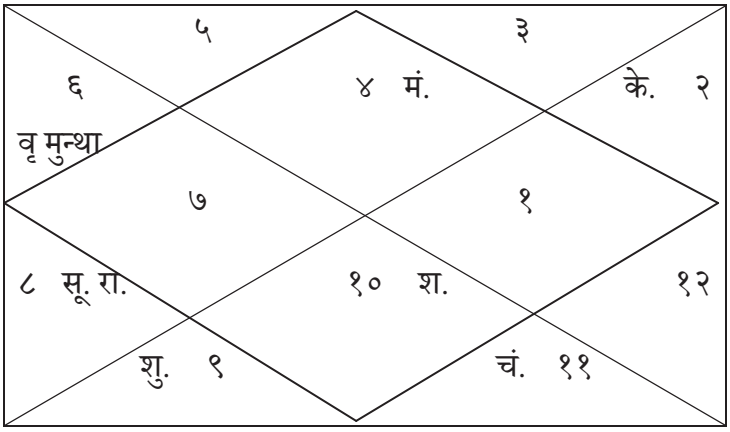

जन्म लग्नम् –

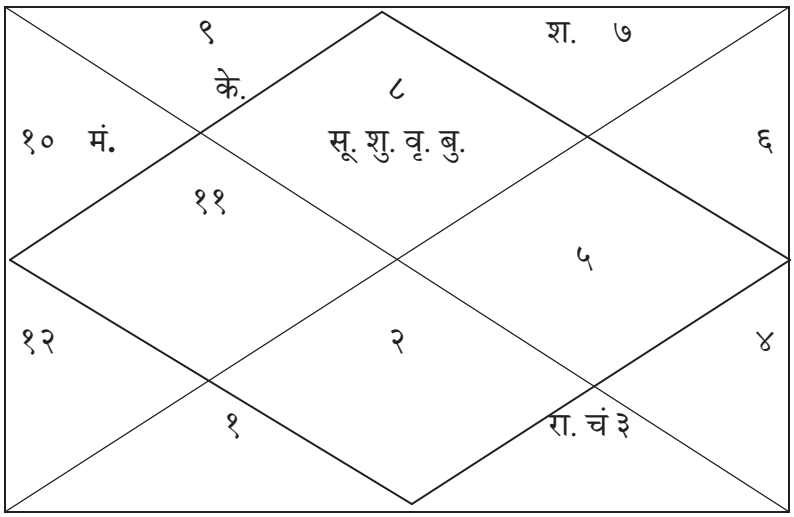

तात्कालिक ग्रहा: -

सूर्य	७	१५	५३
चन्द्र	१०	०८	५४
मंगल	३	३	४९
बुध	६	२८	२८
गुरू	५	१६	०२
शुक्र	८	२७	४९
शनि	९	१९	५०
राहु	७	२७	४८

मुन्था साधनार्थ जन्म लग्न में वृश्चिक में गत १० वर्ष जोड़े तो १८ प्राप्त हुआ इसमें १२ का भाग देने पर शेष ६ अर्थात् कन्या राशि में मुन्था है।

वर्ष में मुन्था से अनेक बातें देखी जाती हैं। इसका महत्व इससे भी स्पष्ट है कि यह वर्षेश बनने वाले पॉच अधिकारियों में से एक है।

राहु का मुख पुच्छ ज्ञान – सदा वक्री रहने के कारण राहु के भोग्य अंशों को राहु मुख व भुक्तांशों को पुच्छ कहते हैं। अत: राहु स्पष्ट में जितने अंशादि हों वे भोग्यांश है। अर्थात् अभी भोगना शेष है। राहु स्पष्ट ७।२७˚।४८ के अंशादि २७˚ ४८ ही भोग्य है, तथा ३०˚ – २७˚। ४८ = ०२˚। १२।

भुक्तांश है। हमारे उदाहरण में राहु युक्त मुन्था न होने से यह विचारणीय नही है।

वर्षेश होने के पॉच अधिकारियों का निर्णय – जन्मलग्न का स्वामी , वर्ष लग्न का स्वामी, मुन्था की राशि का स्वामी, त्रैराशीश व समयेश ये पॉच ग्रह पंचाधिकारी कहलाते हैं। इन्हीं पॉचों में से कोई एक सर्वाधिक बली होकर लग्न को देखता हो तो वही वर्षपति या वर्षेश होता है। वर्षेश की स्थिति से भी वर्ष का सम्पूर्ण शुभाशुभ फल प्रभावित होता है। तदनुसार पहले तीन अधिकारियों का निर्णय सरल ही है। शेष दो का निर्णय इस प्रकार होता है।

समयेश व त्रैराशीश – दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य की राशि का स्वामी एवं रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा की राशि की स्वामी 'समयेश' कहलाता है।

त्रैराशीश भी बारहों लग्नों के पृथक् – पृथक् दिन रात्रि लग्न के भेद से २४ होते है। अर्थात् दिन में प्रवेश हो तो वर्ष लग्नानुसारी दिन का त्रैराशीश व रात्रि में वर्षप्रवेश होने पर रात्रि का त्रैराशीश वर्ष लग्न की राशि से देखना होगा।

त्रैराशीश चक्र –

	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
दिन	सू.	शु.	श.	शु.	गु.	चं.	बु.	मं.	श.	मं.	गु.	चं.
रात्रि	गु.	चं.	बु.	मं.	सू.	शु.	श.	शु.	श.	मं.	गु.	चं.

पूर्वोक्त उदाहरण में पंचाधिकारी इस प्रकार होंगे –

जन्मेश – मंगल, मुन्थेश - बुध, त्रैराशीश – मंगल, वर्ष लग्नेश – चन्द्रमा, समयेश – शनि, वर्षपति – विचारणीय।

आप पूर्व में ही जान चुके है कि मुन्था वर्षेश भी होता है। वर्षेशनिर्णयार्थ पंचाधिकारी –

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिप:।

सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रमाधीश्वरो निशि विमृश्य पंचकम्॥

बली य एषां तनुमीक्षमाण: स वर्षपो लग्नमनीक्षमाण:।

नैवाब्दपो दृष्टयतिरेकत: स्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्या:॥

अर्थ – जन्मकालिक लग्न का स्वामी, वर्षकालिक लग्न का स्वामी, मुथहा का स्वामी, त्रिराशीश, दिन में वर्षप्रवेश होने से सूर्य जिस राशि में हो उसका स्वामी रात्रि में वर्षप्रवेश होने से चन्द्रमा जिस राशि में हो, उसका स्वामी, इन पॉचों को विचार कर (किस अधिकार में कौन ग्रह है लिखकर) उसमें जो सब से अधिक बली हो और वर्ष लग्न को भी देखता हो, वही वर्षेश होता है। जो वर्ष लग्न को नहीं देखता हो वह सर्वाधिक बलवान होने पर भी वर्षेश नहीं होता है। यदि उन पंचाधिकारियों में सब या चार या तीन या दो भी सम बलशाली हों तो जिनकी दृष्टि लग्न पर विशेष हो, वह वर्षेश होता

है।

दृष्टिसाम्ये व्यवस्था –

दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु ।

पञ्चापि चेन्नो तनुमीक्षमाणा वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः ।।

अर्थात् यदि पॉचों अधिकारी ग्रहों के बल तथा लग्न के उपर दृष्टि समान हो या सब निर्बल हों तो मुथहा के स्वामी ग्रह ही वर्षेश होता है । अगर पंचाधिकारि ग्रहों में कोई भी लग्न को नहीं देखे तो उन पॉचों में जो सबसे अधिक बली हो वही वर्षेश जानना चाहिये ।

अभ्यास प्रश्न -

1. मुन्था है –
   क. एक अप्रकाशमान व भौतिक पिण्ड रहित ग्रह
   ख. एक योग
   ग. सहम
   घ. कोई नहीं
2. मुन्था की दैनिक गति होती है –
   क. १० विकला ख. ८ विकला ग. ५ विकला घ. २० विकला
3. शुभ ग्रहों से दृष्ट व युक्त मुन्था किन – किन स्थानों में अधिक शुभ फल देती है –
   क. १,२,३,५ ख. ९,१०,११ ग. ४,६,७,८,१२ घ. ३,६,९
4. राहु के मुख में विद्यमान मुन्था होती है –
   क. शुभ ख. अशुभ ग. शुभाशुभ घ. कोई नहीं
5. दिन में वर्षप्रवेश हो तो किस राशि का स्वामी समयेश कहलाता है –
   क. चन्द्र ख. सूर्य ग. मंगल घ. बुध

मुथहा साधन –

स्वजन्मलग्नात् प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान् मुथहाभ्रमोऽतः ।

स्वजन्मलग्नं रवितष्टयातशरद्युतं सा भमुखेन्थिहा स्यात् ।।

अर्थात् जन्म काल में एक वर्ष तक जन्मलग्न में ही मुथहा रहती है । दूसरे वर्ष में जन्म लग्न से दूसरे स्थान में, तीसरे वर्ष में तीसरे स्थान में इस क्रम से प्रत्येक वर्ष में एक – एक राशि भोग से मुथहा का भ्रमण होता है । इसलिये जन्मलग्न में राशिस्थान में गत वर्ष को जोड़कर १२ से भाग दे, तो शेष तुल्य राशि और अंशादिक तो लग्न के अंशादिवत् ,इस प्रकार इष्ट वर्ष में मुथहा होती है । अर्थात् सभी वर्षों में मुथहा के राशि ही बदलती है, अंशादि स्थिर ही रहता है ।

प्रत्यहं शरलिप्ताभिर्वर्द्धते साऽनुपातत: ।

सार्धमंशद्वयं मास इत्याहु: केऽपि सूरय: ।।

प्रत्येक सौर दिन में ५ कलायें , मास में अढ़ाई अंश अनुपात से मुथहा बढ़ती है । स्पष्टता के लिये आचार्य का कथन है – इसका प्रयोजन मासप्रवेश और दिन प्रवेश में पड़ता है, क्योंकि वर्षप्रवेश कुण्डली में जो मुथहा है वह प्रत्येक वर्ष तक वहॉ स्थिर रहती है, परन्तु प्रथम मास प्रवेश में भी वही मुथहाका मान होता है । दूसरे मास प्रवेश बनाने में वर्षप्रवेश कालिक मुथहामें अढ़ाई अंश जोड़ने से मुथहा होती है, तीसरे मास प्रवेश बनाने में द्विगुणित अढ़ाई अंश अर्थात् पॉच अंश जोड़ने से मुथहा होती है । ऐसे ही चौथे मास प्रवेश में साढे सात अंश जोड़ने से मुथहा बनती है । इसी प्रकार अन्यत्र भी समझना चाहिये ।

दिन प्रवेश बनाने में प्रतिदिन प्रवेश में जो मुथहा है उसमें ५ कला, जोड़ने से अगले दिन प्रवेश की मुथहा बनती है ।

यहॉ वर्षप्रवेश में मुथहा मान जानने के लिये – कल्पना किया कि जन्मलग्न ५।५।३४।१२ है इसमें राशि स्थान में गत वर्ष १५ जोड़ा २०।५।३४।१२ अब राशिस्थान में १२ से भाग दिया शेष्ज्ञ ८।५।३४।१२ तुल्य मुथहा हुई । अब इसमें अढ़ाई अंश जोड़ा तो अग्रिम मास प्रवेश में मुथहा हुई । ५ अंश जोड़ा तो तृतीय मास प्रवेश में मुथहा हुई, एवं वर्ष प्रवेश के प्रथम दिन प्रवेश की मुथहा वही होती है जो वर्षप्रवेश की मुथहा है इसमें पॉच कला जोड़ दिया तो दूसरे दिन की मुथहा बनी । ऐसे ही आगे भी समझना चाहिये ।

राहु – मुखपृष्ठपुच्छ लक्षण –

भोग्या राहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गता लवा: ।

तत: सप्तभं पुच्छं विमृश्येति फलं वदेत् ।।

राहु का जो भोग्य अंश होता है वह उसका मुख होता है और जो भुक्त अंश होता है वो पृष्ठ अंश संज्ञक है । राहु से सातवॉ राशि उसका पुच्छ होता है । यही समझकर उसका फल कहना चाहिये ।

विशेष – राहु की विलोम गति होने से वह पहले किसी राशि के अन्त में आकर मध्य में, बाद आदि में आते हैं । इसलिये जिस राशि में जहॉ पर वह स्थित हो, उस बिन्दु से उस राश्यादि तक जो की राहु नहीं भाग किया है लेकिन राश्यादि लिखने में वहीं अंशादि लिखे जाते हैं, क्योंकि पूर्वाभिमुख राशिक्रम गणना होने से, तो राहु के राश्यादि जो पंचांग में लिखते हैं, उसमें अंशादि भोग्य ही रहते, उसको ३० में घटाने से शेष भुक्त होते हैं । वहॉ राहु केवल राश्यन्त से राश्यादि के तरफ जो आते हैं वही पश्चिम मुख होकर नहीं, सुख तो पूर्वाभिमुख ही रहता है पृष्ठ पश्चिम तरफ रहती है, जब जिस

बिन्दु में रहता है तब उससे पश्चिम अर्थात् लिखे हुये अंशादि, वस्तुत: भुक्तांशादि पृष्ठ संज्ञक होता है।

उदाहरणार्थ - राहु ५।७।१४।४० है, यहॉ ७।१४।४० ये पृष्ठ हैं और २२।४५।२० यह मुख है, मीन के ७।१४।४० इनमें पुच्छ है।

पंचवर्गी बल निर्णय –

वर्ष में ग्रहों के बलाबल का निर्णय करने के लिये पंचवर्गी बल का साधन करना आवश्यक है, तभी हम बलवान ग्रह, मध्यबली ग्रह आदि का और विशेषतया वर्षेश का निर्णय कर सकेगें।

गृह, उच्च, हद्दा, देष्काण, नवमांश के बलों को पंचवर्गी बल कहा जाता है। इन पॉचों को इस उक्त क्रमानुसार ही लिखना चाहिये।

ग्रहों की राशियॉ गृह , उच्च व नवमांश वही हैं जो जातक शास्त्र में होते है। हद्दा इसमें नवीन है।

द्रेष्काण के विषय में ध्यान रखना चाहिये कि पंचवर्गी बल साधन में द्रेष्काण विचार थोड़ा अलग है। यह केवल पंचवर्गी में ही ग्रहण करना। अन्यत्र सभी स्थलों में जातक शास्त्रवत् ही 'द्रेष्काणपा: प्रथमपंचनवाधिपानाम्' वाले मत से ही लिया जाएगा।

पंचवर्गी में द्रेष्काण विचार –

	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
$0\text{-}10^0$	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
$10\text{-}20^0$	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.
$21\text{-}30^0$	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.

प्रथम द्रेष्काण मंगल से, दूसरा द्रेष्काण सूर्य से तीसरा द्रेष्काण शुक्र से सीधे वार क्रम से गणना पर होते हैं अथवा मेष के नीचे मंगल लिखकर बुध, वृह. शुक्र, शनि, रवि इत्यादि क्रम से गणना करते जाने पर तो द्रेष्काणेश प्राप्त हो जाते है।

हद्दा विचार –

प्रत्येक राशि में निश्चित अंशों तक हद्देश माने गये हैं। इनके पीछे तर्क क्या है, यह स्पष्ट नहीं है। प्रत्येक राशि में अंशमान अलग – अलग हैं। एक राशि में पॉच हद्दा होती हैं। हद्दा चक्र में अंकों में अंशमान दिये गये हैं –

मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
६ वृ.	८ शु.	६बु.	७मं.	६गु.	७ बु.	६श.	७मं.	१२गु.	७बु.	७शु.	१२शु.
६ शु.	६बु.	६शु.	६शु.	५श.	१०शु.	८बु.	४शु.	५शु.	७गु.	६बु.	४ गु.
८ बु.	८ गु.	५गु.	६बु.	७श.	४ गु.	७गु.	८बु.	४बु.	८शु.	७गु.	३ बु.

५ मं.	५श.	७मं.	७गु.	६बु.	७ मं.	७ शु.	५ गु.	५ मं.	४ श.	५ मं.	९ मं.
५ श.	३मं.	६श.	४श.	६मं.	२ श.	२ मं.	६ श.	४ श.	४ मं.	५ श.	२ श.

ताजिक मत में निसर्ग मैत्री –

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल व वृहस्पति ये चारों ग्रह एक दूसरे के मित्र है। इसी प्रकार शनि, बुध, शुक्र ये तीनों परस्पर मित्र होते हैं। अन्य ग्रह शत्रु होते है। निसर्ग मैत्री में सम ग्रह नहीं होते है।

ताजिक मत में तात्कालिम मैत्री –

सभी ग्रह अपने अधिष्ठित स्थान से ३,५,९,११ में स्थित ग्रहों को मित्र समझते हैं। परस्पर १,४,७,१० भावों में स्थित सभी ग्रह शत्रु होते हैं, शेष २,६,८,१२ में स्थित ग्रह परस्पर सम कहलाते है।

वर्ष गणित में इसी मैत्री का प्रयोग होता है। जातक खण्ड में बताई गई मैत्री के अनुसार यहॉ मित्रामित्र निर्णय करना सर्वथा असंगत है।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ताजिक मत में 'मुन्था' 'मुन्थहा' 'इन्थिहा' आदि नामों से एक अन्य ग्रह (अप्रकाशमान व भौतिक पिण्ड रहित) माना गया है। इसकी दैनिक गति ५ कला होती है। अत: इसके एक मास में ३० × ५ = १५०' या २°३० चलने से वार्षिक गति १ राशि या ३०° के तुल्य होता है। जन्म समय मुन्था सदैव जन्म लग्न में रहती है। अत: वर्तमान वर्ष में मुन्था की राश्यात्मक स्थिति जानने के लिए जन्म लग्न राशि में गत वर्ष जोड़कर १२ का भाग देना चाहिए। शेष अंक के तुल्य राशि में मुन्था होती है। मुन्था पर मुन्थेश की दृष्टि (ताजिक दृष्टि) होने से, क्रूर ग्रहों की मुन्था से परस्पर केन्द्र स्थिति न होने पर मुन्था वर्ष में शुभ होती है

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

अप्रकाशमान – प्रकाशहीन
दैनिक गति - एक दिन की गति
वार्षिक गति – एक वर्ष की गति
राश्यात्मक – राशि के तुल्य
क्रूर - पाप ग्रह
तारतम्य - तालमेल
सर्वत्र - चारो और
अशुभ - खराब

वर्षपति – वर्ष का स्वामी

राहु का मुख – भोग्यांश भाग

राहु का पुच्छ - भुक्तांश भाग

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ग
3. ख
4. क
5. ख

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मुन्था से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. उदाहरण सहित मुन्था साधन कीजिये ।
3. मुन्था फल विचार लिखिये।

इकाई – 3 सहम विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 सहम विचार
3.4 सहम साधन
अभ्यास प्रश्न -
3.5 सारांशः
3.6 पारिभाषिक शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई ज्योतिष तृतीय वर्ष के द्वितीय खण्ड की तृतीय इकाई **'सहम विचार'** से सम्बन्धित है। ताजिकशास्त्र में 50 सहमों का उल्लेख किया गया है।

पुण्य आदि ५० सहमों का साधन ग्रहस्पष्ट व लग्न स्पष्ट के आधार पर किया जाता है। सहम विचार ताजिक शास्त्र का महत्वपूर्ण अंग है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने षोडश योग एवं मुन्था साधन आदि का अध्ययन कर लिया है, आइये अब इस इकाई में सहम विचार का अध्ययन करते है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. सहम योग क्या है।
2. सहम योग का क्या प्रयोजन है ।
3. सहम योग का साधन कैसे किया जाता है ।
4. सहम योग का ताजिक शास्त्र में क्या उपयोग है ।
5. षोडश योग में सहम का क्या औचित्य है।

3.3 सहम विचार

पुण्य आदि ५० सहमों का साधन ग्रह स्पष्ट व लग्न स्पष्ट के आधार पर किया जाता है। इनको भी वर्ष कुण्डली के साथ स्थापित करके शुभाशुभ योग व सहमेश के बलानुसार वर्ष में उन चीजों की वृद्धि या हानि देखी जाती है। जैसे पुण्य से पुण्य वृद्धि, विद्या सहम से विद्यावृद्धि इत्यादि।

पुण्यं गुरू र्ज्ञान यशोऽथ मित्रं माहात्म्य माशा च समर्थता च।
भ्राता ततो गौरव राज तात माता सुतो जीवितमम्बु कर्म ।।
मान्द्यं च मन्मथ कली परतः क्षमोक्ता।
शास्त्रं सबन्धुसहमं त्वथ वन्दकं च ।।
मृत्योश्च सद्म परदेश धनाऽन्यदारा।
स्यादन्यकर्म सवणिक त्वथ कार्यसिद्धिः ।।
उद्वाह सूति सन्तापाः श्रद्धा प्रीतिर्बलं तनुः।
जाडय व्यापारसहमे पानीयपतनं रिपुः ।।
शौर्योपाय दरिद्रत्वं गुरूतांऽबुपथाभिधम्।

बन्धनं दुहिताऽश्वश्च पञ्चाशत्सहमानि हि ॥

पुण्यादि सहमों की संख्या ५० है, उनके नाम इस प्रकार है –

१. पुण्य २. गुरू ३. ज्ञान ४. यश ५. मित्र ६. माहात्म्य ७. आशा ८. समर्थ ९. भ्राता १०. गौरव ११. राज्य १२. तात १३. माता १४. सुत १५. जीवित १६. अम्बु १७. कर्म १८. मान्द्य १९. मन्मथ २०. कलि २१. क्षमा २२. शास्त्र २३. बन्धु २४. बन्दक २५. मृत्यु २६. परदेश २७. धन २८. अन्यदारा २९. अन्यकर्म ३०. वणिक् ३१. कार्यसिद्धि ३२. उद्वाह ३३. सूति ३४. सन्ताप ३५. श्रद्धा ३६. प्रीति ३७. बल ३८. तनु ३९. जाड्य ४०. व्यापार ४१. पानीयपतन ४२. रिपु ४३. शौर्य ४४. अपथसहम ४५. दरिद्र ४६. गौरव ४७. अम्बुपथ ४८. बन्धन ४९. दुहिता ५०. अश्व।

इस प्रकार ताजिक शास्त्र में कुल ५० सहम कहे गये है।

3.4 सहम साधन –

पुण्य सहम

सूर्योनचन्द्रान्वितमह्नि लग्नं वीन्द्वर्कयुक्तं निशि पुण्यसंज्ञम्।
शोध्यर्क्षशुद्ध्याश्रयभान्तराले लग्नं न चेत्सैकभमेतदुक्तम् ॥

अर्थात् दिन में वर्ष प्रवेश हो तो रवि को चन्द्रमा में घटाकर शेष को लग्न में जोड़े, रात में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा को सूर्य में घटाकर लग्न में जोड़े। यहॉ जो ग्रह घटाया जाय वह शोध्य है , जिसमें घटाया जाय वह शुद्धध्याश्रय है, यदि शोध्यर्क्ष शुद्धयाश्रय राशि के बीच में लग्न न हो, तो एक राशि जोड़ दे, तो यह पुण्य सहम होता है।

उदाहरणार्थ – कल्पना किया कि सूर्य ००।१२।५७।५०, चन्द्रमा ८।५।३९।३३, लग्न ३।२७।७।४ यहॉ दिन में वर्ष प्रवेश हुआ है, इसलिये चन्द्रमा ८।५।३९।३३ में सूर्य को घटाकर शेष ७।२२।४१।४३ में लग्न ३।२७।७।४ जोड़ा तो ११।१९।४८।४७ इतना हुआ, यहॉ शोध्यर्क्ष (जो घटता है) और शुद्धाश्रय (जिसमें घटाते हैं) इन दोनों के मध्य लग्न है, इसलिये सैकता विधि न करने से ही पुण्य सहम ११।१९।४८।४६ हुआ । यदि उतने ही इष्ट रात्रिगत है, मान लीजिये तो सूर्य ०।१२।५७।५० में चन्द्रमा ८।५।३९।३३ को घटाया, ४।७।१८।१७ लग्न जोड़ा, ८।४।२५।२१ यहॉ शोध्यर्क्ष शोध्याश्रय के बीच में लग्न है, इसलिये १ राशि जोड़ने पर पुण्य सहम ९।४।२५।२० यह रात का पुण्य सहम हुआ एक राशि जोडने को सैकता कहते है। यह संस्कार सब सहमों में समान रूप से विचारणीय है।

विद्या गुरू व यश सहम –

व्यत्यस्तमस्मादुरूविद्ययोस्तु संसाधनं पुण्यतियुक्सुरेज्यः।

दिवा विलोमं निशि पूर्ववत्तु यशोभिधं तत्सहमं वदन्ति ।।

इनका साधन पुण्य सहम से विलोम होता है। अर्थात् दिन में वर्षप्रवेश हो तो सूर्य में से चन्द्रमा को व रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर चन्द्र में से सूर्य को घटाकर पूर्ववत् लग्न जोड़ें व आवश्यक होने पर सैकता करें।

उदाहरणार्थ - यहॉ दिन में वर्षप्रवेश हुआ है, इसलिये कल्पित सूर्य ०।१२।५७।५० में चन्द्रमा ८।५।३९।३३ को घटाकर शेष ४।७।१८।१७ में लग्न ३।२७।७।४ जोड़ा तो ८।४।२५।२१ हुआ, यहॉ शोध्य शुद्धयाश्रयराशि के बीच लग्न नहीं है, अत: १ राशि और जोड़ दिया ९।१४।२५।२१ यही गुरू सहम वा विद्या सहम हुआ।

और दिन में इष्ट है, अत: पुण्य सहम ११।१९।४८।४६ को वृहस्पति ०।२।४९।८ में घटाया शेष ०।१३।०।२२ इसमें लग्न ३।२७।७।४ जोड़ा ४।१०।७।३६ यहॉ शोध्य शुद्धयाश्रय के बीच लग्न नहीं है, अत: सैक किया तो यश सहम ५।१०।७।२६ हुआ।

मित्र सहम –

पुण्यसद्म गुरूसद्मतस्त्यजेद्व्यत्ययो निशि सितान्वितं च तत्।
सैकता तनुवदुक्तरीतितो मित्रनाम सहमं विदुर्बुधाः ।।

भाषार्थ – दिन में वर्ष प्रवेश हो, तो गुरू सहम में पुण्य सहम को घटाये, रात में उल्टी रीति अर्थात् पुण्य सहम में ही गुरू सहम को घटाये, और शुक्र को जोड़े। लग्न का ऐसे पूर्वकथनानुसार क्रिया करें, अर्थात् जैसे पहले शोध्यर्क्ष शुध्याश्रय इनके बीच लग्न न होने से एक जोड़ना कहा गया, वैसे यहॉ शोध्यर्क्ष शुद्धयाश्रय के मध्य में शुक्र को न रहने से एक जोड़ना चाहिये। प्राप्त लब्धि को सहम के नाम से जानते है।

माहात्म्य व आशा सहम –

पुण्याद्धौमं शोधयेदुक्तवत्स्यान्माहात्म्यं तन्नक्तमस्माद्विलोमम्।
शुक्रं मन्दादह्नि नक्तं विलोममाशाख्यं स्यादुक्तवच्छेषमूह्यम् ।।

अर्थात् दिन में वर्षप्रवेश हो तो पुण्य सहम में कल्पित कर मंगल को घटाये, रात में विलोम अर्थात् मंगल में पुण्य सहम को घटाये, पूर्वकथित लग्न को जोडे, फिर उसमें एक जोड़े तो महात्म्य सहम होता है। दिन में शनि में शुक्र को, रात में शुक्र में शनि को घटाना शेषकार्य पूर्ववत् अर्थात् लग्न जोड़ना, सैक करने से आशा नामक सहम होता है।

सामर्थ्य व भ्रातृसहम –

सामर्थ्यमारात्तनुपं विशोध्य नक्तं विलोमं तनुपे कुजे तु।

जीवाद्विशुध्येत्सततं पुरावद् भ्राताऽकिंहीनाद्गुरूतः सदोह्यः ।।

दिन में वर्षप्रवेश हो तो मंगल में लग्नेश को घटाये, रात में लग्नेश ही में मंगल को घटावे, लग्न जोड़े, शोध्यर्क्ष शुद्धयाश्रय राशियों के बीच यदि लग्न न हो तो एक राशि और जोड़े, तो यह सामर्थ्य सहम होता है ।यहॉ यदि लग्नेश मंगल ही हो जाय तो दिन के साथ रात में भी वृहस्पति में मंगल को घटाये। लग्न जोड़ना तथा पूर्वानुसार सैकताविधि करने पर सामर्थ्य सहम होता है । और दिन व रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो वृहस्पति में शनि को घटाये, पूर्व अनुसार लग्न जोड़ना सैक करने से भ्रातृसहम होता है।

गौरव –राज- तात- सहम साधन –

दिने गुरोश्चन्द्रमपास्य नक्तं रविं क्रमादर्कविधू च देयौ।
रीत्योक्तया गौरधमर्कमार्केरपास्य वामं निशि राजतातौ ।।

दिन में वर्षप्रवेश हो तो वृहस्पति में चन्द्रमा को घटाये, सूर्य को जोड़े , वृहस्पति चन्द्रमा के बीच लग्न नहीं पड़े तो एक राशि जोड़ना यह गौरव सहम होता है, रात में वृहस्पति में सूर्य को घटावे, चन्द्रमा जोड़े, चन्द्रमा वृहस्पति के मध्य में लग्न नहीं पड़े तो एकराशि और जोड़ना चाहिये इससे रात में गौरव सहम होता है।

दिन में शनि में सूर्य को, रात को सूर्य में शनि को घटाना, लग्न जोड़ना, पूर्ववत् सैक करने से यह राज सहम एवं तात सहम होता है।

मातृ – सुत- जीविताम्बु सहम –

मातेन्दुतोपास्य सितं विलोमं नक्तं सुतोऽहर्निशमिन्दुमीज्यात् ।
स्याज्जीविताख्यं गुरूमार्कितोऽह्नि वामं निशीदं सममम्बयांऽबु ।।

अर्थात् दिन में चन्द्रमा में शुक्र को, रात में शुक्र ही में चन्द्रमा को घटावे, लग्न एवं राशि जोड़ने का नियम पूर्ववत्त तो माता सहम होता है और दिन – रात में कभी भी वर्षप्रवेश हो तो – वृहस्पति में चन्द्रमा को घटाये, लग्न जोड़े पूर्ववत् सैक करने पर पुत्र सहम होता है। दिन में शनि में वृहस्पति को , रात में वृहस्पति में शनि को घटाकर एक जोड़ना सैक करना पूर्ववत् तो जीवित सहम होता है। यश माता सहम के बराबर ही अम्बु सहम होता है, क्योंकि दोनों चतुर्थ स्थान ही हैं।

कर्म – रोग – मन्मथ सहम –

कर्म ज़मारान्निशि वाममुक्तं रोगाख्यमिन्दुं तनुतः सदैव।
स्यान्मन्मथो लग्नपमिन्दुतोऽह्नि वामं निशीन्दुं तनुपं सदाऽर्कात्।

दिन में मंगल में बुध, रात में बुध में मंगल को घटाकर लग्न जोड़ना पूर्ववत् सैक करना तब कर्म सहम

होता है। दिन और रात में भी लग्न में चन्द्रमा को घटाकर शेष कर्म पूर्ववत् करने से रोग सहम होता है और दिन में चन्द्रमा में लग्नेश को, रात में लग्नेश में चन्द्रमा को घटाकर लग्न योग करना चाहिये तथा पूर्ववत् सैक करने से मन्मथ सहम होता है।

अगर चन्द्रमा ही लग्नेश हो, तो दिन और रात में सूर्य में ही लग्नेश को घटाने पर तथा शेष क्रिया पूर्ववत् करने पर मन्मथ सहम होता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. ताजिक गन्थ में कितने प्रकार के सहम कहे गये है।
   क. 30 ख. 40 ग. 50 घ. 60
2. सूर्योनचन्द्रा का अर्थ है –
   क. सूर्य + चन्द्र ख. सूर्य – चन्द्र ग. सूर्य × चन्द्र घ. सूर्य/ चन्द्र
3. विद्या गुरू व यश सहम साधन किसके विलोम होता है।
   क. पुण्य सहम के ख. समर्थ सहम के ग. गौरव सहम के घ. कोई नहीं
4. दिन में वर्षप्रवेश होने पर गुरू सहम में पुण्य सहम को घटाने पर होता है –
   क. मित्र सहम ख. आशा सहम ग. सामर्थ्य सहम घ. राज सहम
5. दिन या रात में शुक्र में सूर्य को घटाकर लग्न जोड़े, और रवि शुक्र के बीच में लग्न नहीं होने से १ राशि और जोड़ने से …….. सहम होता है।
   क. गौरव ख. अन्यदारा ग. राज्य घ. मित्र

कलिक्षमाशास्त्र सहम –

कलिक्षमे स्तो गुरूतो विशुद्धे कुजे विलोमं निशि पूर्वरीत्या।

शास्त्रं दिने सौरिमपारय जीवाद् वामं निशि ज्ञस्य युतिः पुरावत्॥

अर्थात् दिन में वृहस्पति में मंगल को, रात में मंगल में वृहस्पति को घटाये, लग्न जोड़े, पूर्ववत् सैक करने से कलि सहम, और क्षमा सहम होता है और दिन में वृहस्पति में शनि को , रात में शनि में वृहस्पति को घटायें बुध जोड़े, और वृहस्पति से मंगल तक इसके बीच में यदि बुध नहीं हो तो सैक करने से शास्त्र सहम होता है।

बन्धु बन्दक मृत्यु सहम –

दिवानिशं ज्ञाच्छशिनं विशोध्य बन्ध्वाख्यमेतन्निशि वन्दकं स्यात्।

वामं दिवैतन्मृतिरष्टमर्क्षादिन्दुं विशोध्योक्तवदाकियोगात् ॥

अर्थात् दिन में या रात में वर्षप्रवेश होने से बुध में से चन्द्रमा को घटाकर लग्न जोड़े उसमें पूर्ववत्

सैक करने से बन्धुसहम होता है। यहॉ यही बन्धु सहम रात में बन्दक सहम होता है। दिन में चन्द्रमा में बुध को घटाकर लग्न जोड़े, पूर्ववत् सैक किया पूर्ववत् समझना तब बन्दक सहम होता है।

दिन या रात में किसी समय वर्षप्रवेश होने से अष्टम्भाव में से चन्द्रमा को घटाकर बुध जोड़ना, चन्द्रमा से अष्टमेश तक बीच में लग्न होने से एक और जोड़ना तो मृत्यु सहम होता है।

देशान्तर एवं अर्थ सहम –

देशान्तराख्यं नवमाद्विशोध्य धर्मेश्वरं सन्ततमुक्तवत्स्यात्।

अहर्निशं वित्तपमर्थभावाद्विशोध्य पूर्वोक्तवदर्थसद्म ।।

अर्थात् दिन या रात में वर्षप्रवेश हो तो नवम भाव में नवम भावेश को ही घटाकर, लग्न जोड़ना चाहिये, और नवमेश एवं नवम भाव इन दोनों के बीच लग्न न होने से एक राशि जोड़ने से देशान्तर सहम होता है।

और दिन में या रात में धन भाव में से धनेश को घटाकर लग्न जोड़ना चाहिये, धनेश अथवा धनभाव, इन दोनों के बीच में लग्न नहीं होने से एक राशि और जोड़ने से अर्थ सहम होता है।

अन्यदारा, अन्यकर्म, बन्दक एवं वाणिज्य सहम –

सितादपास्यार्कमथान्यदाराह्वयं सदा प्राग्वदथान्यकर्म।

चन्द्राच्छनि वाममथो निशायां शश्वद्वणिज्यं दिनबन्दकोक्त्या ।।

अर्थात् दिन या रात में शुक्र में सूर्य को घटाकर लग्न जोड़े, और रवि शुक्र के बीच में लग्न नहीं होने से १ राशि और जोड़ने से 'अन्यदारा' सहम होता है। और दिन में चन्द्रमा में शनि को रात में शनि में चन्द्रमा को घटाकर उसमें लग्न जोड़ना पूर्ववत सैक करना तब अन्यकर्म सहम होता है। दिन में और रात में भी दिन में जो बन्दक सहम कहा गया है, अर्थात् चन्द्रमा में बुध को घटाकर लग्न जोड़े तथा यदि बुध - चन्द्रमा के बीच लग्न नहीं पड़े तो एक और जोड़ने से वाणिज्य सहम होता है।

कार्यसिद्धि – विवाह सहम –

शनेर्दिवाऽर्कं निशि चन्द्रमार्केर्विशोध्य सूर्येन्दुभनाथयोगात्।

स्यात्कार्यसिद्धिः सततं विशोध्य मन्दं सितात्स्यात्तु विवाहसद्म ।।

दिन में शनि में सूर्य को घटाकर सूर्य राशि के स्वामी को जोड़ना सैक करना, रात में शनि में चन्द्र को घटाकर चन्द्रराशि को जोड़ना सैक करना तो कार्यसिद्धि सहम होता है। दिन में या रात में वर्षप्रवेश होने से शुक्र में से शनि को घटाकर लग्न जोड़कर, शनि शुक्र के बीच लग्न न होने से एक राशि और जोड़ने से कार्यसिद्धि सहम होता है। दिन में या रात में वर्षप्रवेश होने से शुक्र में से शनि को घटाकर लग्न जोड़कर शनि शुक्र के बीच लग्न न होने से एक राशि जोड़ने से विवाह सहम होता है।

प्रसव – सन्ताप सहम –

गुरोर्बुधं प्रोज्झय भवेत्प्रसूतिर्वामं निशीन्दुं शनितो विशोध्य।

षष्ठं क्षिपेदुक्तदिशा सदैव सन्तापसद्माऽरमपास्रूशुक्रात्॥

श्रद्धा सदा प्रोक्तदिशाऽथ पुण्यं विद्याख्यत: प्रोज्झय सदा पुरोक्तया।

प्रीत्याख्यमुक्तं बलदेहसंज्ञे यश:समे जाडयमपास्य भौमात्॥

शनि विलोमं निशि चान्द्रियोगाद् व्यापारमाराज्ज्ञमपास्य शश्वत्।

पानीयपात: शशिनं विशोध्य सौरेर्विलोमं निशि पूर्ववत्स्यात्॥

अर्थात् दिन में वृहस्पति में बुध को, रात में बुध में वृहस्पति को घटाकर लग्न जोड़ने और पूर्ववत सैक करने से प्रसूति सहम होता है। दिन में और रात में भी शनि में चन्द्रमा को घटाकर छठा भाव जोड़ने से, उसमें लग्न का योग करने से, पुन: पूर्ववत् सैक करने से सन्ताप सहम होता है। दिन और रात में भी शुक्र से मंगल को घटाकर लग्नयोग करे, उसमें सैकता करने से श्रद्धा सहम होता है।

रिपु, शौर्योपायदरिद्रगुरूता सहम –

मन्दं कुजात्प्रोज्झय रिपुर्विलोमं रात्रौ भवेद्भौमविहीनपुण्यात्।

शौर्यं विलोमं निशि पूर्ववत्स्यादुपाय ईज्यं शनितो विशोध्य॥

वामं निशि ज्ञं तु विशोध्य पुण्याज्ज्ञं युग्विलोमं निशि तद्दरिद्रम्।

सूर्योच्चत: सूर्यमपास्य नक्तं चन्द्रं तदुच्चाद् गुरूता पुरोक्त्या॥

अर्थात् दिन में वर्षप्रवेश होने से मंगल में शनि को, रात में शनि में मंगल को घटाकर लग्न जोड़ने से तथा पूर्ववत सैक करने से रिपु सहम होता है।

दिन में पुण्य सहम में मंगल को घटाकर, रात में मंगल ही में पुण्य सहम को घटाकर पूर्ववत् लग्नयोग सैकता करने से शौर्य सहम होता है। दिन में शनि में वृहस्पति, रात में वृहस्पति में शनि घटाकर, उसमें लग्नयोग करे पुन: सैकता करने से उपाय सहम होता है, दिन में पुण्य सहम में बुध को, रात में बुध में पुण्य सहम को घटाकर बुध जोड़ने तथा सैकता विधि को अपनाने से दरिद्र सहम होता है। दिन में सूर्योच्च में सूर्य को, रात में चन्द्रोच्च में चन्द्रमा को घटाये, उसमें लग्न जोड़ने व पूर्ववत् सैकता करने से गुरूता सहम होता है।

जलपथबन्धन सहम –

कर्कार्धत: प्रोज्झय शनिं स्याज्जलाध्वान्यथा निशि।

पुण्याच्छनिं विशोध्याह्नि वामं निशि तु बन्धनम्॥

अर्थात् दिन में वर्षप्रवेश होने से कर्कार्ध ३।१५ में शनि को घटाये, रात में शनि में ही कर्कार्ध को

घटाकर लग्न जोड़े उसमें पूर्ववत् सैक करने से जलाघ्व सहम होता है। छात्रों को यह जानना चाहिये कि आजकल जहाजी यात्रा नौका यात्रा का विचार होता है।

दिन में वर्षप्रवेश होने से पुण्य सहम में शनि को घटाये, रात को शनि में ही पुण्य सहम को घटावे, उसमें लग्नयोग तथा पूर्ववत् सैकता करने से बन्धन सहम होता है।

कन्या अश्व सहम –

चन्द्रः सितादपास्योक्तं सदा कन्याख्यमुक्तवत्।

पुण्यादर्कमपास्याययोगादश्वोऽन्यथा निशि।।

दिन और रात में भी शुक्र में चन्द्रमा को, घटाकर लग्न योग करने से तथा उसमें सैकता कर्म करने से कन्या सहम होता है। तथा दिन में पुण्य सहम में सूर्य को रात में सूर्य ही में से पुण्य सहम को घटाकर आय भाव जोड़ने से तथा पूर्ववत् सैकता करने से अश्व सहम होता है।

इस प्रकार ताजिक ग्रन्थ में पुण्यादि ५० सहम कहे गये है। इनके ज्ञान से हमें वर्षकुण्डली फलादेशादि कर्तव्य में सहायता मिलती है। अत: पाठको को इसका ज्ञान परमावश्यक है।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ताजिक मत में पुण्य आदि ५० सहमों का साधन ग्रह स्पष्ट व लग्न स्पष्ट के आधार पर किया जाता है। इनको भी वर्ष कुण्डली के साथ स्थापित करके शुभाशुभ योग व सहमेश के बलानुसार वर्ष में उन चीजों की वृद्धि या हानि देखी जाती है। जैसे पुण्य से पुण्य वृद्धि, विद्या सहम से विद्यावृद्धि इत्यादि। पुण्य, गुरू, ज्ञान, यश, मित्र, माहात्म्य, आशा, समर्थ, भ्राता, गौरव, राज्य, तात, माता, सुत, जीवित, अम्बु , कर्म, मान्द्य, मन्मथ, कलि, क्षमा, शास्त्र, बन्धु, बन्दक, मृत्यु, परदेश, धन, अन्यदारा, अन्यकर्म, वणिक्, कार्यसिद्धि, उद्वाह, सूति, सन्ताप, श्रद्धा, प्रीति, बल, तनु, जाड्य, व्यापार, पानीयपतन, रिपु, शौर्य, अपथसहम, दरिद्र, गौरव, अम्बुपथ, बन्धन, दुहिता तथा अश्व ताजिक शास्त्र में ये ५० सहम कहे गये है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

शुभाशुभ – शुभ और अशुभ
विद्यावृद्धि - विद्या की वृद्धि
सैकता – एक राशि जोड़ना
शोध्य – जो घटाया जाये वह शोध्य है
शुद्धयाश्रय - जिसमें घटाया जाये वह शुद्धयाश्रय है
सित - शुक्र

निशि - रात्रि

पूर्वकथित - पूर्व में कहा गया

पूर्ववत् – पहले के समान

विलोम – उल्टा

महात्मय - महत्ता

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. क
5. ख

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सहम क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. पुण्यादि सहमों का नाम लिखते हुये उसका वर्णन कीजिये ।

इकाई – 4 अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार

अभ्यास प्रश्न -

4.4 सारांशः

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई ज्योतिष तृतीय वर्ष के द्वितीय खण्ड का चतुर्थ इकाई **'अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार'** से सम्बन्धित है। ताजिकशास्त्र कथित अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार का वर्णन इस अध्याय में किया जा रहा है।

अरिष्ट का अर्थ होता है – अशुभ एवं अरिष्ट भंग का अर्थ होता है – अशुभ का समाधान। इस प्रकार अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग योग के आधार पर ताजिक शास्त्र में शुभाशुभ फलादेशादि कर्तव्य किये जाते है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने षोडश योग, मुन्था फल, सहम योगादि का अध्ययन कर लिया है, आइये अब इस इकाई में अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार का अध्ययन करते है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. अरिष्ट योग क्या है।
2. अरिष्ट भंग क्या है ।
3. अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग का साधन कैसे किया जाता है ।
4. अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग का ताजिक शास्त्र में क्या उपयोग है ।
5. अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग का प्रयोजन क्या है।

4.3 अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार

आचार्य नीलकण्ठदैवज्ञ ने ताजिकनीलकण्ठी में **'अरिष्ट एवं अरिष्टभंग'** के नाम से अध्यायों का सूत्रपात किया है। अरिष्ट का अर्थ होता है – अशुभ । आइए सर्वप्रथम यहॉ अरिष्ट की चर्चा करते है –

लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनुस्थे वा कुजेक्षिते।
ज्ञजीवयोरस्तगयोः शस्त्रघातो विपन्मृतिः ॥

अर्थात् लग्नेश अष्टमस्थान में, अष्टमेश लग्न में हो और मंगल द्वारा देखा जाता हो अथवा बुध, वृहस्पति अस्तंगत हो, तो शस्त्र का आघात और विपत्ति, मरण आदि फल होते है।

अब्दलग्नेशरन्ध्रेशौ व्ययाष्टहिबुकोपगौ।
मुथहासंयुतौ मृत्युप्रदौ तद्धातुकोपतः ॥

अर्थात् वर्षलग्नेश और अष्टमेश यदि ४,८,१२ इन स्थानों में हो, मुथहा से युत हों, तो अपने धातु के प्रकोप से मृत्युप्रद होते हैं।

जन्मलग्नाधिपोऽवीर्यो मृतीशो लग्नगो यदा।

सूर्यदृष्टो भृतिं दत्ते कुष्ठं कण्डूं तथाऽऽपदः ।।

अर्थात् जन्मलग्नेश वर्षकाल में दुर्बल हों, अष्टमेश लग्न में हो और सूर्य से दृष्ट हो तो मरण, कुष्ठरोग, खुजली और विपत्तिदायक होते है।

अस्तगौ मुथहालग्ननाथौ मन्देक्षितौ यदा।

सर्वनाशो मृतिः कष्टमाधिव्याधिभयं रूजः ।।

अर्थात् यदि मुथहेश, वर्षलग्नेश अस्त हों शनि से क्षुतदृष्टि से देखा जाता हो तो सर्वनाश, मरण, कष्ट, मनोव्यथा, व्याधि रोग ये सब होते हैं।

क्रूरमूसरिफोऽब्देशो जन्मेशःक्रूरितिः शुभैः।

कम्बूलेऽपि विपन्मृत्युरित्थमन्याधिकारतः ।।

यदि वर्षेश पापग्रह से ईसराफ योग करता हो, जन्मलग्नेश पापयुत दृष्ट हो, वहॉ शुभ ग्रहों से कम्बूल योग होने पर भी विपत्ति, मरण होता है, इस प्रकार दूसरे ग्रह के अधिकार से भी यह विचार करना चाहिये।

क्रूरा वीर्याधिकाः सौम्या निर्बला रिपुरन्ध्रगाः।

तदाऽऽधिव्याधिभीतिः स्यात्कलिर्हानिस्तथा विपत् ।।

पापग्रह (क्षीणचन्द्रमा, रवि, मंगल एवं शनि) बलवान हों, शुभग्रह पापरहित बुध, गुरू, शुक्र निर्बल हों और छठे, आठवें स्थान में हो, तो आधि- व्याधि भय, कलह, हानि, विपत्ति ये सब अरिष्ट होते हैं।

नीचे शुक्रो गुरूः शत्रुभागे सौख्यलवोऽपि न।

लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनौ वा मृतिमादिशेत् ।।

अर्थात् शुक्र नीच में अर्थात् कन्याराशि में तथा वृहस्पति शत्रु के नवमांश में हो तो सुख का लेश भी नहीं हो अथवा वर्षलग्नेश अष्टम स्थान में और अष्टमेश लग्न में हो तो मरण होगा। ऐसा अरिष्ट फल कहना चाहिये।

निर्बलौ धर्मवित्तेशौ दुष्टखेटास्तनौ स्थिताः।

लक्ष्मीश्चिरार्जिता नश्येद्यदि शक्रोपरक्षिता ।।

भाग्येश, धनेश यदि बलहीन हों, पापग्रह लग्न में हो, तो इन्द्र से भी सुरक्षित बहुत दिनों से जमा की

गयी सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। ऐसा अरिष्ट फल समझना चाहिये।

नीचे चन्द्रेऽस्तगा: सौम्या वियोग:स्वजन: सह।

शरीरपीडा मृत्युर्वा साधिव्याधिभयं द्रुतम्॥

अर्थात् यदि चन्द्रमा नीच राशि में हो, शुभग्रह अस्तंगत हों तो अपने परिजनों से भी वियोग होता है, देह की पीड़ा, शीघ्र मरण, मनस्ताप, तथा व्याधि आदि का भय होता है। ताजिक शास्त्र के अनुसार ऐसा अरिष्ट फल समझना चाहिये।

अब्दलग्नं जन्मलग्नराशिभ्यामष्टमं यदा।

कष्टं महाव्याधिभयं मृत्यु: पापयुतेक्षणात्॥

यदि जन्मलग्न से या जन्मराशि से वर्षलग्न आठवें स्थान में पड़े तो कष्ट, महाव्याधि का भय हो, वहॉ यदि पापग्रह के योग और दृष्टि पड़ती हो तो मरण कहना चाहिये। ऐसा अरिष्ट योग होता है।

जन्मन्यष्टमग: पापो वर्षलग्ने रूगाधिद:।

चन्द्राब्दलग्नपौ नष्टबलौ चेत्स्यात्तदा मृति:॥

जन्म कुण्डली में यदि अष्टम स्थान में कोई पापग्रह हो, वही ग्रह यदि वर्ष लग्न में स्थित हो तो रोग, मनस्ताप को देता है, या चन्द्रमा और वर्षलग्नेश क्षीणबली हों तो मरण होता है। ऐसा अरिष्ट समझना चाहिये।

जन्माब्दलग्नपौ पापयुक्तौ पतितभस्थितौ।

रोगाधिदौ मृत्युकरावस्तगौ नेक्षितौ शुभै:॥

यदि जन्मलग्नेश और वर्षलग्नेश पापग्रहों से युत हो, और ४,६,८,१२ इन स्थानों में हो तो रोग, मनोदु:ख को देते हैं। यदि वे दोनों अस्तंगत हों तथा शुभग्रहों से दृष्ट नहीं हों, तो मृत्युदायक होते हैं।

व्ययाम्बुनिधनारिस्था जन्मेशाब्दपमुन्थहा: ।

एकर्क्षगास्तदा मृत्यु: पापक्षुतदृशा ध्रुवम्॥

यदि एक राशि में गत जन्मलग्नेश, वर्षेश, मुथहा यदि ४,६,८,१२ स्थानों में हों, तो मरण होता है। वहॉ यदि पापग्रह की क्षुत १,४,७,१० दृष्टि से देखा जाता हो तो निश्चय मरण होता है।

चन्द्रो व्यये शनियुत: शुभ: षष्ठोऽर्थनाशकृत्।

चित्तवैकल्यमशुभभेसराफान्न शुभेक्षणात्॥

यदि शनियुक्त चन्द्रमा व्ययभाव में हो, शुभग्रह छठें स्थान में हो, तो धन का नाश करता है। यदि वहॉ पाप से ईसराफ योग होता हो, तो मन की विकलता होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि पड़ती हो, तो वैसे नहीं होता अर्थात् धननाश, चित्त वैकलन्य नहीं होता है। ताजिक शास्त्र में ऐसा अरिष्ट योग

कहा गया है।

चन्द्रोऽर्कमण्डलगतो रिपुरि:फाष्टबन्धुग:।

त्रिदोषतस्तस्य रूजा विविधेज्यदृशा शुभम्॥

यदि अस्तंगत चन्द्रमा छठें, बारहवें, आठवें चौथें स्थानों में किसी में हो, तो त्रिदोष से अनेक प्रकार का रोग होता है, वहॉ यदि गुरू की दृष्टि हो, तो शुभ होता है।

अभ्यास प्रश्न –

1. अरिष्ट का अर्थ होता है –

   क. शुभ ख. अशुभ ग. शुभाशुभ घ. कोई नहीं

2. तनु कहते हैं –

   क. लग्न को ख. भाव को ग. राशि को घ. नक्षत्र को

3. 'अब्द' से तात्पर्य है ?

   क. मुथहा ख. वर्ष ग. सहम घ. वर्षप्रवेश

4. जन्म राशि से वर्षलग्न आठवें स्थान में पड़े तो होता है –

   क. सुख ख. कष्ट ग. कष्ट और महाव्याधि का भय घ. कोई नहीं

5. लग्नाधिपो ..... शुभेक्षितयुतोऽपि वा।

   केन्द्रत्रिकोणगोरिष्टं नाशयेत्सुखवित्तद: ॥

   क. त्रिकोणे ख. बलयुत: ग. शुभेक्षित: घ. दिशेत्

हद्दाहायनलग्नेशौ सप्ताष्टान्त्ये खलान्वितौ ।

स्वदशायां निधनदौ शुभदृष्टया शुभं वदेत्।

यदि पापग्रह से युक्त वर्षलग्न के हद्देश तथा वर्षलग्नेश, ये यदि ७,८,१२ इन स्थानों में हों, तो मरण को देते हैं। शुभ दृष्टि हो तो शुभ समझना चाहिये। ऐसा ताजिकोक्त अरिष्ट योग समझना चाहिये।

अब्दलग्नादृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ रूजा तदा।

एवं वर्षाब्दलग्नेशजन्मेशैरपि बन्धनम्॥

यदि वर्षलग्न से मार्गी ग्रह बारहवें स्थान में हों तथा वक्रीग्रह दूसरे स्थान में हों, तो रोग होता है। इस प्रकार वर्षेश, वर्षलग्नेश, जन्मलग्नेशों से योग होने से बन्धन होता है।

नीचे त्रिराशिपे पापदृष्टे कार्यं विनश्यति।

इन्थिहेशेऽब्दपे वाऽरिमेऽस्तं याते रूजा विपत्॥

यदि लग्न के त्रिराशिप नीचराशि में हो, पाप से दृष्ट हो, तो कार्य का नाश होता है या मुथहेश या वर्षेश, शत्रुराशि में हों , अस्त भी हों तो रोग और विपत्ति होती है।

चन्द्रारिष्ट -

चन्द्रो रि:फषडष्टभूद्युनगतो दृष्टोऽशुभैर्नो शुभै:।
सोरिष्टं विदधाति मृत्युमथवा भौमेक्षणादिग्नभी: ॥
शस्त्राद्वा शनिराहुकेतुभिररेर्भीति रूजं वायुजां।
दारिद्रयं रविणा शुभं शुभदृशेज्यालोकनादादिशेत् ॥

यदि चन्द्रमा वर्ष लग्न से ४,६,७,८,१२ स्थानों में हो, पापग्रहों से दृष्ट हो, शुभग्रह से दृष्ट न हो, तो अरिष्ट या मरण देता है। वहॉ मंगल की दृष्टि से अग्निभय, शनि, राहु केतुओं से देखे जाने पर शस्त्रभय, शत्रुभय, वायु के प्रकोप से रोग उत्पन्न करता है। रवि से दृष्ट हो तो दरिद्र बनाता है। यदि शुभग्रहों की दृष्टि चन्द्रमा पर पड़े या वृहस्पति की दृष्टि पड़े तो शुभ होता है।

क्रूरान्वितेक्षितयुता शनिनेन्थिहाधिव्याधिप्रदा जनुषिरि:फसुखारिरन्ध्रे ।
द्यूने च वर्षतनुनैधनगा मृतिं सा दत्ते खलेक्षितयुतेत्यपि चिन्त्यमार्यै: ॥

अर्थात् पापग्रह से युत या दृष्ट मुथहा यदि शनि से भी दृष्ट हो तो मनोदु:ख और रोग देती है अथवा जन्मलग्न से ४,६,८,९,१२ इनमें से किसी स्थान में स्थित होकर यदि वर्षलग्न से ८ वें स्थान में प्राप्त हो और पापग्रह से दृष्ट युत हो तो मृत्यु देती है।

अब तक आपने जाना कि ताजिक शास्त्र में अरिष्ट योग कौन – कौन से है। आइए अब अरिष्टभंग योग का अध्ययन करते है। अरिष्टभंग का अर्थ होता है – कुण्डली में जो अशुभ योग होते हैं, उनका नाश करने वाले और शुभ फल देने वाले। ताजिकनीलकण्ठी में आचार्य नीलकण्ठदैवज्ञ ने जो अरिष्टभंग की बात की है, उसका वर्णन करते है।

लग्नाधिपो बलयुत: शुभेक्षितयुतोऽपि वा।
केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत्सुखवित्तद: ॥

अर्थात् बल से संयुत वर्षलग्नेश केन्द्र या त्रिकोण १,४,५,७,९,१० स्थानों में हो, शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो अशुभफल का नाश करता है, और शुभफल अर्थात् सुख एवं धन को देता है।

गुरू: केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्ट: शुभेक्षित:।
लग्नचन्द्रेन्थिहारिष्टविनाशार्थसुखं दिशेत् ॥

अर्थात् वृहस्पति केन्द्र या त्रिकोण में हों, पापग्रहों से देखा नहीं जाता हो, किन्तु शुभग्रह से देखा जाता हो, तो वर्षकाल में लग्नकृत, चन्द्रमाकृत, मुथहाजनित अशुभफलों को नाश करते हैं और

धन - सुख को देने वाले होते हैं।

सुखं स्वामियुतं सद्धिर्दृष्टं सौख्ययशोऽर्थदम् ।
लग्ने तृतीयेऽथ गुरूर्जन्मेट सौख्यार्थदः सुखे ।।

चतुर्थ भाव अपने स्वामी से युत हो, शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो सुख, यश तथा धनलाभ को देते है। अथवा वृहस्पति वर्षलग्न में या तीसरे में हो, अथवा वर्षलग्न का स्वामी होकर चौथे स्थान में हो, तो सुख, यश, धन को देता है।

लग्ने द्युनेशस्तनुगः सुरेज्यः क्रूरैरदृष्टः शुभमित्रदृष्टः।
रिष्टं निहंत्यर्थयशः सुखाप्तिं दिशेत्स्वपाके नृपतिप्रसादम् ।।

वर्षलग्न में सप्तमेश और वृहस्पति प्राप्त होकर पापग्रहों से देखा न जाता हो शुभग्रह और मित्रग्रह से दृष्ट हो अथवा शुभग्रहों की मित्र दृष्टि से देखा जाता हो, तो अरिष्टों का नाश करता है। धन, यश, और सुख की प्राप्ति करता है एवं अपनी दशा में राजा की प्रसन्नता कराता है।

बलान्वितो धर्मधनाधिनाथा क्रूरैरदृष्टो तनुगौ यदाऽऽस्ताम्।
राज्यं गजाश्वाम्बररत्नपूर्णं रिष्टस्य नाशोऽप्यतुलं यशश्च ।।

भाग्येश और धनेश बल से युक्त हों, पापग्रहों से देखा नहीं जाता हो और लग्न में गया हो, तो हाथी , घोड़ा,वस्त्र, रत्नों से पूर्ण राज्य मिलता है, और अशुभ का नाश, अधिक यश भी होता है।

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः।
रत्नाम्बरस्वर्णयशःसुखाप्तिर्नाशोऽप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ।।

सभी पापग्रह ३,६,११ स्थानों में हों, और सभी शुभग्रह १,४,५,७,९,१० स्थानों में हों, तो रत्न, वस्त्र, सुवर्ण, यश की प्राप्ति होती है और कष्ट का नाश, तथा शरीर की भी पुष्टि होती है।

यदा सवीर्या मुथहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ।।

यदि मुथहेश बलवान हो, वर्षलग्नेश वा जन्मलग्नेश केन्द्र (१,४,७,१०) , त्रिकोण (५,९) और २,११ स्थानों में हो तो सुख, धन, सुवर्ण, वस्त्रों के लाभ को देते हैं।

तुंगे शनिर्वा भृगुजो गुरूर्वा शुभेत्थशालाद्यवनाद्धनाप्तिम्।
बली कुजो वित्तगतो यशोऽर्थतेजांस्यकस्माच्च सुखानि दद्यात् ।।

अर्थात् शनि तुला में, शुक्र मीन राशि में, वृहस्पति कर्क में हों, वहॉ यदि शुभग्रह से इत्थशाल होता हो, तो यवन जाति से धन लाभ होता है या बलवान मंगल द्वितीय स्थान में हो तो यश, धन एवं अचनाक सुख को देता है।

सूर्येज्यशुक्रा मिथ इत्थशालं कुर्युस्तदा राज्ययश:सुखार्था: ।

सूर्य: कुजो वोपचये ददाति भद्रं यशो मंगलमिथिहाया: ।।

यदि रवि, वृहस्पति, शुक्र ये एक दूसरे से इत्थशाल करते हों, तो राज्य, यश, सुख, तथा धन सभी की प्राप्ति होती है, या यदि सूर्य या मंगल मुथहा स्थान से ३,६,१०,११ इन स्थानों में हो तो कुशल, यश उत्सव और आनन्दादि को देते हैं।

शुक्रज्ञचन्द्रा हद्दे स्वे पापास्त्रयागता यदि।

स्वबाहुबलतो हेमसुखकीर्तीर्नरोऽश्नुते ।।

शुक्र , बुध, चन्द्रमा ये सभी ग्रह यदि अपनी – अपनी हद्दा में हों, पापग्रह (शनि, रवि, एवं मंगल) यदि तीसरे ग्यारहवें स्थान में हों तो मनुष्य अपने बाहुबल से सोना, सुख, तथा यश को भोगता है।

बुधशुक्रौ मूसरीफौ गुरूर्विक्रमभावग:।

तदा राज्यशोहेममुक्ताविद्रुमलब्धय: ।।

यदि बुध शुक्र मूसरीफ योग करते हों, वृहस्पति तीसरे भाव में हों , तो राज, यश, सुवर्ण, मुक्ता, मूंगा ये सभी का लाभ होता है।

भौमो मित्रगृहेऽब्देश: कम्बूली स्वगृहादिगै: ।

गजाश्वहेमाम्बरभूलाभं धत्ते सुखादिकम्।

यदि मंगल वर्षेश होकर मित्रगृह में गया हो, तथा अपने राशि में स्थित ग्रहों से कम्बूल योग करता हो, तो हाथी, घोड़ा, सुवर्ण, वस्त्र, जमीनों का लाभ और सुख - कल्याण होता हैं।

इत्थं जन्मनि वर्षे च योगकर्तुर्बलाबलम्।

विमृश्य कथयेद्राजयोगं तद्भंगमेव च ।।

इस प्रकार से जन्मकाल में तथा वर्षकाल में भी योगकारक ग्रह के बलाबल विचार करके राजयोग या राजभंग योग कहा गया है।

राजभंग योग –

अब्देन्थिहेशादिखगा: खलैश्चेद्युतेक्षिता अस्तगनीचगा वा।

सौम्या बलोना नृपयोगभंगं तदा वदेद्वित्तसुखक्षयांश्च ।।

अर्थात् वर्षेश, मुथहेश, जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश ये सभी यदि पापग्रहों से युत दृष्ट हों या अस्त हों, नीच राशि में हों अथवा शुभग्रह बलहीन हों तो राजयोग का भी खण्डन होता है और धन – सुख का नाश भी होता है। ऐसा ताजिकोक्त राजभंग योग है।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि अरिष्ट का अर्थ होता है – अशुभ। अरिष्ट एवं अरिष्टभंग योग नामक अध्यायों की चर्चा आचार्य नीलकण्ठदैवज्ञ ने स्वग्रन्थ ताजिकनीलकण्ठी में किया है। उन्होंने अरिष्ट योग को बताते हुये कहा है कि लग्नेश अष्टमस्थान में, अष्टमेश लग्न में हो और मंगल द्वारा देखा जाता हो अथवा बुध, वृहस्पति अस्तंगत हो, तो शस्त्र का आघात और विपत्ति, मरण आदि फल होते है। अरिष्टों के शमनार्थ उन्होनें कहा है कि बल से संयुत वर्षलग्नेश केन्द्र या त्रिकोण १,४,५,७,९,१० स्थानों में हो, शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो अशुभफल का नाश करता है, और शुभफल अर्थात् सुख एवं धन को देता है। इस प्रकार से उन्होंने अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग का वर्णन किया है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

अरिष्ट – अशुभ
अरिष्टभंग - अशुभ का नाश करना करने वाला
कुज – मंगल
तनु – लग्न
ज्ञ - बुध
जीव - वृहस्पति
हिबुक - चतुर्थ भाव
क्रूर - पापग्रह
केन्द्र – १,४,७,१०
त्रिकोण – ५,९
इज - वृहस्पति

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. ग
5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अरिष्ट योग क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. अरिष्टभंग योग को उदाहरण सहित बताइये ।
3. अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग योग का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये ।

इकाई – 5 दशा फल में विशेष

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 दशा फल विचार
5.4 दशा फल में विशेष
अभ्यास प्रश्न -
5.5 सारांशः
5.6 पारिभाषिक शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई ज्योतिष तृतीय वर्ष प्रथम पत्र के द्वितीय खण्ड का पंचम इकाई **'दशा फल में विशेष'** से सम्बन्धित है। ताजिकशास्त्र में दशा फल का विवेचन किया गया है। ताजिकोक्त दशा फल के अन्तर्गत ग्रहों की दशाओं में शुभाशभ फल का विवेचन किया गया है। दशा फल में विशेष क्या है ? इसका अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने षोडश योग, मुन्था फल, सहम विचार तथा अरिष्ट एवं अरिष्ट भंग विचार का अध्ययन कर लिया है, आइये अब इस इकाई में दशा फल में विशेष का अध्ययन करते है

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

1. दशा फल क्या है।
2. दशा फल में विशेष का क्या अभिप्राय है ।
3. दशा फल में विशेष विचार क्या – क्या होता है ।
4. दशा फल का प्रयोजन क्या है ।
5. दशा फल का क्या महत्व है।

5.3 दशा फल विचार

ताजिक ग्रन्थ में दशा फल का विस्तृत विवेचन किया गया है। दशा फल के अन्तर्गत सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि ग्रहों का पूर्णबली, मध्यमबली एवं स्वल्प बली दशा फल का वर्णन किया गया है। दशा फल के साथ – साथ दशा फल में विशेष क्या है ? इसका भी सम्यक् विवेचन किया गया है। दशा फल में विशेष जानने के पूर्व संक्षिप्त में ग्रह दशा फल को समझने का प्रयास करते है। सर्वप्रथम दशा क्रम विचार किस प्रकार करते है –

स्पष्टान्सलग्नाखचरान्विधाय राशीन्विनाऽत्यल्पलवं तु पूर्वम्।
निवेश्य तस्मादधिकाकांशक्रमादयं स्यात्तु दशाक्रमोऽब्दे॥
ऊनं विशोध्याधिकतः क्रमेण शोध्यं विशुद्धांशकशेषकैक्यम्।
सर्वाधिकांशोन्मितमेव तत्स्यादनेन वर्षस्य मितिस्तु भाज्या॥
शुद्धांशकांस्तान्गुणयेदनेन लब्धध्रुवांकेन भवेद्दशायाः।
मानं दिनाद्यं खलु तद्ग्रहस्य फलान्यथासां निगदेत्तु शास्त्रात्॥

शुद्धांशसाम्ये बलिनो दशाद्या बलस्य साम्येऽल्पगतेस्तु पूर्वा।
साम्ये विलग्नस्य खगेन चिन्त्या बलादिका लग्नपतेविचिन्त्या॥

सर्वप्रथम लग्न और सूर्यादि सात ग्रहों को स्पष्ट बनाकर उनमें राशि को छोड़कर केवल अंशादिक रखना। अब उनमें जो सबसे छोटा अंश वाला होगा उसको पहली पंक्ति में लिखना चाहिये, अब उससे भी जो आसन्नवर्ती अधिक अंश वाला है। उसके दूसरी पंक्ति में लिखिये, ऐसे ही इस से जो अधिक अंश वाला हो उसको लिखने पर ये **हीनांश** कहलाती है।

इसके बाद प्रथम पात्यंशा प्रथम, तब दूसरी हीनांशा में प्रथम को घटाना चाहिये, तीसरी में दूसरी को घटाना चाहिये, चौथी हिनांश में तीसरी हिनांश को घटाना चाहिये, इसी क्रम से सभी ग्रहों का पात्यंश बनाना चाहिये। यहाँ सभी पात्यंशाओं का योग, सब से अधिक हीनांश अर्थात् सबसे नीचे वाली आठवीं हीनांश के समान ही होती है।

तब एक वर्ष के जो दिनात्मक मान उसको उस सर्वाधिक हीनांश (आठवीं) से भाग देना जो लब्धि आयेगी, वह ध्रवांक कहलाता है। अब प्रत्येक पात्यंश को इस ध्रुवांक से गुणा कर देने पर गुणनफल उस - उस ग्रह के दिनादिक दशामान होंगे। इन दशाओं के आधार पर फलादेश करना चाहिये।

यदि दैववशात् दो या तीन ग्रहों की पात्यंश बराबर ही हों, तो उन ग्रहों में जो सबसे अधिक बली ग्रह होगा, उसकी दशा पहली होगी, उसके पश्चात् उससे न्यून बल ग्रहों की। यदि दो ग्रहों की पात्यंश और बल भी बराबर हों, तो उन में जो अल्प गति वाला ग्रह होगा उसकी पहली दशा होगी।

यदि लग्न और कोई ग्रह समान पात्यंश वाला हो जाये तो लग्नेश की गति और बल के न्यूनाधिकतारतम्य से पहले पीछे दशा होगा ऐसा समझना चाहिये।

लग्नदशा फल –

हेममुक्ताफलद्रव्यलाभमारोग्यमुत्तमम् ।
कुरूते स्वामिसन्मानं दशा लग्नस्य शोभना॥
लाभं दृष्टेन वित्तस्य मानहीनस्य सेवनम्।
मनसो विकृतिं कुर्याद्दशा लग्नस्य मध्यमा॥
विदेशगमनं क्लेशो बुद्धिनाशं कदव्ययम्।
मानहानिं करोत्येव कष्टा लग्नदशा फलम्॥
क्रूरलग्नदशा मध्या सौख्यं स्वल्पं धनव्ययम्।
अंगपीडां त्वपुष्टिं च कुरूते मृत्युविग्रहम्॥

लग्न की अच्छी दशा सोना, मोती, धनद्रव्यों का लाभ, आरोग्य एवं अपने मालिक से सम्मान दिलाती है।

लग्न की मध्यम दशा धन को देखने पर लाभ मानहीन लोगों की सेवा मन के विकार को उत्पन्न करती है।

लग्न की अधम दशा परदेश यात्रा, क्लेश, बुद्धिनाश, अपव्यय, अपमान को करती है। क्रूरलग्न की दशा यदि मध्यम बली हो तो अल्प सुख, धन का व्यय, शरीरपीड़ा, देह दौर्बल्य, मरण और विरोध उत्पन्न करती है।

पूर्णबली, मध्य बली एवं अल्पबली सूर्य दशा फल -

दशा रवे: पूर्णबलस्य लाभं गजाश्वहेमाम्बररत्नपूर्णम्।
मानोदयं भूमिपतेर्ददाति यशश्च देवद्विजपूजनादे: ।।

पूर्णबली सूर्य की दशा हाथी, घोड़ा, सोना, वस्त्र, रत्नों के पूर्ण लाभ और राजा से सम्मान और देवता ब्राह्मणों की पूजा से यश को देती है।

दशा रवेर्मध्यबलस्य पूर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते।
ग्रामाधिकारव्यवसायधैर्यै: कुलानुमानाच्च सुखादिलाभ: ।।

मध्यबली रवि की दशा पूर्वोक्त पूर्णबली सूर्य का जो दशाफल है, उसी को साधारण रूप में देती है और ग्राम के शासन, पंचायती आदि कार्यों के अधिकार, व्यापार, धैर्य से कुल के अनुसार सुख, धन जनों का लाभ इत्यादि फल भी होता है।

दशा रवेरल्पबलस्य पुंसां ददाति दु:खं स्वजनैर्विवादात्।
मतिभ्रमं पित्तरूजं स्वतेजोविनाशनं घर्षणमध्यरिभ्य: ।।

स्वल्पबली सूर्य की दशा पुरूषों को अपने लोगों से दु:ख देती है। मतिभ्रम, पित्त का रोग, अपने पराक्रम का नाश, शत्रुओं से संघर्ष को कराती है।

5.4 दशा फल में विशेष

सूर्य की दशा फल में विशेष –

लग्नाद्रवि: षट्त्रिदशायसंस्थो निन्द्योऽपि दत्ते शुभमर्धमेव।
मध्यत्वमून: शुभतां च मध्यो यातीत्थमत्यन्तशुभ: शुभ: स्यात् ।।

वर्षलग्न से यदि ३,६,१०,११ इन स्थानों में निन्द्य सूर्य भी हो तो शुभ ही फल देते हैं। हीनबली मध्यफल, मध्यबली उत्तम फल को देते हैं। यदि शुभ रवि हों अर्थात् पूर्ण बली हों तो वह अत्यन्त शुभ फल को देते हैं।

चन्द्रदशा फल –

इन्दोर्दशा पूर्णबलस्य दत्ते शुक्लाम्बरस्रङ्मणिमौक्तिकाद्यम्।
स्त्रीसंगमं राज्यसुखं च भूमिलाभं यश: कान्तिबलाभिवृद्धिम् ।।

अर्थात् पूर्णबली चन्द्रमा की दशा में स्वच्छ वस्त्र, स्वच्छ माला मणि मोती आदि, स्त्रीसंग, राज्यसुख, भूमिलाभ, यश और कान्ति की वृद्धि होती है।

मध्यबली चन्द्र दशा फल –

इन्दोर्दशा मध्यबलस्य सर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते।
वाणिज्यमित्राम्बरगेहसौख्यं धर्मे मतिं कर्षणतोऽन्नलाभम्॥

मध्यबली चन्द्रमा की दशा पूर्णबली चन्द्रदशा के फल को मध्यम रूप से देती है और क्रय विक्रय, मित्र, वस्त्र, गृह सुख , धर्म में बुद्धि, खेती से अन्नलाभ आदि फल प्राप्त होते है।

इन्दोर्दशा स्वल्पबलस्य दत्ते कफामयं कान्तिविनाशमाहुः।
मित्रादिवैरं जननं कुमार्या धर्मार्थनाशं सुखमल्पमत्र॥

अल्पबली चन्द्रमा की दशा, कफरोग, कान्तिनाश, मित्रादि इष्ट जनों से भी विरोध, कन्या का जन्म, धर्म -धनों का नाश तथा अल्प सुख को देती है।

चन्द्र दशा फल में विशेष –

षष्ठाष्टमान्त्येतरराशिसंस्थो निन्द्योऽपि दत्तेऽर्थसुखं दशायाम्।
मध्यत्वमूनः शुभतां च मध्यो यातीत्थमिन्दुः सुशुभः शुभः स्यात्॥

यदि निन्दित या हीन बली चन्द्रमा ६,८,१२ स्थानों से भिन्न स्थानों में हो, तो अपनी दशा में धन सुख को देते हैं। यदि उन स्थानों से भिन्न स्थानों में चन्द्रमा हों तो हीनबली भी मध्यम, मध्यम भी शुभ, शुभ भी विशेष शुभ होते हैं।

कुज दशा फल –

दशापतिः पूर्णबलो महीजः सेनापतित्वं तनुते नराणाम्।
जयं रणे विद्रुमहेमरत्नवस्त्रादिलाभं प्रियसाहसत्वम्॥

यदि पूर्णबली मंगल दशापति हो, तो मनुष्यों को सेनापति बनाते हैं और संग्राम में जय, मूंगा, सोना रत्नादि तथा वस्त्रलाभ और प्रिय कार्य के लिये साहस होता है।

मध्यबली कुज फल –

दशापतिर्मध्यबलो महीजः कुलानुमानेन धनं ददाति।
राजाधिकारोऽप्यथ तत्परत्वं तेजस्विताकान्तिबलाभिवृद्धिम्॥

अर्थात् यदि मध्यबली मंगल दशापति हों, तो कुल के अनुसार धन को देते हैं। राजा के यहॉ अधिकार हो और राजा से अभेद हृदय होता है, साथ ही उत्कर्ष का प्रभाव होता है एवं कान्ति और बल की वृद्धि होती है।

अभ्यास प्रश्न –

1. लव का शाब्दिक अर्थ है –

   क. राशि ख. अंश ग. लग्न घ. ग्रह

2. लग्न की अच्छी दशा दशा हो, तो

   क. धन का लाभ होता है।

   ख. शरीर आरोग्य रहता है।

   ग. मालिक से सम्मान मिलता है।

   घ. उपर्युक्त सभी

3. वर्ष लग्न से किन स्थानों पर निन्द्य सूर्य भी शुभ फल देते हैं।

   क. १,४,७,१० ख. २,५,८,११ ग. ३,६,९,१२ घ. ३,६,१०,११

4. निन्दित चन्द्रमा किन – किन स्थानों से इतर हो तो अपनी दशा में सुख देता है।

   क. १,५,७ ख. ६,८,१२ ग. २,५,९ घ. ३,५,१०

5. नष्टबली मंगल किन स्थानों पर हो, तो आधा शुभ फल देते है –

   क. १,४,६ ख. ३,६,११ ग. २,५,८ घ. ९,१०,११

कुज दशा फल में विशेष –

त्रिषडायगतो भौमो नष्टवीर्यः शुभार्धदः।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः॥

यदि नष्टबली मंगल ३,६,११ स्थानों में हों, तो आधा शुभफल को देते हैं,यदि हीन बली हों तो मध्यफल, यदि मध्यबली हों तो शुभ, शुभ हो तो अत्यन्त शुभ होते हैं ।

बुध दशा फल –

दशापतिः पूर्णबलो बुधश्चेद्यशोऽभिवृद्धिं गणितात्सुशिल्पात्।

तनोति सेवां सफलां नृपादेर्दौत्यं च वैदूष्यगणोदयं च॥

यदि पूर्णबली बुध दशापति हो, तो गणित तथा उत्तम शिल्प विद्या से यश की वृद्धि होता है। राजा आदि के सेवा में सफल होता है साथ ही वह राजदूत होता है एवं पाण्डित्यों की वृद्धि होती है।

दशापतिर्मध्यबलो बुधश्चेद् गुरोः सुहृदभ्यो लिपिकाव्यशिल्पैः।

धनाप्तिदायी सुतमित्रबन्धुसमागमान्मध्यममेव सौख्यम्॥

यदि मध्यबली बुध दशापति हो, तो गुरू, मित्रों, लेख – कविता एवं कारीगरी से धन लाभ होता है

और पुत्र, मित्र बान्धवों के समागम से सामान्य सुख को देता है।

दशापतौ स्वल्पबले बुधे स्यान्मानस्य नाश: स्वजनापवाद:।
अकार्यकोपस्खलनाद्यनिष्टं धनव्ययं रोगभयं च विन्द्यात्॥

यदि अल्पबलवान बुध दशापति हो, तो अपमान, अपने लोगों में कलंक, बिना कारण कार्य में क्रोध, गिरने आदि का अनिष्ट होता है और धनहानि, रोगभय भी उत्पन्न होता है।

बुध दशा फल में विशेष –

षडष्टान्त्येतरर्क्षस्थो नष्टो ज्ञोऽर्धशुभप्रद:।
मध्यो हीन: शुभो मध्य: शुभोऽत्यन्तं शुभावह:॥

नष्टबली बुध छठें, आठवें तथा बारहवें स्थानों में स्थित नहीं हो, तो आधा शुभफल को देता है। और हीन बली हो तो मध्यम फल देता है। यदि मध्यबली हो तो शुभ फल देता है। शुभ हो तो अत्यन्त शुभ फल देता है।

गुरू दशा फल –

गुरोर्दशा पूर्णबलस्य दत्ते मानोदयं राजसुहृदगुरूभ्य:।
कीर्त्यर्थलाभोपचयं सुखानि राज्यं सुताप्तिं रिपुरोगनाशम्॥

पूर्णबली वृहसप्ति की दशा राजा, मित्र, गुरूओं से गौरवलाभ और यश, धन, लाभ की वृद्धि, सुख, राज्य, पुत्र लाभ, शत्रुनाश, रोगनाश को देती है।

मध्यबली गुरू दशा फल –

गुरोर्दशा मध्यबलस्य धर्मे मतिं सखित्वं नृपमन्त्रिवर्गै:।
तनोति मानार्थसुखाभिलाषं सिद्धिं सदुत्साहबलातिरेकाम्॥

मध्यबली वृहस्पति की दशा धर्म में बुद्धि, राजा या मन्त्रियों से मित्रता, सम्मान, धन, सुख की अभिलाषा और अच्छे उत्साह और बल से कार्य सिद्धि आदि कराती है।

दशा गुरोरल्पबलस्य दत्ते रोगं दरिद्रत्वमथारिभीतिम्।
कर्णामयं धर्मधनप्रणाशं वैराग्यमर्थं च गुणं न किंचित्॥

अल्पबली वृहस्पति की दशा रोग, दरिद्रता, शत्रुभय, कर्णरोग,धर्मनाश, धननाश, वैराग्य तथा न तो कुछ धन, न तो कुछ गुण ही को देती है।

गुरू दशा फल में विशेष –

षडष्टरि: फेतरगो गुरूर्निन्द्योऽर्धसत्फल:।
मध्यो हीन: शुभो मध्य: शुभोऽत्यन्तं शुभावह:॥

नष्टबली वृहस्पति यदि ६,८,१२ स्थानों से भिन्न स्थानों में हों तो आधा शुभफल ही देते हैं। यदि हीन बली भी हों तो मध्यम फल को देते हैं। यदि मध्यमबली हों तो शुभ फल देते हैं। यदि शुभ रहते हैं तो अत्यन्त शुभ फल को देते हैं।

शुक्र दशा फल –

दशा भृगो: पूर्णबलस्य सौख्यं स्रग्गन्धहेमाम्बरकामिनीभ्य: ।
हयादिलाभ: सुतकीर्तितोषान्नैरूज्यगान्धर्वरति: पदाप्ति: ।।

पूर्णबली शुक्र की दशा में माला, सुवर्ण, वस्त्र, स्त्री इन सभी से सुख और घोड़े आदि सवारियों का लाभ, पुत्र, कीर्ति, सन्तोष का लाभ, आरोग्य, संगीत प्रेम, स्थान की प्राप्ति आदि फल होते है।

दशाभृगोर्मध्यबलस्य दत्ते वाणिज्यतोऽर्थागमनं कृषेश्च ।
मिष्ठान्नपानाम्बरभोगलाभं मित्रांश्च योषित्सुतसौख्यलाभम् ।।

मध्यबली शुक्र की दशा व्यापार और खेती से भी धन लाभ कराती है और मीठे अन्न् पदार्थों के भोग सुख और अच्छे वस्त्रों के भोग सुख को देती है। मित्रों से मिलाती है। स्त्री पुत्र सुखों को भी कराती है।

अल्पबली शुक्र दशा फल –

दशा भृगोरल्पबलस्य दत्ते मतिभ्रमं ज्ञानयशोऽर्थनाशम् ।
कदन्नभोज्यं व्यसनामयार्ति स्त्रीपक्षवैरं कलिरप्यरिभ्य: ।।

अल्प बली शुक्र की दशा बुद्धि, ज्ञान, यश और धनों का नाश करती है, कुत्सित अन्न का भोजन, झंझट, रोगों से पीड़ा को देती है, स्त्री पक्ष से विरोध, तथा शत्रु से झगड़ा कराती है।

हीनबली शुक्र दशा फल –

दशा भृगोर्नष्टबलस्य दत्ते विदेशयानं स्वजनैर्विरोधम् ।
पुत्रार्थभार्याविपदो रूजश्च मतिभ्रमोऽपि व्यसनं महच्च ।।

नष्टबली शुक्र की दशा परदेश यात्रा, अपने बन्धु – बान्धवों से विरोध, पुत्र – धन, स्त्री विपत्ति, रोग तथा बुद्धि के भ्रम को उत्पन्न करती है।

शुक्र दशा फल में विशेष –

षडष्टरि:फेतरगो भृगुर्निन्द्योऽर्धसत्फल: ।
मध्यो हीन: शुभो मध्य: शुभोऽत्यन्तं शुभावह: ।।

६,८,१२ से अतिरिक्त स्थानों में यदि शुक्र निन्दित भी हों तो आधा शुभ फल देते हैं। यदि उक्त से भिन्न स्थान में हीन भी हों तो मध्य, मध्यम हों तो शुभ, शुभ हों तो अत्यन्त शुभ फल होते है।

शनि दशा फल –

दश शने: पूर्णबलस्य दत्ते नवीनवेश्माम्बरभूमिसौख्यम् ।
आरामतोयाश्रयनिर्मितिश्च म्लेच्छातिसंगान्नृपतिर्धनाप्ति: ।।

पूर्णबली शनि की दशा नवीन मकान, नवीन वस्त्र, नवीन जमीन का सुख देती है और बागीचा, कुँआ, पोखरा, तालाब का निर्माण कराती है और म्लेच्छ जनों की अधिक संगति से तथा राजा से धन लाभ कराती है।

मध्यबली शनि दशा फल –

दशा शनेर्मध्यबलस्य दत्ते खरोष्ट्रपाखण्डजतो धनाप्तिम् ।
वृद्धांगनासंगमदुर्गरक्षाऽधिकार चिन्ताविरसान्नभोग: ।।

मध्यबली शनि की दशा में गधा, क्रमेलक, पाखण्डी लोगों से धन लाभ होता है। वृद्ध स्त्री का संग, किला की रक्षा की चिन्ता, रसहीन कदन्न भोजन भी होते हैं।

हीनबली शनि दशा फल –

दशा शने: स्वल्पबलस्य पुंसां तनोति दु:खं रिपुतस्करेभ्य: ।
दारिद्र्यमात्मीयजनापवादं रोगं च शीतानिलकोपमुग्रम् ।।

हीनबली शनि की दशा में पुरूष को शत्रु , चौरों से दु:ख होता है। दरिद्रता आती है। अपने लोगों से कलंक होता है, रोग और सर्दी, वायु के उग्र प्रकोप भी होते हैं।

नष्टबली शनि दशा फल –

दशा शनेर्नष्टबलस्य पुंसामनेकधातुव्यसनानि दत्ते ।
स्त्रीपुत्रमित्रस्वजनैर्विरोधं रोगाभिवृद्धिं मरणेन तुल्यम् ।।

नष्टबली शनि की दशा लोगों को अनेक प्रकार के दु:ख को देती है या त्रिदोष के प्रकोप से क्लेश देती है। स्त्री – पुत्र , मित्र परिजनों से विरोध, रोग की वृद्धि और मृत्युतुल्य कष्ट को देती है।

शनि दशा फल में विशेष –

त्रिषष्ठलाभोपगतो मन्दो निन्द्योऽर्धसत्फल: ।
मध्यो हीन: शुभो मध्य: शुभोऽत्यन्तं शुभावह: ।।

३,६,११ स्थानों में स्थित शनि यदि निन्द्य अर्थात् हीन बली भी हों तो शुभ फल देते हैं। यदि हीन वीर्य भी हों, तो मध्य, मध्य भी हों, तो शुभ, शुभ भी हों तो अत्यन्त शुभफल होता है।

लग्नदशा फल –

दशा तनो: स्वामिबलेन तुल्यं फलं ददातीत्यपरो विशेष: ।

चरे शुभा मध्यफलाऽधमा च द्विमूर्तिमेऽस्माद्विपरीतमूह्यम् ।।

लग्न की दशा अपने स्वामी के बलानुसार फल को देती है, और यहॉ कुछ और विशेष है – चर लग्न में द्रेष्काण भेद से शुभ मध्य अनिष्ट फल होता है । द्वि:स्वभाव राशि के द्रेष्काण भेद से इस से विपरीत अर्थात् अशुभ, मध्य, शुभ फल होते हैं। विशेष स्पष्टता के लिये चक्र लिखता हूँ। यहॉ यह भी युक्ति है कि –

राशि	चर	स्थिर	द्वि:स्वभाव
प्रथम द्रेष्काण	शुभ	अनिष्ट	अधम
द्वितीय द्रेष्काण	मध्य	शुभ	मध्यम
तृतीय द्रेष्काण	अशुभ	सम	शुभ

'वर्गोत्तमा नवांशाश्चरादिषु प्रथममध्यान्त्या:' । इस वचन के अनुसार चर राशि का प्रथमनवमांश, स्थिर का मध्य नवमांश, द्वि:स्वभाव का अन्त्यनवमांश ये वर्गोत्तम हैं। ऐसे ही चर में प्रथम, स्थिर में द्वितीय, द्वि:स्वभाव में अन्तिम नवमांश ये वर्गोत्तम द्रेष्काण हैं। इसलिये इन द्रेष्काणों की लग्नदशा अच्छी होती है।

स्थिरराशि में द्रेष्काण भेद से शुभाशुभ समान फल होता है, इस प्रकार द्रेष्काणों के भेद से शुभाशुभ फल प्राचीनाचार्य द्वारा कहा गया है। यहॉ शुभग्रह और स्वामी के योग दृष्टि से शुभ और पापग्रहों की दृष्टि और योग से अशुभ लग्नदशाफल ग्रहण करना चाहिये।

5.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ताजिक ग्रन्थ में दशा फल का विस्तृत विवेचन किया गया है। दशा फल के अन्तर्गत सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि ग्रहों का पूर्णबली, मध्यमबली एवं स्वल्प बली दशा फल का वर्णन किया गया है। दशा फल के साथ – साथ दशा फल में विशेष क्या है ? इसका भी सम्यक् विवेचन किया गया है। जैसे सूर्य दशा फल में विशेष में वर्षलग्न से यदि ३,६,१०,११ इन स्थानों में हों तो निन्द्य भी सूर्य शुभ ही फल देते हैं। हीनबली मध्यफल, मध्यबली उत्तम फल को देते हैं। यदि शुभ रवि हों अर्थात् पूर्ण बली हों तो वह अत्यन्त शुभ फल को देते हैं। इसी प्रकार चन्द्रादि समस्त ग्रहदशा फल में विशेष का अध्ययन आप प्रस्तुत अध्याय में करेंगे।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

पूर्णबली – पूर्ण रूप से बलवान

सम्यक् - अच्छा

खचर – आकाश में विचरण करने वाला

खगेन – ग्रह से

हेम - सोना

अम्बर - वस्त्र

वाणिज्य - व्यापार

कुमार्या - कुमारी

जनन – जन्म

धर्मार्थ – धर्म के लिये

अल्प - कम

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. घ
3. घ
4. ख
5. ख

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – मूल लेखक आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – टीकाकार - सुरेश चन्द्र मिश्र

ताजिक नीलकण्ठी – टीकाकार – आचार्य विश्वनाथ

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. षोडश योग क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. इकबाल, इन्दुवार योग को उदाहरण सहित बताइये ।
3. इत्थशाल योग का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये ।

खण्ड - 3

भावफल

इकाई – 1 1 - 3 भावफल

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 1-3 भावफल विचार

बोध प्रश्न

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के तृतीय खण्ड के प्रथम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार 1-3 भावफल विचारों का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वर्षफल व ताजिकशास्त्रोक्त षोडश योग का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहाँ इस इकाई में आप प्रथम भाव से लेकर तृतीय भाव तक के फल का अध्ययन करेगें।

1-3 से तात्पर्य प्रथम भाव से लेकर तृतीय भाव तक से है। इन भावों में स्थित ग्रहों का फल ताजिक शास्त्र के अनुसार किस प्रकार होगा, कैसा होगा ? इन विषयों की जानकारी प्राप्त करेगें।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से 1-3 भावफल विचार से सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. भाव क्या है।
2. भावफल क्या है।
3. भावों में स्थित ग्रहों के फल क्या है।
4. प्रथम भाव से लेकर तृतीय भाव तक के ग्रहफल क्या है।
5. भावफल का क्या महत्व है।

1.3 1-3 भावफल विचार

जन्माङ्ग चक्र में 1 से लेकर 12 तक द्वादश भाव होते है। उनमें स्थित ग्रहों के अनुसार ही उनका फलादेश आदि कार्य किया जाता है। आइये हम ताजिक शास्त्र के अन्तर्गत वर्षफल सम्बन्धित भावों के फल का विचार करते है -

प्रथम भाव का विचार –

यो भाव: स्वामिसौम्याभ्यां दृष्टो युक्तोऽयमेधते।

पापदृष्टयुतौ नाशो मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत्॥

य: कश्चिदपि भाव: स्वामिशुभग्रहाभ्यां दृष्ट:, वा युक्त:, भवेत् सोऽयं भाव: एधते – वर्धते। यदि पापदृष्टयुतस्तदा नाशस्तद्भावफलक्षयो भवति। मिश्रै: = पापशुभैर्युतदृष्टस्तदा मिश्रफलं = शुभमशुभं च वदेत्।

अर्थ – जो कोई भाव अपने स्वामी से या शुभग्रह से युत या दृष्ट हो, तो उस भाव का फल बढ़ता है। यदि पापग्रह से युत दृष्ट हो तो उस भाव का फल नाश हो जाता है। यदि पापग्रह, शुभ दोनों से युत या दृष्ट हो तो शुभ अशुभ दोनों प्रकार के फल होते है। यह सामान्य रीति सभी भावों में समझना चाहिये।

लग्नाधिपे वीर्ययुते सुखानि नैरूज्यमर्थागमनं विलासः।
स्यान्मध्यवीर्येऽल्पसुखार्थलाभः क्लेशाधिकत्वं विपदल्पवीर्ये ।।

अर्थ – यदि वर्ष लग्नेश पूर्णबली हो, तो सुख, आरोग्य, धनलाभ, मनोविनोद ये सब होते है। यदि वर्षलग्नेश मध्यबली हो तो अल्प सुख, धनों का लाभ होता है यदि वर्षलग्नेश हीनबल हो तो विशेष क्लेश और विपत्ति होती है।

जन्माब्दांगपतीन्थिहापतिसमानाथाद्यधीकारवान्।
सूर्यो नष्टबलस्त्वगक्षिविलयं कुर्यान्निरूत्साहताम् ।।
नीचत्वं पितृमातृतोऽप्यभिभवश्चन्द्रेऽक्षिकार्यक्षयो।
दारिद्रयं च पराभवो गृहकलिर्वध्याधिभीतिस्तदा ।।

अर्थ – यदि जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मुथहेश, वर्षेश त्रिराशीश इन सभी में कोई अधिकार वाला होकर सूर्य यदि हीनबल हो, तो त्वचा के रोग (खुजली, खाज, दाद आदि) नेत्र रोग (माणा, फूला, रोहा रतोंधी आदि) को करते है। और उत्साहहीनता (आलस्य), नीचता क्षुद्रवृत्ति से निर्वाह, पितामाता से भी क्लेश, फल को देते है। यदि पूर्वोक्त अधिकारी होकर चन्द्रमा हीनबली हो, तो नेत्रनाश, कार्यनाश, दरिद्रता, पराभव, गृह में कलह, रोगभय मनस्ताप ये सब फल होते है।

भौमे चलत्वं भीरूत्वं बुधे महापराभवौ।
शुक्रे धर्मक्षयः कष्टफला जीवनवृत्तयः ।।
शुक्रे विलाससौख्यानां नाशः स्त्रीभिः सर्म कलिः।
सौरे भृत्यजनाद्दुःखं रूजो वातप्रकोपतः ।।

अर्थ – उक्त अधिकारी होकर यदि मंगल दुर्बल् हो तो चंचलता और कायरता होती है वैसे बुध में मतिभ्रम और क्लेश होता है, ऐसे वृहस्पति अधिकारी होकर यदि निर्बल हो तो धर्म का नाश, और जीवन में अन्तिम समय क्लेश विशेष हो, इसी तरह शुक्र में मनोदु:ख और क्लेश भी होता है। स्त्रियों के साथ कलह होता है, और इसी प्रकार शनि होने से नौकर से दु:ख होता है, वायु के प्रकोप से रोग होने की आशंका बनी होती है।

लग्नं पापयुतं सौम्यैरदृष्टं सहितं नृणाम्।

विवादं वंचनां दुष्टमशमनं चापि विन्दति ।।

अर्थ – वर्षलग्न यदि पापग्रहों से युत हो, शुभग्रहों से न तो दृष्ट हो, न तो युत ही हो, तो मनुष्य को विवाद, प्रतारण और कदन्नभोजन भी होते है।

जन्माब्दाङ्गपरन्ध्रपाब्दमुथहानाथा बलाढयास्तदा।

रम्यं वर्षमुशन्ति सर्वमतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः।

षष्ठाष्टान्त्यगता न चेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदा

निर्वीर्या यदि वर्षमेतदशुभं वाच्यं शुभेक्षां विना ।।

यदि जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, अष्टमेश, वर्षेश, मुथहेश ये चारों ग्रह बलयुक्त हो और ६,८,१२ इन स्थानों में नहीं हों, तो सम्पूर्ण वर्ष शुभ ही होता है और सुख, यश, तथा धनलाभ होता है। यदि वे सभी ग्रह निर्बल हो और ६,८,१२ इन स्थानों में हो, तो दुःख भय को देते है, यहॉ शुभग्रह की दृष्टि नहीं होने से यह सम्पूर्ण वर्ष अशुभ ही कहना चाहिये।

सूतौ धनप्रदः खेटो धनाधीशश्च तौ यदि।

वर्ष नष्टौ वित्तनाशोऽन्यनिःक्षेपापवाददौ ।।

भाषार्थ - जन्म काल में धनयोग करने वाला ग्रह, और धन भावेश ये दोनों ग्रह अस्तंगत हो तो धननाश और दूसरे के रक्षित धन का कलङ्क होता है।

एवं समस्त भावानां सूतौ नाथाश्च पोषकाः।

अब्दे नष्टबलास्तेषां नाशायोह्या विचक्षणः ।।

भाषार्थ – इसी प्रकार जन्मकुण्डली में सभी भावों के जो स्वामी तथा प्रत्येक भावों के पोषक जो ग्रह है, वे सब यदि हीनबली हो, तो उन भावों के नाश के लिये होते है, यह ज्योतिर्विदों को समझना चाहिये।

लग्नस्थग्रहाणां फलनि या प्रथम भाव में स्थित सभी ग्रहों का फल -

सूर्यारमन्दास्तनुगा ज्वारार्ति धनक्षयं पापयुगिन्दुरित्थम्।

शुभान्वितः पुष्टतनुश्च सौख्यं जीवज्ञशुक्रा धनधान्यलाभम् ।।

भाषार्थ – सूर्य मंगल शनि ये तीनों या हर एक ग्रह लग्न में स्थित हो तो ज्वर की पीड़ा हो और धनक्षय होता है। यहॉ सूर्य लग्न में रहने से पित्तज्वर, मंगल लग्न में रहने से रक्तपित्त शीतला ज्वर हो। यदि शनि लग्न में हो तो वायुमूलक ज्वर हो, तो ज्वर कफ होता है, धनक्षय होता है। यदि शुभयुत शुभदृष्ट पूर्णबिम्ब चन्द्रमा लग्न में हो तो सुख देते है और वृहस्पति, बुध, शुक्र ये तीनों या हर एक लग्न में हो, तो धन लाभ - धान्य लाभ करातेहै।

ताजिक शास्त्र के अनुसार इसी प्रकार प्रथम (1) भावफल को समझना चाहिये।

अथ द्वितीय (2) भावफल विचार -

वित्ताधिपो जन्मनि वित्तगोऽब्दे जीवो यदा लग्नपतीत्थशाली।

तदा धनाप्तिः सकलेऽपि वर्षे क्रूरेसराफे धनधान्यहानिः॥

जन्मकुण्डल्यां वित्ताधिपः जीवः अब्दे वित्तगः जन्मलग्नाद्द्वितीयेशो गुरूर्वर्षलग्नाद्द्वितीयगत इत्यर्थः। अथवा यत्र जन्मलग्नं वृश्चिककुम्भयोरन्यतरं स्यात्तत्रैव द्वितीयेशो गुरूर्भवितुं शक्यते। तादृशो जीवो लग्नपतीत्थशाली वर्षलग्नेशेन सह मुथशिली, तदा सकलेऽपि वर्षे धनाप्तिर्भवति। अथ तादृशस्य जीवस्य क्रूरेसराफे पापग्रहकृतेसराफे धनधान्यहानिः स्यात्।

भाषार्थ - जन्मकुण्डली में वृश्चिक या कुम्भ इन दोनों में कोई एक लग्न हो तब द्वितीयेश गुरू यदि वर्षप्रवेश कुण्डली में दूसरे भाव में हो, तो वर्ष भर धन लाभ होता है। यदि वैसे गुरू को पापग्रह से ईसराफ योग होता हो, तो धनधान्य का नाश होता है।

जन्मन्यर्थावलोकीज्योऽब्देऽब्देशो बलवान्यदा।

तदा धनाप्तिर्बहुला विनाऽऽयासेन जायते॥

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में वृहस्पति लग्न को देखे, और वर्ष काल में बली होकर वर्षेश हो, तो बिना प्रवास से अनेक प्रकार से धनलाभ होता है।

एवं यद्भावपो जन्मन्यब्दे तद्भावगो गुरूः।

लग्नेशेनेत्थशाली चेत्तद्भावजसुखं भवेत्॥

अर्थ – इस प्रकार जन्मकुण्डली में वृहस्पति जिस भाव का स्वामी हो वर्षकुण्डली में यदि उसी भाव में स्थित हो जाय और वर्षलग्नेश से इत्थशाल होता हो तो उस भाव का सुख होता है।

तथा जनुषी यं पश्येद्भावमब्देऽब्दपो गुरूः।

तदा तद्भावजं सौख्यमुक्तं ताजिकवेदिभिः॥

अर्थ – जन्मकाल में जिस भाव को गुरू देखे, वर्ष में वर्षेश हो तो उस भाव से जायमान सुख होता है, यह ताजिक वेत्ताओं ने कहा है।

जन्मषष्ठाधिपः सौम्यः षष्ठोऽब्दे स्वल्पलाभदः।

पापार्दिते गुरौ रन्ध्रेऽर्थे वा दण्डः पतेद् ध्रुवम्॥

अर्थ – जन्म काल में षष्ठेश बुध वर्षकाल में यदि षष्ठस्थान में हो तो अल्प लाभ को देता है। (यह योग जिसका मेष या मकर राशि जन्म लग्न है, उसी के जन्म कुण्डली में हो सकता है, और में नहीं)

या वृहस्पति वर्ष काल में पापग्रह से पीड़ित होकर आठवें दूसरे स्थान में हो तो निश्चय करके दण्ड पड़ता है।

बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों में सही विकल्प चुनिये –

1. कोई भाव अपने स्वामी से या शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो उस भाव का फल निम्न में क्या होता है –
   क. घटता है ख. बढ़ता है ग. घटता – बढ़ता दोनों है घ. कोई नहीं
2. जन्म काल में धनयोग करने वाला ग्रह, और धन भावेश ये दोनों ग्रह अस्तंगत हो तो होता है-
   क. धननाश ख. धनवृद्धि ग. समान रूप से धनागम घ. ये सभी
3. लग्नेश का अर्थ होता है –
   क. लग्न ख. लग्न स्पष्ट ग. लग्न का स्वामी घ. लग्नार्क
4. मुथहेश क्या है –
   क. ताजिकोक्त योग ख. योग ग. मुथहा का स्वामी घ. ये सभी
5. कुण्डली में 6,8,12 स्थान होते है –
   क. अशुभ ख. शुभ ग. शुभाशुभ घ. कोई नहीं

गुरूवित्ते शुभैर्दृष्टयुतो वा राज्यसौख्यद:।
जन्मन्यब्दे च मुथहाराशि पश्यनिवेशेषत: ।।

अर्थ – वृहस्पति द्वितीय भाव में हो और शुभग्रहो से दृष्ट युता हो तो राज्य सुख को देते है या जन्मकाल में वर्षकाल में भी मुथहा के राशि को देखता हो तो विशेषरूप से राज्य सुख को देता है।

एवं सितेऽब्दपे भूरि द्रव्यं धान्यं च जायते।
वित्तलग्नेशसंयोगो वित्तसौख्यविनाशद: ।।

वृहस्पति के समान यदि शुक्र वर्षेश हो तो बहु द्रव्य और धान्य होता है। वर्षकुण्डली में धनेश लग्नेश का योग होकर ईसराफ योग यदि होता हो, तो धनसुख का नाश होता है।

एवं बुधे सवीर्ये स्याल्लिपिज्ञानोद्यमैर्धनम्।
जन्मलग्नगता: सौम्या वर्षेऽर्थे धनलाभदा: ।।

इस प्रकार बुध यदि बलवान होकर धन भाव में हो, तो लेख कार्य से या ज्ञान के उद्योग से धन होता है या शुभ ग्रह सभी जन्मलग्न में हो, वर्षकाल में दूसरे भाव में पड़े तो धनलाभ को देते है।

मालसद्मनि वित्ते वा बुधेज्यसितसंयुते।

तैर्वा दृष्टे धनं भूरि स्वकुले राज्यमाप्नुयात्॥

अर्थ – अर्थ सहम बुध शुक्र वृहस्पति से युत या दृष्ट होकर यदि धनभाव में ही हो तो विशेष धन होता है ओर अपने कुल में राज्य पाता है।

अर्थार्थसहमेशौ चेच्छुभैर्मित्रदशेक्षितौ।

बलिनौ सुखतो लाभप्रदौ यत्नादरेर्दशा॥

अर्थ – धन सहमेश धनभावेश ये दोनों यदि शुभग्रहों से मित्र दृष्टि से देखा जाता हो तो बिना प्रयास लाभप्रद होते है। यदि वे दोनों शुभ ग्रहों से शत्रु दृष्टि से देखे जाय तो प्रयास से धनप्रद होते है।

मित्रदृष्ट्या मुथशिलेऽर्थाङ्गपोः सुखतो धनम्।

तयोर्मूसरिफे वित्तनाशदुर्नयभीतयः॥

अर्थ – लग्नेश और धनेश की मित्र ३,५,९ख्,११ दृष्टि से इत्थशाल होने पर अनायास धनलाभ होता है। उन दोनों (लग्नेश और धनेश) में ईसराफ योग होने पर धननाश, अन्याय से भय ये सब होते है।

जन्मनीज्योऽस्ति यद्राशौ स राशिर्वर्षलग्नगाः।

शुभस्वामीक्षितयुतो नैरूज्यस्वाम्यवित्तदः॥

अर्थ – जन्मकुण्डली में वृहस्पति जिस राशि में हो, वह राशि यदि वर्ष कुण्डली में लग्न हो और शुभग्रह से अपने स्वामी से दृष्ट युत हो तो आरोग्य, आधिपत्य और धन को देता है।

सूतौ लग्ने रविर्वर्षे धनस्थो धनसौख्यदः।

शनौ वित्ते कार्यनाशो लाभोऽल्पोऽथ धनव्ययः॥

अर्थ – जन्म कुण्डली में सूर्य लग्न में हो, वर्ष कुण्डली में दूसरे भाव में हो, तो धन सुख को देता है। अथवा शनि वर्ष कुण्डली में दूसरे भाव में हो, तो कार्य का नाश और अल्प लाभ और धन हानि होता है। ऐसा भावफल कहना चाहिये।

भ्रातृसौख्यं गुरूयुते भूतयः स्युः शुभेक्षणात्।

क्रूरयोगेक्षणात्सर्वं विपरीतं फलं भवेत्॥

अर्थ – द्वितीयस्थान स्थित शनि यदि वृहस्पति से युत हो, तो भ्रातृसुख होता है। यदि गुरूयुक्त द्वितीयस्थान स्थित शनि पर शुभग्रहों की दृष्टि पड़ती हो, तो बहुत ऐश्वर्य होते है और पापग्रहों के संयोग से दृष्टि से सब कथित फल विपरीत अर्थात् अशुभ हो जाते है। ऐसा भावफल समझना

चाहिये।

वित्तेशो जन्मनि गुरूर्वर्षं वर्षेशतां दधत् ।

यद्भावगस्तमाश्रित्य लाभदो लग्न आत्मन: ।।

अर्थ – गुरू जन्मकुण्डली में धन भाव गत हो, वर्षप्रवेशकाल में वर्षेश होकर जिस भाव में हो उस भाव का आश्रय लेकर लाभप्रद होता है । जैसे लग्न में हो तो अपने लोगों से ही धनागम होता है, क्योंकि लग्न से आत्मा का विचार होता है । ऐसे धन भाव में हो तो कुटुम्ब से, तीसरे में हो तो सहज से, चौथे में माता से, वाहन से, गृह से और जल से धन का आगमन होगा, ऐसा फल कहना चाहिये ।

वित्ते सुवर्णरूप्यादेर्भ्रात्रादे: सहजर्क्षग: ।

पितृमातृक्षमादिभ्यो वित्तं सुहृदि पंचमे ।।

सुहृत्तनय: षष्ठेऽरिवर्गाद्धानिभीतिद: ।

स्त्रीभ्यो द्यूनेऽष्टमे मृत्युरर्थहेतु: पथोऽङ्कगे ।।

खे नृपादेर्नृपकुलादायेऽन्त्ये व्ययदो भवेत् ।

इत्थं विमृश्य सुधिया वाच्यमित्थं परे जगु: ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में धनेश और वर्ष प्रवेश काल में वर्षेश होकर गुरू यदि धन भाव में हो तो सोना चॉंदी का लाभ, 3 भाव में भाई से लाभ, 4 भाव में माता, वाहन एवं भूमि से लाभ, 5 वें भाव में मित्र और पुत्र से लाभ, 6 वें भाव में शत्रुओं से लाभ, 7 वें भाव में स्त्री से लाभ, 8 वें भाव में मरण, 9 वें भाव में धन लाभ का रास्ता, 10 वें में राजा से, 11 वें भाव में राजा के वंश से, तथा 12 वें भाव में व्यय कराता है । इस तरह भावों का फल समझना चाहिये ।

द्वितीय (3) भाव में स्थित समस्त ग्रहों का भाव फल –

चन्द्रज्ञजीवास्फुजितो धनस्था धनागमं राज्यसुखं च दद्यु: ।

पापा धनस्था धनहानिदा स्युर्नृपाद्भयं कार्यविघातमार्कि: ।।

भाषार्थ – चन्द्रमा, बुध, शुक्र ये तीनों ग्रह द्वितीय भाव में हो तो धन लाभ, राज्यसुख प्रदान करते है और सूर्य , मंगल एवं शनि, राहु, केतु ये सभी ग्रह द्वितीय भाव में हो, तो धनहानि करने वाले होते है । शनि यदि दूसरे भाव में हो तो राजा से भय और कार्यहानि को करते है । ऐसा भावफल ज्योतिर्विदों को कहना चाहिये ।

अथ तृतीय (3) भाव फल विचार –

अब्देशेऽर्के सिते वाऽपि सबले पापवर्जिते ।

सौख्यं मिथ: सोदराणां व्यत्ययाद्व्ययत्ययं वदेत् ।।

भाषार्थ – सबल सूर्य या सबल शुक्र वर्षेश हो और पापग्रहों से दृष्ट युत नहीं हो तो सहोदरों में परस्पर सुख होता है। विपरीत से विपरीत फल कहे। अर्थात् दुर्बल रवि या शुक्र वर्षेश होकर पापग्रहों से युत या दृष्ट हो, शुभ ग्रह से युत दृष्ट नहीं हो तो भाइयों में एक को दूसरे से कलह होता है, ऐसा भाव फल कहना चाहिये।

दग्धे कलि: सहजपेऽब्देपतौ तयोर्वा जीवे बलेन रहिते सहजे सहोत्थै: ।
वैरं तृतीयभवनाधिपतीसराफे मान्य कलिं स्वजनसोदरतश्च विद्यात् ।।

भाषार्थ – यदि वर्ष लग्न से सहजेश वर्षेश होकर अस्तंगत हो, तो कलह होता है अथवा रवि, शुक्र में से एक ग्रह सहजेश तथा वर्षेश होकर अस्तंगत हो, तो कलह होता है। अथवा हीनबल वृहस्पति तृतीय स्थान में हो, तो सहोदरों से विरोध होता है। अथवा वर्षेश को सहजेश से ईसराफ योग होता है, तो शारीरिक क्लेश, अपने परिजन और सहोदर से भी झगड़ा होता है, ऐसा फल कहना चाहिये।

यदेत्थशाल: सहजेश्वरेण गुरूस्तृतीये सहजात्सुखाप्ति: ।
सारे विधौ स्यात्कलहस्तृतीये दृष्टौ युतौ नो गुरूणा यदा तौ ।।

भाषार्थ – यदि गुरू को तृतीयेश से इत्थशाल योग होता हो, तो सहज से सुख हो, अथवा बली गुरू तीसरे स्थान में हो तो सहज से सुख होता है अथवा मंगल युक्त चन्द्रमा तीसरे भाव में हो और वृहस्पति से न तो युत हो, न तो दृष्ट हो तो सहज से कलह होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

सहजे सहजाधीशेऽधिकारिणि समापते : ।
लग्नपो वामुथशिले मिथ: सौख्यं सहोत्थयो: ।।

भाषार्थ – वर्षेश के अधिकारी होकर यदि तृतीयेश तृतीय भाव में हो अथवा वर्षलग्नेश को उससे इत्थशाल योग होता है, तो सहोदर परस्पर सुख होता है । ऐसा भाव फल कहना चाहिये।

क्रूरेसराफे कलह: शनौ भौमर्क्षगे रूज: ।
ज्ञर्क्षेऽसृज्यनुजे मान्द्यं वदेत्सहजगे स्फुटम् ।।
मन्दर्क्षगेऽसृजि बुधे कुजर्क्षे सहजे शुभै: ।
युते क्षिते सोदराणां मिथ: सौख्यं सुखं बहु ।।

भाषार्थ – सहजेश को पाप ग्रह से ईसराफ योग होता हो, सहज स्थान में स्थित हो, तो कलह होता है शनि यदि मेष या वृश्चिक में होकर सहज में हो तो सहोदर को रोग होता है। यदि मंगल मिथुन या कन्या में रहकर तीसरे भाव में हो तो सहज को निश्च रोग कहना चाहिये।

मंगल मकर या कुम्भ में होकर तृतीय भाव में हो, अथवा बुध मेष या वृश्चिक में होकर तृतीय भाव में हो, इन दोनों योगों में शुभग्रहों का योग या दृष्टि हो तो सहोदरों से परस्पर आनन्द और और अनेक

प्रकार के सुख होते है।

जन्माब्दपौ बुधसितौ सबलौ तृतीये सौन्दर्यबन्धुगणसौख्यकरौ गुरूश्च।

वीर्यान्वितेनदु गृहगो भृगुजो अधिकारी सूत्यब्दयेा: सहजबन्धुगणस्य वृद्धयै ।।

भाषार्थ – जन्म लग्नेश और वर्ष लग्नेश बुध और शुक्र हो, सबल हो, तीसरे स्थान में स्थित हो और गुरू बलवान हो, तो सहोदर बन्धु – बान्धव को सुख करते हैं और शुक्र यदि सबल चन्द्रमा की राशि में हो और जन्म वर्ष काल में पंच अधिकारी में हो तो सहज बन्धु गण की वृद्धि होती है।

पापान्विते तु सहजे सहमेशभावनाथेक्षणेन रहिते सहजस्य दु:खम्।

एवं सहोत्थसहमेऽपि वदेत्तदीशौ दग्धौ यदा सहजनाशकरौ विचिन्त्यौ ।।

भाषार्थ – सहज स्थान यदि पापग्रह से युक्त हो, और सहजेश तथा भ्रातृसहमेश की दृष्टि सहज पर नहीं पड़ती हो, तो सहोदर को दु:ख होता है। इसी तरह भ्रातृ सहम में पापग्रह हो, उस पर सहजेश तथा भ्रातृसहमेश की दृष्टि नहीं पड़ती हो, तो भी सहज को क्लेश होता है। अथवा यदि सहजभावेश भ्रातृसहमेश थे दोनों अस्तंगत हो तो सहजों का नाश होगा ऐसा कहना चाहिये।

तृतीयपादब्दपतौ द्युनस्थे लग्नेश्वरे वा सहजैर्विवाद:।

तृतीयपो जन्मनि तादृगब्दे शुभेक्षितस्तत्र सहोत्थतुष्टयै ।।

भाषार्थ – तृतीय स्थान के स्वामी जिस स्थान में हो, वहॉ से वर्षेश यदि सप्तम स्थान में हो, वा वर्षलग्नेश, सहजेश से सप्तम में हो तो सहोदरों से विवाद हो, और जन्मकाल में सहजेश सहज भाव में हो , वर्ष में भी वैसे सहज में हो शुभग्रह से दृष्ट हो, तो सहोदरों के सन्तोष के लिये होता है।

तृतीय 3 भाव में समस्त ग्रहों का भावफल –

दुश्चिक्यगा: खलखगा धनधर्मराज्य

लाभप्रहदा बलयुता: क्षितिलाभदा: स्यु:।

सौम्या: सुखार्थसुतमानयशोविलास –

लाभाय हर्षमतुलं किल तत्र चन्द्र: ।।

यदि सूर्य , शनि और मंगल तीसरे भाव में हो, तो धनलाभ, धर्मलाभ, राज्यलाभ होते है। यदि वे पापग्रह बलयुक्त हों , तो भूमिलाभ होता है। यदि शुभ ग्रह ये सब तीसरे भाव में हो तो सुख, धन, पुत्र समान यश और विनोद लाभ के लिये होते है और यदि चन्द्रमा तीसरे स्थान में हो तो पूर्ण हर्ष को देते है।

1.4 सारांश

ताजिक शास्त्र के अन्तर्गत वर्षप्रवेश साधन कर उसी पर आधारित वर्षकुण्डली में भावफल विचार

का वर्णन किया गया है। भाव फल के अन्तर्गत ताजिकोक्त भावों में स्थित ग्रहफल का विचार किया गया है। षोडश योग के माध्यम से भावफल को और विस्तारित किया जाता है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् पाठकगण ताजिकोक्त वर्षकुण्डली में स्थित प्रथम से तृतीय ग्रहभावफल का अध्ययन सम्यक् रूप से करेगें । प्रथम (1) से लेकर तृतीय (3) भावफल के ज्ञान आधार पर आप यह निर्णय करेगें कि प्रथम से लेकर तृतीय भाव में स्थिति ग्रहों का फल जातक के लिये कैसा होगा। जातक के जीवन में उस प्रकार के स्थित ग्रहभाव फल क्या होगा ? आदि .... आदि।

इस इकाई में उपरोक्त समस्त विषयों का सम्यक् समावेश किया गया है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

लग्न – जन्मकुण्डली में स्थित प्रथम भाव

वर्षेश – वर्ष का ईश अर्थात् वर्ष का स्वामी

भावेश – भाव का स्वामी

भावफल – भाव का फल

सहजेश – तृतीय भाव का स्वामी

ईसराफ – ताजिकोक्त षोडश योग में एक योग

इकवाल – षोडश योग में एक योग

इत्थशाल - षोडश योग में एक योग

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ग
4. घ
5. क

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

जातकपारिजात – आचार्य वैद्यनाथ – चौखम्भा विद्याप्रकाशन

वृहत्पराशर होरा शास्त्र – चौखम्भा विद्याप्रकाशन

वृहज्जातक – वराहमिहिर – चौखम्भा प्रकाशन

फलदीपिका – चौखम्भा विद्याप्रकाशन

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रथम एवं तृतीय भाव में स्थित ग्रहभाव फल का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

2. भावफल से क्या तात्पर्य है ताजिकोक्त भावफल का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 2 4 - 6 भावफल

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 4-6 भावफल

बोध प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के तृतीय खण्ड के द्वितीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार 4-6 भावफल विचारों का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने 1 -3 भावफल का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। यहॉ इस इकाई में आप चतुर्थ (4) भाव से लेकर षष्ठ (6) भाव तक के फल का अध्ययन करेगें।

4-6 से तात्पर्य जन्मकुण्डली के चतुर्थ भाव से लेकर षष्ठ भाव तक से है। इन भावों में स्थित ग्रहों का फल ताजिक शास्त्र के अनुसार किस प्रकार होगा, कैसा होगा ?

इस इकाई में आप 4-6 भावफल विचार का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. भावफल क्या है।
2. ताजिकोक्त 4-6 स्थित भावफल क्या है।
3. चतुर्थ एवं षष्ठ स्थान कौन है।
4. ताजिक शास्त्रोक्त 4-6 स्थित ग्रहों के फल क्या होते है।
5. वर्षकुण्डली में 4-6 स्थित भावफल विचार किस प्रकार करना चाहिये ।

2.3 4-6 भावफल विचार

वर्षकुण्डली के भावों में स्थित ग्रहों के फल को भावफल कहते है। आइये ताजिक शास्त्र के अनुसार वर्षकुण्डली में चतुर्थ से षष्ठ भावफल विचार की जानकारी प्राप्त करते है –

अथ चतुर्थ (4) भावविचार –

तुर्ये रवीन्दू पितृमातृपीडा पापान्वितो पापनिरीक्षितो च।

जन्मस्थसूर्यर्क्षगतेऽर्कपुत्रेऽवमानना वैरकली च पित्रा ।।

पापान्वितौ – पापयुतौ, पापनिरीक्षितौ – पापग्रहदृष्टौ रवीन्दू यदि तुर्ये - चतुर्थे, भवेतां, तदा क्रमेण पितृमातृपीडा वाच्या । पापयुतदृष्टे रवौ चतुर्थस्थे सति पितृपीडा तादृशे चन्द्रे चतुर्थे सति मातृपीडेत्यर्थ: । वाऽर्कपुत्रे – शनौ, जन्मस्थसूर्यर्क्षर्ज्ञयुते जन्मकुण्डल्यां यस्मिन्नाशौ सूर्यस्तद्राशिगते सति । अत्र वर्षगणनाया: सौरमानेन करणात् तथा तत्कालेऽर्को जन्मकालरविणा स्याद्यदा सम: । तदैवाब्दप्रवेश: स्यादिति नियमेन च जन्मवर्ष्ज्ञकालयोरपि रविरकराशिस्तित्वात् जन्मस्थसूर्यर्क्षयुते –

इत्यस्यार्थ: शनौ रविसहिते सतीति ज्ञेयम् । तत्र अवमानना – अपमानं, पित्रा – जनकेन सह वैरकली च भवत: ।

भाषार्थ – पाप युत दृष्ट सूर्य यदि चौथे में हो, तो पिता को पीड़ा हो तथा पापयुत दृष्ट चन्द्रमा यदि चौथे में हो, तो माता को पीड़ा होती है , और यदि शनि सूर्य के साथ हो तो पिता से अपमान तथा शत्रुता कलह होता है ।

चन्द्रे जन्न्यैवमुशन्ति बन्धौ सुखाधिपे प्रीतिसुखानि पित्रो: ।
तुर्याधिपे लग्नपतीत्थशाले वीर्यान्विते सौख्यमुशन्ति पित्रो: ।।

भाषार्थ - इस प्रकार चन्द्रमा जन्मकाल में जिस राशि में हो, उस राशि में यदि वर्षकाल में शनि हो, तो माता के साथ विरोध / कलह होगा ऐसा कहना चाहिये, और यदि सुखेश सुख भाव में हो तो माता पिता को सुख होता है या बलवान् चतुर्थेश लग्नेश से इत्थशाल करता हो, माता पिता को सुख होता है ।

सौख्याधिपो जनुषि नष्टबलोऽब्दसूत्यो: पित्रोरनिष्टकृदधो सहमे तयोस्तु ।
दग्धे तुरीयगृहगे च यदीन्थिहाया नाशस्तयो: सहमयोरपि दग्धयो: स्यात् ।।

भाषार्थ – वर्षकाल और जन्मकाल में चतुर्थेश यदि बलहीन हो तो माता और पिता को अनिष्ट करते है या मातृहसहम, पितृसहम पापग्रह से युत या दृष्ट हो, मुथहा से चौथे स्थान में हो, तो माता – पिता का नाश होता है और यदि मातृसहमेश अस्तंगत हो, पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो माता – पिता का नाश होता है । इस प्रकार भावफल समझना चाहिये ।

जन्मन्यम्बुगृहं यच्च तत्पतिस्तत्पदोपगौ ।
शन्यारौ क्लेशदौ पित्रोर्न चेत्सौम्यनिरीक्षितौ ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में जो चतुर्थ स्थान में राशि वह चतुर्थ भाव का पद कहलाता है और चतुर्थभाव का स्वामी जिस राशि में हो, वह उसका पद कहलाता है । वहॉ वर्षकाल में शनि और मंगल उन दोनों पद में स्थित हो, शुभग्रहों से यदि इष्ट नहीं हो तो माता पिता को क्लेश देते है ।

मातु: पितुश्च सहमे तनुपेत्थशाले तुर्येऽपि चेत्थमवगच्छ सुखानि पित्रो: ।
चेदष्टमाधिपतिना कृतमित्थशालं पित्रोर्विपद्भयमनिष्टकृतेसराफे ।।

भाषार्थ – मातृसहम वा पितृहसहम लग्नेश से इत्थशाल करता हो, तो माता – पिता को सुख जानो और मातृ – सहम या पितृसहम चौथे स्थान में हो, तो भी माता पिता को सुख होगा, ऐसा जानना चाहिये । यदि मातृसहम या पितृसहम पापग्रह से इत्थशाल करता हो तो माता पिता को विपत्ति होती है । यदि शत्रु से ईसराफ योग करता हो तो भय होता है ।

चतुर्थ स्थान में स्थित सूर्यादि समस्त ग्रहों का भावफल –

चन्द्रः सुखे खलयुतो व्यसनं रूजं च पुष्टः शुभेन सहितः सुखमानोति ।

सौम्याः सुखं विविधमत्र खलाः सुखार्थनाशं रूजं व्यसनमप्यतुलं भयं च ।।

खलयुतः - पापयुतदृष्टचन्द्रः सुखे – चतुर्थभावे स्थितस्तदा व्यसनं रूजं – रोगं च दत्ते । यदि पुष्टः, शुभेन युतदृष्टचन्द्रश्चतुर्थे स्थितस्तदा सुखम् आतनोति – सर्वतोभावेन ददाति । सौम्याः - शुभाः चतुर्थस्थानस्थिताः, तदा विविधं सुखं दद्युः । खलाः - रविकुजशनयः अत्र – चतुर्थे स्थितास्तदा सुखार्थनाशं, रूजं – रोगं, अतुलम् – असीमं, व्यसनं – क्लेशं अतुलं भयं च दद्युः ।

भाषार्थ – पाप युत दृष्ट दुर्बल चन्द्रमा यदि चौथे भाव में हो तो क्लेश , रोग को देता है । यदि पुष्टशरीर शुभ युत दृष्ट चन्द्रमा चतुर्थभाव में हो तो सुख को देता है । यदि शुभग्रह (बुध, गुरू, शुक्र) चौथे स्थान में हो तो नाना प्रकार के सुख को देता है । यदि पापग्रह (रवि शनि कुज) चतुर्थस्थान में हो तो सुखनाश, धननाश, रोग, झंझट तथा अधिक भय को देते है । ऐसा फल विचार करना चाहिये ।

अपि च –

पशोः पीडनं तुर्यसंस्थे रवौ तु कृषेः कर्मणो हानिरत्यन्तपीडा ।

नृपाद्भीतिकष्टं भवेन्मातृपीडो हृद्यपि स्यात् प्रपीडाऽब्दमध्ये ।।

शशाङ्के चतुर्थे च भूपाज्ज्यंच कृषेः कर्मणो लाभवान् स्यात् सुखी च ।

धनाप्ति क्रये विक्रये वाऽब्दमध्ये सुखं वाहनानां रिपोर्नाशनं च ।

चतुर्थे कुजे वह्निपीडा तथाऽऽर्ति पशोः पीडनं व्यग्रतां क्लेशकष्टकम् ।।

कृषेः कर्मणो हानिमप्येव कुर्यात् क्रये विक्रये चाब्दमध्ये तथैव ।

बुधश्चतुर्थः प्रकरोति सौख्यं द्रव्यागमं मित्रसमागमं च ।।

गोभूहिरण्यादि लभेत सौख्यं महत्सुखं वाहनमत्र वर्षे ।

सुरेज्ये सुखस्थे सुखं वाहनानां क्रये विक्रये लाभकारी जनस्य ।।

भवेद्भूपपक्षज्ज्यो हायनेऽस्मिन् महालाभदः स्यात् कृषेः कर्मणा च ।।

प्रथमदेवगुरू सुखगो यदा सुखकरः कृषिवाहनयोस्तदा ।

धरणिवाजिसुवर्णसमागमो भवति भूपसमो मनुजः सदा ।।

बन्धुस्थानगतो दिवाकरसुतः स्याद्धायने कष्टदो ।

भीति हानिमुपक्रमे च कुरूते नेत्रोदरे पीडनम् ।।

बन्धूनामथ पीडनं प्रकुरूते लोकापवादं वृथा ।

वह्नेश्चापि भयं पशोश्च मरणं हानि कृषीणां तथा ।।

बोध प्रश्न

1. तुर्य शब्द से तात्पर्य है –

क. पंचम ख. षष्ठ ग. चतुर्थ घ. सप्तम

2. अर्कपुत्र किसे कहते है –

क. मंगल ख. शनि ग. गुरू घ. बुध

3. चतुर्थेश बलहीन हो तो –

क. माता – पिता को सुख होता है

ख. माता – पिता का अनिष्ट होता है

ग. माता – पिता की उन्नति होती है।

घ. कोई नहीं

4. षष्ठेश है –

क. षष्ठ भाव ख. षष्ठ भाव का स्वामी ग. षष्ठांश घ. 6

5. १,४,७,१० को कहते है –

क. केन्द्र ख. पणफर ग. आपोक्लिम घ. त्रिषडाय

अथ पंचम भाव फल विचार –

पुत्रायगो वर्षपतिर्गुरूश्चेत्सूर्यारसौम्योशनसोऽथवेत्थम्।

सत्पुत्रसौख्यायखलादितास्ते दुःखप्रदाः पुत्रत एव चिन्त्याः ।।

चेत् – यदि, वर्षपतिः - वर्षेशः, गुरूः – वृहस्पतिः, पुत्रायगः - पञ्चमैकादशस्थितस्तदा सत्पुत्रसौख्याय भवति । अथवा इत्थममुनां प्रकारेण सूर्यारसौम्योशनसः - रविकुजबुधशुक्राः, वर्षे वर्षेशा भूत्वा पञ्चमैकादशस्थानस्थितास्तदा पुत्रसौख्याय भवन्ति । अथ ते – रविकुजबुधशुक्राः खलार्दिताः - पापपीडिताः - पापाक्रानतयुतदृष्टास्तदा पुत्रत एव दुःखप्रदाश्चिन्त्या ज्ञातव्याः।

यदि वृहस्पति वर्षेश होकर पंचम एकादश स्थानों में हो, तो पुत्रसुख के लिये होता है , अथवा यदि रवि, कुज, बुध , शुक्र भी ऐसे ही वर्षेश होकर पंचम एकादश स्थान में हो तो पुत्रसुख के लिये होता है। यदि 5।11 स्थान में रहकर पाप ग्रहों से पीड़ित (युत दृष्ट इत्थशाली) हो तो पुत्र से ही दुःखप्रद होते हैं। अर्थात् पुत्र सुख नहीं होता।

पुत्रे सुतस्य सहमे सबले सुताप्तिः सौम्येक्षितेऽप्यतिसुखं यदि तत्र वर्षेट।

सौम्येक्षितः शुभगृहे सकुजो बुधश्चेत्पुत्रायगः सुतसुखं विबलः सुतार्तिम् ।।

भाषार्थ – पंचम भावबली हो या पुत्र सहम बली हो, या बली पुत्र सहम पंचम भाव में हो, तो पुत्र का लाभ होता है। यदि पंचम भाव में वर्षेश शुभग्रह से दृष्ट होकर स्थित हो, तो पुत्र का अत्यन्त सुख होता है। यदि मंगल से युत बुध शुभग्रह की राशि में स्थित होकर वर्ष लग्न से ५।११ स्थान में हो तो पुत्रसुख होता है परन्तु ऐसा बुध यदि निर्बल हो तो पुत्र पीड़ा करता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

जीवो जन्मनि यद्राशावब्देऽसौ सुतगो बली।
पुत्रसौख्याय भौमो ज्ञो वर्षेशोऽत्र सुताप्तिदः॥

भाषार्थ – वृहस्पति जन्मकुण्डली में जिस राशि में हो, वह राशि वर्षकुण्डली में पंचम भाव में हो और बली हो, तो पुत्र सुख के लिये होता है अथवा मंगल या बुध वर्षेश होकर पंचम भाव में हो, तो पुत्र लाभ को देता है। ऐसा भावफल जानना चाहिये।

यत्रेज्यो जनुषि गहे विलग्नमेतत्पुत्रात्म्यै बुधसितयोरपीत्थमूह्यम्।
यद्राशौजनुषिशनिः कुजश्चसोऽब्दे पुत्राप्ति तनुसुतगः करोति नूनम्॥

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में वृहस्पति जिस राशि में हो, वह राशि वर्ष कुण्डली में वर्षलग्न हो तो पुत्रलाभ के लिये होता है। ऐसे बुध, शुक्र से भी समझना चाहिये। जैसे – जन्मकाल में जहॉ बुध हो वह राशि वर्षलग्न हो, वा जन्मकाल में शुक्र जिस राशि में हो वह यदि वर्षलग्न हो, तो पुत्र लाभ होता है। ऐसे शनि या मंगल जन्म काल में जिस राशि में हो वह राशि वर्षप्रवेश कुण्डली में लग्न, या पंचम भाव में हो, तो निश्चय पुत्रलाभ को करता है।

पुत्रे पुण्यस्य सहमं पुत्राप्त्यै शुभदृष्टियुक्।
लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे पुत्रदौ बलिनौ यदि॥

भाषार्थ – यदि पुण्य सहम पंचम भाव में हो, शुभग्रह से दृष्ट युत हो, तो पुत्र लाभ होता है, या यदि बली लग्नेश पंचमेश ये दोनों पंचमभाव में हो तो पुत्र को देते है।

चन्द्रो जीवोऽथवा शुक्रः स्वोच्चगः सुतदः सुते।
वक्री भौमः सुतस्थश्चेदुत्पन्नसुतनाशनः॥

भाषार्थ – चन्द्रमा, गुरू या शुक्र अपने – अपने उच्च में गत होकर यदि पंचम भाव में हो तो पुत्र को देते है। यदि मंगल वक्री होकर पंचमभाव में हो, तो उत्पन्न पुत्र का भी नाश करता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

सुताधिपो जन्मनि भार्गवोऽब्दे पुत्रे विलग्नाधिपतीत्थशाली।
पुत्रप्रदो मन्दपदस्थपुत्रे पापाधिकारीक्षित आत्मजातिः॥

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में शुक्र पंचमेश होकर वर्षकाल में पंचमभावगत हो और लग्नेश से इत्थशाल योग करता हो तो पुत्र देता है , या जन्मकाल में शनि जहॉं हो, वह राशि वर्षकाल में यदि पुत्रभाव में हो और पापग्रह के अधिकारी ग्रह से दृष्ट हो तो पुत्र पीड़ा होती है।

यद्राशिगो ग्रह: सूतौ स राशिस्तत्पदाभिध: ।
बली जन्मोत्थसौख्याय वर्षे तद्दु:खदोऽन्यथा ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में जो ग्रह जिस राशि में रहता है, वह राशि उस ग्रह का पदसंज्ञक है । वह पदसंज्ञक राशि वर्ष में यदि बली हो, तो जन्म में वह राशि जिस भाव में रहता है, उस भाव सम्बन्धी शुभ फल देता है। यदि वर्ष में वह राशि निर्बल हो, तो अशुभ फल देता है।

पंचम भाव स्थित सूर्यादि समस्त ग्रहों के भावफल -

पुत्रवित्तसुखसञ्चयं शुभा: पुत्रगा भृगुसुतोऽतिहर्षद: ।
पुत्रवित्तधनबुद्धिहारकास्तस्करामयकलिप्रदा: खला: ।।

भाषार्थ – यदि शुभग्रह (बुध, गुरू, शुक्र एवं पूर्णचन्द्रमा) पंचम भाव में स्थित हो तो पुत्र सुख धनलाभ करते हैं और आनन्द भी देते है। यदि पापग्रह **(**सूर्य, शनि, मंगल एवं क्षीणचन्द्रमा **)** पंचम भाव में हो तो पुत्र नाश, धन धान्य नाश, बुद्धिनाश और चौर का उपद्रव रोग का प्रचार लोगों से विरोध को करते है। ऐसा फलादेश कहना चाहिये।

अथ षष्ठ भावफल विचार: -

मन्देऽब्दपेऽनृजुगतौ पतिते रूगार्ति: स्यात्सन्निपातभवभीररिगेऽत्र शूलम् ।
गुल्माक्षिरोगविषमज्वरभीर्गुरौ तु पापार्दितेऽनिलरूजोऽपि कबूलशून्ये ।।

भाषार्थ – वक्री और पापाक्रान्त, शनि वर्षेश होकर यदि छठे स्थान में हो, तो रोग, पीड़ा हो, त्रिदोष जनित रोग का भय हो, शूल (पेट में दर्द) होता है, और गुल्म रोग, नेत्र रोग, विषम ज्वर का भय हो। ऐसे ही वक्री पापपीडित गुरू वर्षेश हो कर यदि छठे स्थान में हो और चन्द्रमा से कबूल योग नहीं करता हो, तो वायु रोग होता है।

स्यात्कामलाख्यरूगपीत्थमसृज्यसृग्भी: ।
पित्तं च रि:फगरवौ दृशि शूलरोग: ।।
पित्तं पुना रिपुगृहेऽत्र भृगौ नृभेऽरौ
श्लेष्मा भपेक्षितयुतेऽपि कफोऽरिगेन्दौ ।।

भाषार्थ – ऐसा मंगल यदि हो तो कमला रोग होता है। रक्त् विकार भी होता है। पित्तप्रकोप भी होता है यदि वैसा ही सूर्य द्वादश भाव में गया हो तो नेत्र शूल रोग होता है, और वैसा ही शुक्र होकर

यदि शत्रु गृह में हो तो पित्त से रोग होता है, और वैसे ही शुक्र यदि पुरूष राशि में हो, छठें स्थान में हो और राशीश से दृष्ट या युत हो, तो कफ रोग होता है। ऐसा ही चन्द्रमा यदि छठे स्थान में हो, तो कफ रोग होता है।

एवं बुधे पापयुतेऽब्दपेऽरौ वातो त्थरोगो जनिलग्ननाथः।

पापोऽब्दपेन क्षुतदृष्टिदृष्टो रोगप्रदो मृत्युकरः सपापः॥

भाषार्थ – इस प्रकार यदि पापयुक्त, वर्षेश होकर बुध छठे स्थान में हो तो वात से उत्पन्न रोग होता है और जन्मलग्नेश स्वयं पापग्रह हो, वर्षेश से क्षुतदृष्टि से देखा जाये तो भी रोगप्रद होता है और वैसा ही जन्मलग्नेश पापयुक्त हो तो मृत्यु को देता है। ऐसा भावफल कहना चाहिये।

सूत्यार्किमे लग्नगते रूक्षशोतोष्णरूग्भयम्।

शनीक्षिते याष्यता स्यात्सपापे मृत्युमादिशेत्॥

भाषार्थ - जन्मकाल में जिस राशि में शनि हो, वह राशि यदि वर्ष लग्न हो, तो रूक्षता रोग, शीत पित्त रोग होता है। यदि जनमकालिक शनि राशि शनि से दृष्ट हो तो कुछ कम प्रभाव होता है। यदि पापग्रह युक्त हो तो मृत्युदायक होता है।

एवं भौमे क्षुतदृशा रक्तपित्तरूजोऽग्निभीः।

ततोऽन्ये बहुला रोगाः शुभदृष्टौ रूगल्पता॥

भाषार्थ – इसी प्रकार मंगल जन्मकाल में जिस राशि में हो, वह राशि यदि वर्षलग्न हो और क्षुत दृष्टि १,४,७,१० से देखा जाये, तो रक्त पित्त रोग होता है, अग्निभय होता है। उस से और भी रोग होते हैं। यदि शुभग्रह की दृष्टि पड़ती हो, तो रोग की अल्पता होती है।

लग्नाधिपाब्दपतिषष्ठपतीत्थशालो रोगप्रदः खचरधातुविकारतः स्यात्।

कान्दर्पिकामयभयं पतिते सितेऽर्कस्थानेऽथ षष्ठ इह रूक्सहमं सपापम्॥

भाषार्थ – वर्षलग्नेश, वर्षेश, इन दोनों को षष्ठेश से यदि इत्थशाल योग होता हो तो उन ग्रहों के जो धातु, उसके विकार से रोग होता है। इसी प्रकार शुक्र जन्म काल में जिस राशि में हो, वह राशि वर्ष लग्न से छठे स्थान में हो और सूर्य उसी में हो और रोगसहम पाप युक्त भी हो, तो कान्दर्पिक कन्दर्पसम्बन्धि अर्थात् वीर्य दोष से राग होता है।

सपापे गुरौरंध्रगे लग्न आरे सतन्द्राऽस्ति मूर्च्छाऽङ्गनाशः सचन्द्रे।

खलाः सूतिकेन्द्रेऽब्दलग्ने रूगाप्त्यै कफो द्वयिघ्रंगैरीक्ष्यमाणे सिते स्यात्॥

भाषार्थ – पापग्रह से सहित गुरू यदि अष्टम स्थान में हो, मंगल यदि लग्न में हो तो आलस्य युत मूर्च्छा रोग, बदहोशी (मिरगी) रोग होता है, और चन्द्रमा से युत वृहस्पति आठवें स्थान में हो, या

चन्द्रयुत मंगल लग्न में हो, तो अंग का नाश होता है तथा जन्मकाल में १,४,७,१० इन स्थानों में स्थित पापग्रह यदि वर्षलग्न में हो, तो रोगप्राप्ति के लिये होते है और वैसे ही शुक्र यदि विषम १,३,५,७,९,११ राशि में स्थित पापग्रहों से देखा जाये तो कफ रोग होता है।

दिनेऽब्दप्रवेशो विलग्नेऽब्दसूत्योर्यदा दृक्कहदागृहाद्योऽधिकारः।
रवेर्वा कुजस्यात्र पीडा ज्वरात्स्यादृशा सौम्यखेटोत्थयाऽन्ते सुखाप्तिः ॥

भाषार्थ – दिन में वर्ष प्रवेश हो और वर्षकालिक जन्मकालिक लग्न में सूर्य का अथवा मंगल का द्रेष्काण नवमांश आदि अधिकार हो, तो ज्वर से पीड़ा होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि वर्षलग्न पर पड़े, तो वर्षान्त में सुख लाभ होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

निशि सूतौ वर्धमाने चन्द्रे भौमेत्थशालतः।
रूङ्नश्येदेधते मन्देत्थशालाद्वयत्ययोऽन्यथा ॥

भाषार्थ – रात में वर्षप्रवेश हो, जन्मकाल में चन्द्रमा उपचीय मान हो, वहॉं यदि मंगल से इत्थशाल होता हो, तो रोग का नाश होता है और वैसे ही चन्द्रमा को यदि शनि से इत्थशाल हो तो रोग बढ़ता है। इससे विपरीत में उल्टा फल कहना चाहिये।

रवावीदृशि वित्केतुयुतेऽब्दं निखिलं गदाः।
अधिकारी बली सूतावब्दे केतुज्ञयुक् तथा ॥

भाषार्थ – ऐसे ही बुध केतु युक्त रवि, मंगल से इत्थशाल करता हो, तो पूरे वर्ष रोग होता है या जन्मकाल में लग्नेश अधिकार प्राप्त कोई ग्रह यदि केतु बुधयुक्त हो, तो पूरे वर्ष रोग होता ही है।

चतुर्थेऽस्ते च मुथहा क्षुतदृष्टया शनीक्षिता।
शूलपीडा पापखगैर्दृष्टे तत्परिणामजम् ॥

भाषार्थ – यदि मुथहा चौथे सातवें में होकर शनि की क्षुतदृष्टि से देखी जाय, तो शूल पीड़ा होती है। यदि चौथे सातवें में स्थित मुथहा पापग्रहों से दृष्ट हो तो परिणाम शूल रोग होता है। ऐसा ताजिकोक्त भावफल कहा गया है।

जन्मस्थजीवसितराशिगते महीजे
सूर्यांशुगे पिटकशीतिलकादिमान्द्यम्।
शीतोष्णगण्डभवरूक्सबुधे च सेन्दौ
कुष्ठं भगन्दररूजोऽपि सगण्डमालाः ॥

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में वृहस्पति और शुक्र जिस राशि में हो, उसी राशि में वर्षकाल में मंगल हो, अस्तंगत भी हो, तो पिल्ही, शीतला आदि रोग होते हैं। और शीतपित्त या सर्दी, गर्मी के रोग,

गलगण्ड रोग होते है। इसी प्रकार चन्द्रमा युत बुध जन्मकालिक गुरू शुक्र के राशि में हो, तो कुष्ठ और गण्डमाला भगन्दर रोग होता है।

जन्मलग्नेन्थिहानाथौ षष्ठौ पापान्वितेक्षितौ।

निर्बलौ ज्वरपीडाङ्गवैकलद्यविकष्टदौ॥

भाषार्थ – जन्मलग्न के स्वामी और मुथहेश ये दोनों छठें स्थान में हो, पापग्रह से युत या दृष्ट हो निर्बल हो, तो ज्वर और शरीर की विकलता आदि अत्यन्त कष्ट को देते हैं।

मुथहालग्नन्नाथा पापान्तःस्थास्तु रोगदाः।

षष्ठेशे षष्ठगे सौम्ये स्त्रियाः प्राप्तिरितीर्यते॥

भाषार्थ – मुथहा व लग्न मुथहेश, वर्षलग्नेश ये सब यदि पापग्रहों के बीच में हो तो रोगप्रद होते हैं या षष्ठेश शुभग्रह हो षष्ठस्थान में हो, तो स्त्री के कारण रोगप्राप्ति होती है।

रोगकर्ता यत्र राशावंशे स्यादनयोर्बली।

तत्स्थानं तस्य रोगस्य वाच्यं राशिस्वरूपतः॥

भाषार्थ – रोगकारक ग्रह जिस राशि में जिस नवमांश में हो, उन में जो बली हो, उसका राशिस्वरूप से जो स्थान हो, वही रोग का स्थान कहना चाहिये।

जन्मषष्ठाधिपे भौमे वर्षे षष्ठगते रूजा।

क्रूरेत्थशाले विपुलः शुभदृग्योगतस्तनुः॥

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में मंगल षष्ठभाव का स्वामी वर्षकुण्डली में छठें भाव में हो तो रोग होता है। यदि वैसे ही मंगल को पापग्रह से इत्थशाल होता हो तो महान् रोग होता है। शुभग्रह की दृष्टि और संयोग से लघु रोग होता है।

षष्ठ भाव में स्थित समस्त ग्रहों का भावफल –

षष्ठे पाप वित्तलाभं सुखाप्तिं भौमोऽत्यन्तं हर्षदः शत्रुनाशम्।

सौम्या भीतिं वित्तनाशं कलिं च चन्द्रो रोगं पापयुक्तः करोति॥

भाषार्थ – यदि पापग्रह षष्ठस्थान में हो, तो धनलाभ , सुखलाभ करते हैं उस में मंगल षष्ठस्थान में हो तो अत्यन्त हर्ष को और शत्रुनाश को करता है। शुभग्रह षष्ठस्थान में होने से भय, धननाश, कलह को करते हैं। उसमें क्षीणचन्द्रमा यदि छठें स्थान में हो तो कफ, ज्वर खांसी को उत्पन्न करता है। ऐसा भावफल जानना चाहिये।

2.4 सारांश

ताजिक शास्त्र के अन्तर्गत वर्षकुण्डली निर्माण करने की परम्परा है। वर्षकुण्डली में चतुर्थ (४) भाव से लेकर षष्ठ भाव (६) पर्यन्त षोडश योग के आधार पर फलादेश आदि कर्म कहे गये है। जातक के जीवन में वार्षिक स्तर पर विचार करने पर उसकी कुण्डली में चतुर्थ से लेकर षष्ठ भाव तक विभिन्न ग्रह एवं योगों के आधार पर ताजिकोक्त भावफल क्या – क्या है ? उनके स्थित होने की दशा में जातक के उपर क्या – क्या प्रभाव पड़ेगा, इन समस्त विषयों का अध्ययन आप प्रस्तुत अध्याय में करेगें।

इस इकाई में उपरोक्त समस्त विषयों का सम्यक् समावेश किया गया है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

वर्षकुण्डली – जिसमें वार्षिक स्थिति का विवेचन हो

वर्षेश – वर्ष का ईश अर्थात् वर्ष का स्वामी

वित्तलाभ – धन का लाभ

ताजिकोक्त – ताजिक शास्त्र में कहा गया

जन्मस्थ – जन्म के समय में स्थित

इत्थशाल – ताजिकोक्त षोडश योग में एक योग की संज्ञा

नवमांश – एक राशि का नवॉ भाग

रोगप्रद - रोग को प्रदान करने वाला

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. ख
4. ख
5. क

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ताजिकनीलकण्ठी – आचार्य नीलकण्ठ दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चतुर्थ एवं षष्ठ भाव में स्थित ग्रहभाव फल का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

2. ताजिक शास्त्र में कहे गये पंचम भावफल का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 3 7 - 9 भावफल

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 सप्तम (7) भाव फल

3.4 अष्टम (8) भाव फल

3.5 नवम (9) भाव फल

बोध प्रश्न

3.6 सारांश

3.7 पारिभाषिक शब्दावली

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के तृतीय खण्ड के तृतीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार 7-9 भावफल विचारों का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने 4 - 6 भावफल का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। यहॉ इस इकाई में आप सप्तम (7) भाव से लेकर नवम (9) भाव तक के फल का अध्ययन करेगें।

7-9 से तात्पर्य जन्मकुण्डली के स्पतम भाव से लेकर नवम भाव तक से है। इन भावों में स्थित ग्रहों का फल ताजिक शास्त्र के अनुसार किस प्रकार होगा, कैसा होगा ?

इस इकाई में आप 7-9 भावफल विचार का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. भावफल क्या है।
2. ताजिकोक्त 7-9 स्थित भावफल क्या है।
3. सप्तम एवं नवम स्थान कौन है।
4. ताजिक शास्त्रोक्त 7- 9 स्थित ग्रहों के फल क्या होते है।
5. वर्षकुण्डली में 7-9 स्थित भावफल विचार किस प्रकार करना चाहिये ।

3.3 सप्तम (7) भावफल विचार

ताजिकोक्त भावफल विचार के अन्तर्गत यहॉ सप्तम भाव से लेकर नवम भाव तक का उल्लेख किया जा रहा है। आइये अब हम 7-9 भावफल का ज्ञान करते है –

अथ सप्तम भावफल विचार : -

बली सितोऽब्दाधिपति: स्मरस्थ: स्त्रीपक्षत: सौख्यकरो विचिन्त्य: ।

ईज्येक्षितोऽत्यन्तसुखं कुजेनाऽधिकारिणा प्रीतिकरो मिथ: स्यात् ।।

भाषार्थ – यदि बलवान वर्षेश शुक्र सातवें स्थान में हो, तो स्त्रीपक्ष से सुख करता है, या वैसे ही शुक्र पंचाधिकारों में कोई अधिकारी होकर मंगल से देखा जाय, तो स्त्री पुरूष को परस्पर प्रेम कराता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

बुधेक्षिते जारता स्याल्लघ्वरू मन्देन वृद्धया ।

गुरूदृष्टया नवा भार्या सन्ततिस्त्वरितन्तत: ।।

भाषार्थ - वर्षेश होकर शुक्र यदि सप्तम स्थान में हो, बुध से दृष्ट हो, तो थोड़ी उम्र वाली स्त्री से व्यभिचार होता है। यदि ऐसे ही शुक्र शनि से दृष्ट हो, तो वृद्ध स्त्री से व्यभिचार होता है। यदि वैसे शुक्र वृहस्पति से देखा जाता हो तो, तो नयी अपनी विवाहिता स्त्री हो, उससे शीघ्र ही सन्तान प्राप्ति भी होती है।

जन्मलग्नाधिपेऽस्तस्थे दारसौख्यं बलान्विते।

जन्मशुक्रर्क्षमस्ते स्त्रीलाभाय सितेऽब्दपे ।।

भाषार्थ – जन्मलग्नेश बलयुक्त होकर वर्षलग्न से सप्तम स्थान में हो, तो स्त्री सुख होता है, और जन्म काल में शुक्र जिस राशि में हो, वह यदि वर्षकाल में सातवें स्थान में हो और शुक्र वर्षेश हो तो स्त्री लाभ होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

लग्नास्तनाथयोरित्थशाले स्त्रीलाभमादिशेत्।

सहमेशो भावपो वा विनष्टः कष्टदः स्त्रियाः ।।

भाषार्थ – लग्नेश सप्तमेश में इत्थशाल होता हो, तो स्त्री लाभ कहना चाहिये। यदि स्त्री सहमेश और सप्तमभावेश अस्तगंत हो पापयुक्त दृष्ट हो तो स्त्री को कष्ट देता है। ऐसा भावफल होता है।

नष्टेन्दौ शुक्रपदगे मैथुनं स्वल्पमादिशेत्।

जन्मशुक्रर्क्षगो भौमः स्त्रीसुखोत्सवकृद् बली ।।

भाषार्थ – यदि क्षीणचन्द्र जन्मकालिक शुक्र के राशि में हो, तो अल्प स्त्री प्रसंग या अल्प स्त्री सुख कहना चाहिये। यदि बलवान मंगल शुक्र के जन्मकालिक राशि में हों, तो स्त्रीसुख और उत्सव को करता है।

जन्मास्तपेऽब्दपसितेन युगोक्षिते स्रूात्स्त्रीसंगमो बहुविलाससुखप्रधानः।

केन्द्रत्रिकोणगगुरौ जनिशुक्रभस्थे स्त्रीसौख्यमुक्ततितिहद्दविवाहयोश्च ।।

भाषार्थ – जन्मकाल के सप्तमेश यदि वर्षेश शुक्र से युत या दृष्ट हो, तो बहुत विलास सुख से युक्त स्त्री संग हो अथवा वर्षलग्न से केन्द्र 1,4,7,10 त्रिकोण 5,9 में होकर जन्मकाल में शुक्र जिस राशि में हों, उस राशि में गुरू हो, तो स्त्री सुख कहना चाहिये। भावफल के लिये ऐसे जन्मलग्न के हद्देश और विवाह सहमेश का भी विचार करना चाहिये।

अधिकारिपदस्थेऽर्के स्त्रीभ्यो व्याकुलताऽनिशम्।

इन्थिहाऽधिकृतस्थाने गुरूदृष्टया विवाहकृत् ।।

भाषार्थ – यदि सूर्य पंचाधिकारियों में किसी के स्थान में हो, तो स्त्री के हेतु व्यग्रता रहती है और मुथहा यदि पंचाधिकारियों में किसी के स्थान में हों अर्थात् युत हो और वृहस्पति से देखा जाता हो,

तो विवाह योग करने वाली होती है , अर्थात् यह विवाह योग होता है।

इन्थिहार्कारयुग् द्यूने क्रूरिते सहमे स्त्रियाः।

स्त्रीपुत्रेभ्यो भवेत्कष्टं पापदृष्ट्या विशेषतः ।।

भाषार्थ – रवि, कुज से युक्त मुथहा यदि वर्षलग्न से सप्तम में हो तो स्त्री, पुत्र से कष्ट हो या स्त्री सहम पाप से युत हो, तो स्त्री पुत्र से कष्ट हो, वहॉ पाप की दृष्टि यदि पड़ती हो तो विशेष रूप से स्त्री पुत्र से कष्ट होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

सूतौ द्यूनाधिपः शुक्रोऽब्दे द्यूने बलवान्भवेत्।

लग्नेशेनेत्थशालश्चेत्स्त्रीलाभं कुरूते ध्रुवम् ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में सप्तमेश शुक्र ही हो, वह वर्षकुण्डली में सप्तम स्थान में हों और बलवान भी हो और लग्नेश से इत्थशाल होता हो, तो स्त्री लाभ को निश्चित ही प्राप्त करता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

भौमेऽब्दपे सितदृशा शुक्रेऽब्देशे कुजेक्षया।

तद्दृष्टे दारसहमे स्त्रीलाभो भवति ध्रुवम् ।।

भाषार्थ – मंगल वर्षेश होकर शुक्र से देखा जाता हो, स्त्री लाभ होता है या शुक्र वर्षेश होकर मंगल से देखा जाय, तो स्त्री लाभ होता है। स्त्रीसहम मंगल शुक्र से देखा जाय, तो स्त्रीलाभ निश्चित कहना चाहिये।

सूतौ वा दारसहमे तद्दृष्टे योषिदाप्यते।

स्वामिदृष्टं स्त्रीसहमं शुक्रदृष्टं विवाहकृत् ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में दारसहम यदि शुक्र, मंगल से दृष्ट हो तो स्त्री प्राप्ति होती है या स्त्री सहम अपने स्वामी ग्रह से दृष्ट हो और शुक्र से भी देखा जाता हो, तो विवाह होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

सूतौ द्यूनाधिपे वर्षे सहमेशे स्त्रियाः सुखम्।

जन्मास्तपेन्थिहानाथवर्षेशाः खे द्युने तथा ।।

भाषार्थ – जन्मकालिक सप्तमेश वर्षकाल में दारसहमेश हो तो स्त्रीसुख होता है। अथवा जन्मकाल का सप्तमेश, वर्षकाल का मुथहेश, वर्षेश ये सभी यदि दशम यर सप्तम भाव में हो, तो स्त्री सुख होता है।

मुथहातो द्यूनसंस्थः स्वगृहोच्चगतः राशी।

विदेशगमनं कुर्यात्क्लेशः पापेक्षणाद्भवेत् ।।

भाषार्थ – स्वगृह (कर्क) उच्च (वृष) में स्थित चन्द्रमा मुथहा से सातवें घर में स्थित हो, अर्थात् मुथहा मकर में हो, चन्द्रमा कर्क में हो , या मुथहा वृश्चिक में हो चन्द्रमा वृषराशि में हो, तो विदेश यात्रा होती है। यहॉं पाप ग्रहों की दृष्टि पड़ने से क्लेश होता है। शुभग्रह की दृष्टि से सुख पूर्वक यात्रा व्यतीत होती है। चन्द्रमा के कर्क में रहने से जलयात्रा, वृष में हो तो स्थलयात्रा होगी ऐसा भावफल कहना चाहिये।

अथ सप्तम (7) भावस्थ समस्तग्रहफलम् –

सपाप: शशी सप्तमो व्याधिभीति खला: स्त्रीविनाशं कलि भृत्यभीतिम्।

शुभा: कुर्वते वित्तलाभं सुखाप्तिं यशो राजमानोदयं बन्धुसौख्यम्॥

भाषार्थ – यदि पाप युक्त दृष्ट चन्द्रमा सप्तम में हो, तो रोग भय करता है। यदि पापग्रह (रवि, मंगल, शनि) सप्तम भाव में हो तो स्त्रीनाश स्त्रीकष्ट कलह तथा नौकर से भय होता है। शुभग्रह यदि सप्तम में हो तो धनलाभ, सुखलाभ, यश राज सम्मान परिवार सुख करते है।

3.4 अष्टम (8) भाव फल विचार –

भौमेऽब्दपे क्रूरहतेऽयसा घातो बलोज्झिते।

अग्निभीरग्निभे क्रूरनराद्द्विपदभे मृति:॥

भाषार्थ – मंगल वर्षेश होकर यदि पाप युत दृष्ट हो, निर्बल हो तो लोह की चोट से व्रण होता है। वैसे ही मंगल यदि अग्नितत्व वाले राशि में हो अर्थात् मेष, सिंह, धनु राशियों में हो, आग से जलने का भय होता है। वैसे ही मंगल द्विपद अर्थात् मिथुन, कन्या, तुला, धनु के पूर्वार्ध में हो तो क्रूर नर द्वारा मरण होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

वियत्वनिपामातयरिपुतस्करजं भयम्।

तुर्ये मातु: पितृव्याद्वा मातुलात्पितृतो गुरो:॥

भाषार्थ – निर्बल मंगल वर्षेश होकर यदि दशम स्थान में हो, तो राजा से , मन्त्री से, शत्रु से, चौर से भय होता है। अथवा वैसा ही मंगल यदि चौथे स्थान में हो तो, माता से, चाचा से, या मामा से , पिता से तथा गुरू से भय होता है। ऐसा ताजिकोक्त भावफल समझना चाहिये।

महामृत्यु योग –

लग्नेन्थिहापतिसमापतयो मृतीशाश्चेदित्थशालिन इमे निधनप्रदा: स्यु:।

चेत्पाकरिष्टसमये मृतिरेव तत्र सार्के कुजे नृपभयं दिवसेऽब्दवेशे॥

भाषार्थ - यदि लग्नेश, मुथहेश, वर्षेश ये अष्टमेश हो या अष्टमेश से इत्थशाल योग करते हो तो

मरणप्रद होते हैं। यदि जन्मकालिक दुर्ग्रह मारकग्रहों की दशा, या अन्तर्दशा के समय में उक्त योग घटित हो तो मरण ही होता है अथवा दिन में वर्षप्रवेश हो और शनि से युक्त मंगल हो तो राजभय होता है।

बोध प्रश्न : -

1. 'सित' का शाब्दिक अर्थ है –
   क. मंगल ख. काला ग. शुक घ. बुध
2. वर्षेश से तात्पर्य है –
   क. वर्ष ख. वर्ष की गणना ग. वर्ष का फल घ. वर्ष का स्वामी
3. दारा किसे कहते है –
   क. पति को ख. स्त्री को ग. पत्नी को घ. कोई नहीं
4. निम्नलिखित में 'अब्द' है –
   क. मास ख. वर्ष ग. दिन घ. सप्ताह
5. निर्बल मंगल वर्षेश होकर यदि दशम भाव में स्थित हो तो –
   क. राजा से सुख होता है।
   ख. राजा से भय होता है।
   ग. राजा द्वारा धन की प्राप्ति होती है।
   घ. राजा द्वारा सम्मान मिलता है।

सूर्ये मूसरिफे सितेन जनने वर्षेऽधिकारी तथा
केन्द्रे राजगदाद्भयं च रूगसृक्स्थानेऽधिकारीन्दुजे।
सौम्ये क्रूरदृशा कुजस्य रूगसृग्दोषो दिनांशुस्थिते
दग्धे बन्वमृती विदेशत इति प्राहुर्बुधे तादृशे ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में यदि सूर्य, शुक्र से मूसरिफ योग करे, और वर्षकाल में पंचाधिकारों में अधिकारी हो और केन्द्र १,४,७,१० में हो, तो राजा से, रोग से, वा राजरोग से भय होता है, और जन्मकाल में बुध यदि मंगल के राशि में हो, वर्षकाल में अधिकारी हो तो रोग होता है, फिर भी वैसा बुध अस्तंगत हो, पाप से हत हो तो विदेश से बन्धन मरण होता है। ऐसा ताजिक के भावफल में कहा गया है।

भौमस्थानेऽधिकारीदौ गुप्तं नृपभयं रूजः।
मन्दोऽधिकारी खे लोहहतेः पीडाकरः स्मृतः ।।

भाषार्थ – जन्मकाल में जहॉ पर मंगल स्थित हो, उस राशि में चन्द्रमा वर्षकाल में रहे और अधिकारी भी हो, तो गुप्त राजभय होता है और रोग भी होता है या शनि अधिकारी होकर यदि दशम में हो, तो लोह के प्रहार से पीड़ा करने वाला होता है।

भौमेऽष्टमे भयं वह्नः प्रहारो वा नृपाद्भयम्।

आरे खस्थे चतुष्पादभ्यः पातो दुःखं रूजोऽसृजा।।

भाषार्थ – मंगल यदि वर्षलग्न से अष्टम में हो, तो आग का भय हो, शस्त्रादि से आघात हो, वा राजा से भय होता है। मंगल यदि दशम में हो, तो चतुष्पद से गिर पड़े और रक्त विकार से रोग होता है।

वित्ताष्टगेज्यो धनहा यद्यब्देशोऽशुभेक्षितः।

मन्दे द्युने दुर्वचनापवादकलिभर्त्सनम्।।

भाषार्थ – वर्षलग्न से द्वितीय अष्टम स्थान स्थित वृहस्पति यदि वर्षेश हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो धननाश करता है और यदि शनि सप्तम में हो, तो दुर्वचन आदि सुनता है तथा स्व जनों से कलंकित झगड़ा और गञ्जन भी होता है।

पतिते ज्ञे क्रूरदृशाऽऽरेत्थशाले मृतिं वदेत्।

कुजहद्दास्थिते नाशः सौम्यदृष्ट्या शुभं भवेत्।।

भाषार्थ – पापग्रह से पीडित बुध यदि क्रूरदृष्टि से मंगल से इत्थशाल करता हो, तो मरण कहना और पतित बुध यदि मंगल की हद्दा में हो तो धननाश होता है। उक्त योगाद्वय में शुभग्रह की मित्र दृष्टि से शुभ होता है।

लग्नाधिपे नष्टदग्धे योषिद्वादोऽशुभान्विते।

जन्मन्यष्टमगो जीवो नाधिकारी कलिः पृथुः।।

भाषार्थ – वर्ष लग्नेश दुर्बल तथा अस्तंगत, पापयुत हो, तो स्त्रियों से विवाद होता है, या जन्म लग्न से अष्टम भाव में स्थित वृहस्पति यदि वर्षकाल में पञ्चाधिकारों में अधिकारी नहीं हो, तो भारी झगड़ा होता है।

जयः शुक्रेक्षणादुक्तः प्रत्युत्तरवशेन तु।

भौमेऽन्त्यगे धने सूर्ये वदात्क्लेशं विनिर्दिशेत्।।

भाषार्थ – जन्म लग्न से अष्टमस्थान स्थित वृहस्पति पर यदि शुक्र की दृष्टि हो, तो विवाद से जय होता है या मंगल वर्षलग्न से द्वादश स्थान में हो, सूर्य दूसरे स्थान में हो, तो वाद से क्लेश होगा, ऐसा भावफल समझना चाहिये।

रिपुगोत्रकलिर्भीतिः संख्ये कुजहतेऽब्दपे ।

दग्धो जन्माङ्गपो वर्षेऽष्टमो रोगकली दिशेत् ।।

भाषार्थ – वर्षेश यदि मंगल से पीडित हो, तो शत्रु से या अपने वंशजों से कलह होता है, लड़ाई का भय होता है अथवा जन्मलग्नेश पाप से दग्ध होता है, वर्षलग्न से अष्टम भाव में हो तो रोग एवं कलह उत्पन्न होता है, ऐसा भावफल कहना चाहिये ।

सूत्यब्दयोरधिकृतो भौमस्थाने गुरूर्हतः ।

पापैर्वादः स्फुटोऽप्येवं तादृशीन्दौ शनेः पदे ।।

भाषार्थ – यदि जन्मकाल और वर्षकाल में अधिकार पाया हुआ वृहस्पति जन्मकालिक मंगल के स्थान में हो, पापों से हत हो, तो लोगों से विवाद होता है । इसी प्रकार जन्म वर्षकाल का अधिकार पाया हुआ चन्द्रमा यदि शनि के पद में हो तो स्पष्ट रूप से विवाद होता है ।

सूत्यब्दयोरधिकृते चन्द्र बुधपदे हते ।

क्रूरैर्विदेशगमनं वादः स्रूाद्विमनस्कता ।।

भाषार्थ – जन्म और वर्षकाल में अधिकार पाया हुआ चन्द्रमा यदि जन्मकालिक बुधाश्रितराशि में हो और पापों से हत हो, तो परदेशगमन होता है । लोगों से विवाद और वैमनस्य होता है । ऐसा भावफल समझना चाहिये ।

मेषे सिंहे धनुष्यारे वृषे रन्ध्रेऽसितो भयम् ।

मृतौ मृतीशलग्नेशौ मृत्युदौ पापदृग्युतौ ।।

भाषार्थ – यदि मंगल मेष में या सिंह में , धनु में, वृष में होकर वर्षलग्न से आठवें स्थान में हो, तो तलवार से भय होता है । पाप से दृष्ट और युत अष्टमेश और लग्नेश यदि अष्टमस्थान में हो तो मृत्यु को देता है ।

यत्रर्क्षे जन्मनि कुजः सोऽब्दे लग्नोपगो यदा ।

बुधो वर्षपतिर्नष्टबलस्तत्र न शोभनम् ।।

भाषार्थ – जन्मकुण्डली में मंगल जिस राशि में हो, वही यदि वर्षलग्न हो जाय, और बुध यदि वर्षेश हो, तो वह वर्ष अच्छा नहीं होता है ।

सार्के शनौ भौमयुते खाष्टस्थे वाहनाद्भयम् ।

सार्के भौमेऽष्टमस्थे तु पतनं वाहनाद्भवेत् ।।

भाषार्थ – रवि, कुज, शनि यदि दसवें , आठवें स्थान में हो तो सवारी से गिरने का भय होता है या यदि रवि, मंगल ही अष्टम में हो तो भी सवारी का भय होता है ।

सारेऽब्दपेऽष्टमे मृत्युश्चन्द्रेऽन्त्यारिमृतौ मृतिः।

उदिते मृतिसद्मेशे निर्बले जीविते मृतिः॥

भाषार्थ – मंगल युत वर्षेश यदि अष्टम स्थान में हो तो मृत्यु होती है या मंगल युत चन्द्रमा ६,८,१२ वें स्थानों में हो तो मरण होता है या मृत्युसहमेश उदित हो, निर्बल हो, जो जीवित जीवन में मरण समान कष्ट भोगता है, ऐसा भावफल कहना चाहिये।

पुण्यसद्मेश्वरः पुण्यसहमादष्टगो यदा।

सूत्यष्टमेशः पुण्यस्थो मृतिदः पापदृग्युतः॥

भाषार्थ – पुण्य सहम का स्वामी यदि पुण्यसहम से आठवें स्थान में हो और पापग्रहों से दृष्ट युत हो, तो मरण को देता है या जन्मलग्न से अष्टमेश ग्रह यदि पुण्य सहम में स्थित हो, पापग्रहों से युत दृष्ट हो मृत्यु को देता है। ऐसा भावफल कहना चाहिये।

सूत्यष्टमगतो राशिः पुण्यसद्मानि नाथयुक्।

अब्दलग्नाष्टमर्क्षे वा चेदित्थं स्यान्मृतिस्तदा॥

भाषार्थ – जन्मलग्न से अष्टम राशि यदि वर्ष में पुण्य सहम हो, पुण्यसहमेश से युत हो, तो मृत्यु होती है, या वर्षलग्न से अष्टम राशि में पुण्यसहम और पुण्य सहमेश भी हो, तो भी मृत्यु होती है।

पुण्यसद्माशुभाक्रान्तं मृतीशोऽन्त्यारिरन्ध्रगः।

मुथहेशोऽब्दपो वापि मृत्युं तत्र विनिर्दिशेत्॥

भाषार्थ - पुण्यसहमेश पाप से युत और अष्टमेश ६,८,१२ इन स्थानों में हो तो मृतयु होती है अथवा मुथहेश या वर्षेश पाप से युत होकर ६,८,१२ इन स्थानों में हो, तो भी मृत्यु होता है, ऐसा भावफल कहना चाहिये।

सक्रूरे जन्मपे मृत्यो मृतिश्चेदिन्थिहाऽऽर्कियुक्।

भौमक्षुतेक्षणे तत्र मृत्युः स्यादात्मघाततः॥

भाषार्थ – पापयुक्त जन्मलग्नेश यदि वर्षलग्न से अष्टमस्थान में हो, तो मृत्यु होती है या यदि मुथहा शनि से युक्त हो, तो भी मृत्यु होती है अथवा उक्त दोनों योग में मंगल की क्षुतदृष्टि पड़ती हो, तो आत्मघात से मरण होता है।

मन्दोऽष्टमे मृताशेत्थशालान्मृत्युकरः स्मृतः।

शुभेत्थशालात्सर्वेऽपि योगा नाशुभदायकाः॥

भाषार्थ – शनि अष्टम स्थान में हो अष्टमेश से इत्थशाल करता हो तो मृत्युकर होता है। शुभग्रह से इत्थशाल होने से सब अशुभ योग अनिष्टकाल देने वाले नहीं होते है।

सूतिरन्ध्रपतिर्मन्दोऽष्टमोऽब्दे लग्नपेन चेत् ।

इत्थशाली क्रूरदृशा तत्कालं मृत्युदायकः ।।

भाषार्थ – जन्मकाल के अष्टमेश शनि होकर यदि वर्षकाल में लग्नेश से क्रूरदृष्टि से इत्थशाल योग करता हो, तो तत्क्षण ही मृत्युदायक होता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

पुण्यसद्मनि विधुस्तनौ तथाऽस्ते खलो मृतिरथार्थरिष्फगौ ।

मृत्युदौ खलखगावथो जनुर्वर्ष्ज्ञवेशतनुपौ मृतौ मृतिः ।।

भाषार्थ – यदि चन्द्रमा पुण्य सहम में लग्न में हो, सातवें स्थान में पापग्रह हो तो मत्यु होती है और यदि दो पापग्रह दूसरे बारहवें में हो, तो भी मृत्यु होगा, ऐसा जानना चाहिये और जन्मलग्नेश वर्षलग्नेश यदि अष्टम स्थान में गत हों, तो मरण होता है।

अष्टम भाव स्थित समस्त ग्रहों का भावफल –

चन्द्रोऽष्टमे निधनदः खलखेटयुक्तः पपाश्च तत्र मृतितुल्यफलं च विद्यात् ।

सोम्याः स्ववातुवशतो रूजमर्थहानि मानक्षयं मुथशिले शुभजे शुभञ्च ।।

भाषार्थ – पापयुत चन्द्रमा अष्टम में हो तो मरण करता है। पापग्रह अष्टम में हो तो मरण समान कष्ट होता है और शुभग्रह अष्टम में हो, तो अपने धातुवश जिस ग्रह के जो धातु हैं, उस मूलक रोग होता है, धननाश, सम्मान का नाश होता है। जहॉ यदि शुभग्रह से इत्थशाल हो, तो शुभ होता है।

3.5 नवम (9) भावफल विचार –

भौमेऽब्दपे त्रिनवगे क्रूरायुक्ते बलान्विते ।

गुणावहस्तदा मार्गश्चिरं कार्यं स्थिरं ततः ।।

भाषार्थ – यदि मंगल वर्षेश होकर ३,९ स्थान में हो, पापग्रहों से युक्त न हो, बली हो, तो मार्ग चलना शुभप्रद लाभजनक होता है, और कोई भी कार्य अधिक समय तक स्थिर रहता है।

त्रिधर्मस्थोऽब्दपः सूर्यः कम्बूली मार्गसौख्यदः ।

अन्यप्रेषणयानं स्यात्स चेन्नाधिकृतो भवेत् ।।

भाषार्थ – वर्षेश सूर्य ३,९ स्थान में रहकर यदि कम्बूल योग करता हो, तो मार्ग में सुख लाभ को देता है। यदि पंचाधिकारियों में वह अधिकारी नहीं होता है तो अन्य पुरूष के भेजने पर परदेश की यात्रा करता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

शुक्रेऽब्दपे त्रिनवगे मार्गे सौख्यं विलोमगे ।

अस्ते वा कुगतिः सौम्ये देवयात्रा तथाविधे ।।

भाषार्थ – वर्षेश शुक्र यदि ३,९ स्थान में हो, तो मार्ग में सुख होता है। यदि वर्षेश शुक्र वक्री हो, या अस्तंगत हो, तो मार्गगमन ठीक नहीं होता है। यदि बुध वर्षेश तथा बलवान भी होकर ३,९ स्थान में हो, तो देव तीर्थ सम्बन्धिनी यात्रा होती है।

क्रूरादिते कुयानं स्याद्गुरावेवं विचिन्तयेत्।
इत्थशाले लग्नधर्मपत्योर्यात्राऽस्त्यचिंतिता॥

भाषार्थ – यदि वैसे बुध वर्षेश होकर पाप से पीडित हो, तो अशुभ यात्रा होती है। इस प्रकार यदि वृहस्पति बली होकर वर्षेश भी होकर ३,९ स्थान में गत हो, पाप से युत दृष्ट नहीं हो, तो धर्मयात्रा होती है। यदि दुर्बल वर्षेश गुरू पाप से पीडित होकर ३,९ स्थान में हो तो कुयात्रा होती है और सभी योगों में लग्नेश नवमेश को इत्थशाल होता हो, तो आकस्मिक यात्रा होती है।

लग्नेशो धर्मपं यच्छन् स्वं महश्चिन्तिताध्वदः।
एवं लग्नाब्दपोर्योगे मुथहांगपयोरपि॥

भाषार्थ – लग्नेश यदि नवमेश को अपना तेज देता हो, अर्थात् कालांश के अन्दर हो, तो चिन्तित मार्गगमन होता है, अर्थात् रास्ता में समस्या उत्पन्न होती है एवं यदि लग्नेश वर्षेश को इत्थशाल होता हो या मुथहेश वर्षलग्नेश को इत्थशाल होता हो, तो मार्ग में चिन्ता होती है।

गुरूस्थाने कुजे धर्मे सद्यात्रा भृत्यवित्तदा।
ज्ञस्थाने लग्नपो भौमो दृष्टः सद्यानसौख्यदः॥

भाषार्थ – जन्मकालिक वृहस्पति जिस राशि में हो, उस राशि में यदि वर्ष काल में मंगल हो और वर्षलग्न से नवम स्थान में हो, तो नौकर और धन मिलाने वाली यात्रा होती है। यदि लग्नेश मंगल बुध के स्थान में अर्थात् जन्म कुण्डली में जिस राशि में बुध हो, उस राशि में होकर शुभग्रह से दृष्ट भी हो, तो अच्छे सुख को देने वाली यात्रा होती है।

स्वस्थानगो वा बलवान लग्नदर्शी सुयानदः
जन्माधिकारी ज्ञो मन्दस्थाने क्रूरयुतो यदा।
पन्था रिपोर्झकटकाद्गुरूरध्वेन्दुजीवयोः
धर्मे शनिर्नाधिकारी पन्थानमशुभं वदेत्॥

भाषार्थ - यदि बलवान मंगल जन्म तथा वर्ष काल में भी अपने राशि में हो, लग्न को देखते हो, वर्षलग्न से नवमें स्थान में हो, तो अच्छी यात्रा होती है। वैसे बुध यदि जन्मकाल में अधिकारी होकर वर्षकाल में शनि के स्थान में हो, पापयुत हो, तो जातक शत्रु के कलह से रूठकर पददेश यात्रा करता है और यदि चन्द्रमा या वृहस्पति जन्मकालिक शनि के राशि में हो, नवमें स्थान में हो तो लम्बी यात्रा

होती है। यदि अधिकार रहित शनि नवम स्थान में हो, तो अशुभ यात्रा होती है।

इत्थं गुरौ दूरयात्रा नृपसंगस्ततो गुण: ।

कुजेऽब्दपे नष्टबले स्वजनाद्दूरतो गति: ।।

भाषार्थ – इस प्रकार यदि अधिकार रहित वृहस्पति नवम स्थान में स्थित हो, तो दूर देश की यात्रा होती है। वहॉ राजा से मिलन उस से लाभ प्रतिष्ठा होती है। ऐसे ही यदि मंगल वर्षेश होकर हीनबली और नवम स्थान में स्थित हो तो अपने परिजन को छोड़कर दूर देश जाना पड़ता है।

द्यूनेन्थिहा धर्म इन्दो सबलेऽध्वा विदेशग: ।

वर्षेशो बलवान्पापायुत: केन्द्रेऽधिकारवान् ।।

अधिकारे गति: संख्ये सेनापत्येऽपि वा वदेत् ।

एवं बुधे कुजे जीवयुतेऽर्कान्निर्गते पुन: ।

परसैन्योपरि गतिर्जय: ख्यातिसुखावह:

जीवान्नवमगे भौमे शुभा यात्रा नृणां भवेत् ।।

भाषार्थ – यदि मुथहा सप्तम स्थान में हो, और सबल चन्द्रमा नवम स्थान में हो तो परदेश जाना होता है या वर्षेश कोई भी ग्रह बली हो, पाप से युत दृष्ट नहीं हो और केन्द्र १,४,७,१० में हो तथा पंचाधिकारियों में किसी भी अधिकार में हो तो किसी काम काज के अधिकार में गमन हो। या युद्ध में या सेनाध्यक्ष के पद पर जाना पड़े। इस प्रकार बुध और मंगल ये बलवान हों , गुरू से युक्त हो, सूर्य से दूर अर्थात् अस्त नहीं हो, तो शत्रुसेना के आक्रमण के लिये जाना पड़े और यश सुख देने वाला जय हो एवं यदि वृहस्पति से नवम स्थान में मंगल हो, तो मनुष्यों की यात्रा अच्छी होती है।

अथ नवम भावस्थ समस्त भावफल विचार –

तपसि सोदरभी: पशुपीडनं खलखगेऽतिमुदा रविरत्र चेत् ।

शुभखगा धनधमविवृद्धिदा: खलखगेऽपि शुभेत्यपरे जगु: ।।

भावार्थ – पापग्रह नवम स्थान में सहोदर को भय, पशुओं की पीड़ा, होती है। यदि वहॉ रवि नवम में हों, तो अत्यन्त हर्ष को देते हैं। यदि शुभग्रह नवम स्थान में हों, तो धन धर्म को बढ़ाते हैं, और आचार्य कहते है कि नवम में पाप रहने से शुभ ही होता है।

3.6 सारांश

ताजिक शास्त्र में समस्त भावफल षोडश योगों के आधार पर कथित है। वर्षकुण्डली में सप्तम से लेकर नवम भाव तक जितनी भी ग्रहों की परिस्थितियॉ बनती है, उसके आधार पर उन

भावफलों का विवेचन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सप्तम से लेकर नवम भाव तक के भाव फल विचारों का अध्ययन सम्यक् रूप से कर सकेगें। ताजिक की परम्परा में वार्षिक फलादेश आदि का समन्वय है। ताजिक शास्त्र की विशेष जानकारी हेतु पाठकों को ताजिक के मूल ग्रन्थ का भी अध्ययन करना चाहिये।

3.7 पारिभाषिक शब्दावली

बली – बलवान

ईज – वृहस्पति

सहमेश – सहम का स्वामी

अब्द – वर्ष

सप्तमेश – सप्तम भाव का स्वामी

खे – आकाशे

विदेशगमन – विदेश जाना

युक्त – के साथ

कुज – मंगल

अस्तंगत – ग्रह का उसके नीच स्थान में जाना

सोदर – सहोदर

षोडश – सोलह

पापयुत – पापग्रहों के साथ होना

स्वस्थान – अपना स्थान

नृप – राजा

मार्गगमन – मार्ग में जाना

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. घ
3. ग
4. ख
5. ख

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सप्तम भाव फल विचार को स्पष्ट कीजिये।
2. ताजिकोक्त अष्टम भाव फल विचार का वर्णन कीजिये।
3. नवम भाव फल विचार का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 4 10 - 12 भावफल

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 10-12 भावफल

4.4 बोध प्रश्न

4.5 सारांश

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के तृतीय खण्ड के चतुर्थ इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार 10-12 भावफल विचारों का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने 7 -9 भावफल का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। यहॉ इस इकाई में आप दशम (10) भाव से लेकर द्वादश (12) भाव तक के फल का अध्ययन करेगें।

10-12 से तात्पर्य जन्मकुण्डली के दशम भाव से लेकर द्वादश भाव तक से है। इन भावों में स्थित ग्रहों का फल ताजिक शास्त्र के अनुसार किस प्रकार होगा, कैसा होगा ?

इस इकाई में आप 10-12 भावफल विचार का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. भावफल क्या है।
2. ताजिकोक्त 10-12 स्थित भावफल क्या है।
3. दशम एवं द्वादश स्थान कौन है।
4. ताजिक शास्त्रोक्त 10-12 स्थित ग्रहों के फल क्या होते है।
5. वर्षकुण्डली में 10-12 स्थित भावफल विचार किस प्रकार करना चाहिये ।

4.3 10-12 भावफल विचार

अब तक पाठकों ने प्रथम भाव से लेकर नवम भाव तक के भावफल विचार का ज्ञान कर लिया है, अब आप इस इकाई में दशम (10) से (12) तक के भावफल का ज्ञान प्राप्त करेगें। आइये दशम भाव से आरम्भ करते है –

सबलेऽब्दपतौ खस्थे राज्यार्थसुखकीर्तय:।

स्थानान्तराप्तिरन्यस्मिन्केन्द्रे गृहसुखाप्तय: ।।

भाषार्थ – बलवान वर्षेश दशम स्थान में हो तो राज लाभ, धन लाभ, यश का लाभ होता है, या सबल वर्षेश दशम को छोड़कर और केन्द्र स्थान (१,४,७,१०) में हो तो दूसरे स्थान का लाभ और गृह के सुखों की प्राप्ति होती है।

इत्थ बला रविर्भूस्थ: पूर्वार्जितपदाप्तिकृत्।

एकादशेऽस्मिन्सख्यं स्यान्नृपामात्यगणोत्तमै: ।।

भाषार्थ – इस प्रकार बलवान सूर्य वर्षेश होकर चौथे स्थान में हो तो पूर्व के उपार्जित स्थान की प्राप्ति

होती है, या बली वर्षेश सूर्य एकादश स्थान में हो, तो राजा से अथवा उनके मन्त्रियों से मित्रता होती है।

रविस्थानेन्थिहा लग्ने खे वा राज्याप्तिसौख्यदा।

नीचेऽर्कः पापसयुक्तो भूपाद्बन्धवधं दिशेत्॥

भाषार्थ – यदि मुथहा रवियुक्त् हो, या लग्न में दशम में हो तो राज्यलाभ सुख को देती है। यदि सूर्य पापयुक्त होकर नीच (तुला) राशि में हो, तो राजा से बन्धन, प्राणदण्ड मिलता है। जिस का जन्म कार्तिक में है उसी के लिये यह योग हो सकता है। रवि के उच्च को फलित में मेषराशि में ही स्थिर माना है।

सिंहे रविर्बलो खस्थः स्थानलाभो नृपाश्रयः।

स्थानान्तराधिकाराप्तिरिन्दुरारपदे बली॥

भाषार्थ – सूर्य बली होकर सिंहराशि में वर्षलग्न से दशम स्थान में हो, स्थान का लाभ राजा का आश्रय होता है , या बली चन्द्रमा, जन्मकालिक मंगल के आश्रित राशि में हो, तो दूसरे स्थान का लाभ होता है।

खेशलग्नेशवर्षेशेत्थशालो राज्यदायकः।

वर्षेशे राज्यसहमेऽर्केत्थशाले महानृपः॥

भाषार्थ – दशमेश, लग्नेश, वर्षेश इन सब ग्रहों में यदि इत्थशाल होता हो, तो राज्य दायक होता है। अथवा वर्षेश राज्य सहम में हो सूर्य से इत्थशाल योग करता हो, तो महाराजा होता है।

शनिस्थाने कुजः पश्यन्मुथहां पापकर्मतः।

नृपभीतिं वित्तनाशं दद्याद्दशमगो यदि॥

भाषार्थ - यदि मंगल जन्मकालिक शनि के राशि में रहकर वर्षलग्न से दशम स्थान में हो और मुथहा को देखे, तो पापकर्म, दुराचार, व्यभिचार, चोरी, डकैती करने से राजदण्ड और धननाश होता है। ऐसा भावफल कहना चाहिये।

ईदृश त्रिनवस्थेऽस्मिन्दग्धनष्टऽघसंचयः।

मन्दोऽब्दपोऽधिकारी त्रिधर्मगो धर्मवृद्धिदः॥

भाषार्थ – ऐसे ही जन्मकालिक शनि के राशि में स्थित मंगल ३,९ स्थान में हो अस्तंगत पापयुत दृष्ट हो, बलहीन हो, तो पाप की वृद्धि होती है, या शनि पंचाधिकारियों में अधिकारी होकर वर्षेश हो, ३,९ स्थान में हो, तो धर्म की वृद्धि होती है।

तस्मिन्दग्धे विनष्टे च पापकद्धर्मनिन्दकः।

ईद्दशेद्दक्फलं सूर्ये गुरावित्थं नयार्थभाक् ।।

भाषार्थ - यदि वर्षेश शनि अस्त हो, निर्बल हो, पापयुक्त हो, तो जातक पाप करने वाला तथा नास्तिक होता है । यदि वैसे क्षीणबल पापयुत दृष्ट होकर सूर्य वर्षेश हो, तो पहले के समान हो अर्थात् पाप करने वाला, धर्म निन्दक होता है । यदि वृहस्पति ऐसा हो, नीति से धन को पाता है, ऐसा भावफल ताजिककार ने कहा है ।

तत्रस्था मुथहा पुण्यागमं पापं खलाश्रयात् ।

सूतौ खेशे रवौ खस्थे वर्षे मुथशिलं यदि ।।

लग्नाधिपेन राज्याप्तिरूक्ता वीर्यानुसारतः ।

धर्मकर्माधिपौ दग्धौ धर्मराज्यक्षयावहौ ।।

अर्थ – यदि मुथहा ३,९ स्थानों में हो तो शुभ के आश्रय से पुण्य का आगम पाप के आश्रय से पाप का आगम होता है । जन्म काल में सूर्य दशमेश हाकर अर्थात् जन्मलग्न वृश्चिक हो, वर्षकाल में वर्षलग्न से दशम में हो और लग्नेश से इत्थशाल योग करता हो तो बल के अनुसार राज्य का लाभ होता है, और यदि धर्मेश कर्मेश ये दोनों अस्तंगत हों, तो धर्मक्षय राज्यनाश होता है ।

अथ दशम भावस्थ सकल भावफल विचार: -

गगनागो रविजः पशुवित्तहा रविकुजौ व्यवसायपराक्रमौ ।

धनसुखानि परे च धनात्मजावनिपसंगसुखानि वितन्वते ।।

भाषा – दसवें स्थान में शनि हो, तो पशु धन नाशक होता है, और रवि, मंगल दशम स्थान में हों, तो व्यापार उद्योग को करते हैं और शुभ ग्रह यदि दशम में हो तो धनसुख, पुत्रसुख, राजसमागत सुख करते हैं ।

अथ एकादश (11) भाव फल विचार: -

अब्दपेज्ञेऽर्थगे लाभो वाणिज्याच्छुभदृग्युते ।

सेन्थिहेऽस्मिँल्लग्नगते लाभः पठनलेखनात् ।।

भाषा – वर्षेश होकर बुध दूसरे स्थान में हो, शुभग्रह से युत दृष्ट हो, तो व्यापार से लाभ होता है वा मुथहा युत बुध वर्षेश हो और लग्न में स्थित हो तो पढ़ने लिखने से लाभ होता है ।

अस्मिन्षष्ठाष्टान्त्यगते सक्रूरे नीचकर्मकृत् ।

क्रूरेक्ष्णे न वा लाभोऽस्तंगते लिखनादितः ।।

भाषा – वर्षेश बुध यदि ६,८,१२ इन स्थानों में हो पाप से युत हो, तो छोटा काम करता है, और वैसे ही वर्षेश बुध पापग्रह से दृष्ट हो तो लाभ नहीं होता है, और वैसे ही वर्षेश बुध यदि अस्तंगत हो तो

लिखने पढ़ने से लाभ नहीं होता है।

जीवेऽब्दपे क्रूरहते लग्ने हानिर्भयं नृपात्।

अस्मिन्नधिकृते द्यूने व्यवहाराद्धनाप्तय: ।।

भाषा – वृहस्पति वर्षेश होकर पापग्रहों से पीडित हो और वर्षलग्न में हो तो धन की हानि होती है, राजा से भय होता है और यदि ऐसा वृहस्पति पंचाधिकारियों में अधिकारी हो सप्तम में हो तो खरीद – विक्री से धन लाभ होता है।

लग्नायेशेत्थशाले स्याल्लाभ: स्वजनगौरवम्।

सर्वेऽपि लाभ वित्ताष्त्यै सबला निर्बला न तु।।

भाषा – लग्नेश और लाभेश को इत्थशाल होता हो, तो धन लाभ अपने परिजनों में श्रेष्ठता होती है। लाभ ११ स्थान में बलवान् सभी शुभग्रह या बलवान् सब पापग्रह हो, तो धनलाभ के लिये ही होता है और दुर्बल शुभग्रह या पापग्रह लाभ (११) में हो तो हानि के लिये होते है।

सवीर्यो ज्ञ: समुथहो लग्नेऽर्थसहमे शुभा: ।

तदा निखातद्रव्यस्य लाभ: पापदृशा न तु।।

भाषा – बली बुधग्रह मुथहा से युक्त होकर यदि लग्न में हो, और शुभग्रह सभी अर्थसहम में हों, तो गाड़ी हुई दौलत मिलती है। यदि उन योगकारक ग्रहों के उपर पापग्रहों की दृश्टि पड़ती है, तो लाभ नहीं होता है।

अथ एकादश भाव स्थित सकल भावफल विचार: -

लाभे धनोपचयसौख्ययशोऽभिवृद्धि सन्मित्रसंगबलपुष्टिकराश्च सर्वे।

क्रूरा बलेन रहिता: सुतवित्तबुद्धिनाशं शुभास्तु तनुतां स्वफलस्य कुर्यु: ।।

भाषार्थ – सकल पापग्रह या शुभग्रह लाभ स्थान में हों, तो धनवृद्धि, यशोवृद्धि, अच्छे मित्रों के संग, बलपुष्टि को करते हैं। बलहीन पापग्रह यदि लाभ स्थान में हों, पुत्रनाश, धननाश, बुद्धिनाश को करते हैं और बलहीन शुभग्रह अपने शुभफल के प्रभाव को कम करते है।

अथ द्वादश भावफल विचार –

लग्नाब्दपौ हतबलौ व्ययषण्मृतिस्थौ यद्राशिगौ तदनुसारि फलं विचिन्त्यम्।

षष्ठेऽब्दपे भृगुसुतेऽथ विनष्टवीर्ये दृष्ट खलै: क्षुतदृशा द्विपदर्क्षसंस्थे ।।

भृत्यक्षतिस्तुरगहा चतुरंघ्रिभस्थेऽन्यस्मिन्नपीदमुदितं फलमब्दनाथे।

खस्थे कुजे शनियुते तुरगादिनाश: स्याद्व्याकुलत्वमशुभोपहते व्यये वा ।।

भाषार्थ – लग्नेश और वर्षेश हीन बली होकर ६,८,१२ स्थानों में गया हो, तो जैसे राशि में गत हों,

उसी के अनुसार फल समझना चाहिये। जैसे उक्त स्थान में चतुष्पदराशि पड़े, तो चौपाइयों का नाश, ऐस द्विपदराशि में हो, तो आश्रित मनुष्य का नाश, जलचर राशि उक्त स्थान में हो, तो जलचर जीव का नाश होता है। इस प्रकार भावफल समझना चाहिये। यदि नष्टबल वर्षेश शुक्र षष्ठस्थान चतुष्पद राशि में हो और पापग्रहों से क्षुत १,४,७,१० दृष्टि से देखा जाता हो, तो घोड़ा का नाश होता है, ऐसे उक्त योग में छठें स्थान में और राशियों का भी फल सोचना चाहिये। शनि युत मंगल यदि दशम स्थान में हो, तो घोड़ों का नाश होता है। वहॉ यदि पापग्रहों से हत (युत दृष्ट) शनि, कुज द्वादश स्थान में हों, तो घोड़ा आदियों की खिन्नता व्याकुलता होती है।

बोध प्रश्न –

1. यदि बलवान वर्षेश दशम स्थान में स्थित हो तो –
   क. धन का लाभ होता है
   ख. धन की हानि होती है
   ग. धनाभाव होता है।
   घ. धन की पूर्ति होती है।
2. यदि सूर्य पापयुक्त होकर तुला राशि में गये हो तो –
   क. राजा से सम्मान मिलता है।
   ख. राजा से प्राणदण्ड मिलता है।
   ग. राजा से धन लाभ मिलता है।
   घ. राजा का प्रिय होता है।
3. दशमेश, लग्नेश, वर्षेश इन सभी ग्रहों में यदि इत्थशाल होता हो तो –
   क. राज्य नष्ट होता है।
   ख. राज्यदायक होता है।
   ग. राज्य में अशान्ति फैलती है।
   घ. कोई नहीं
4. यदि वर्षेश शनि अस्त हो, निर्बल हो, पापयुक्त हो तो –
   क. जातक नास्तिक होता है।
   ख. जातक आस्तिक होता है।
   ग. जातक सदाचारी होता है।
   घ. जातक दूराचारी होता है।

5. दसवें स्थान में शनि हो तो –

   क. पशु धननाशक होता है।

   ख. पशु धन वृद्धि करने वाला होता है।

   ग. दोनों

   घ. कोई नहीं

षष्ठे रवौ खलहते चतुरंघ्रिभस्थे भृत्यैः समं कलिरथाष्ठमरिःफगेऽपि।

चन्द्रेऽब्दपे बलयुते रिपुरिःफसंस्थे भूवासनद्रुमजलाशयनिर्मितिश्च।।

भाषार्थ - यदि सूर्य वर्षेश होकर वर्षलग्न से छठें स्थान में हो और पापों से युत दृष्ट हों चतुष्पद (मेष, वृष, सिंह, धनु के उत्तरार्ध, मकर के पूर्वार्ध) राशियों में हो अथवा ८,१२ स्थान में हो, तो नौकरी में झगड़ा होता है, या चन्द्रमा बलयुक्त होकर वर्षेश हो, छठे बारहवें स्थान में हो, नयी जमीन में बसे, पेड़ लगावे, बावड़ी आदि का निर्माण करता है। ऐसा भावफल समझना चाहिये।

स्वर्क्षोच्चगे कर्मणि सूर्यपुत्रे नैरूज्यमर्थाधिगमश्च जीवे।

सूर्ये नृपाद्बाहुबलात्कुजेऽर्थो बुधे भिषग्ज्यौतिषकाव्यशिल्पैः।।

भाषार्थ – शनि वर्षेश होकर अपने राशि मकर, कुम्भ में या उच्च में ही और वर्षलग्न से दशम में हों, तो आरोग्य और धनागम होता है। ऐसे ही वृहस्पति वर्षेश होकर अपने राशि (धनु, मीन) उच्च कर्क में हो, तो नैरूज्य अर्थागम यही फल होता है। सूर्य यदि वर्षेश होकर सिंह में मेष में हो, तो और वर्षलग्न से दशम में हो, तो राजा से धनागम होता है और मंगल वर्षेश होकर मेष या वृश्चिक राशि में हों और दशम स्थान में हों, तो अपने बाहुबल से धनागम हो और यदि बुध वर्षेश होकर मिथुन कन्या में हो, और वर्षलग्न से दशम स्थान में पड़े तो वैद्यक ज्योतिष, कविता और शिल्प से धनागम होता है।

मन्देऽब्दपे गतबले नैराश्ये दौस्थ्यमादिशेत्।

सूर्येऽब्दपे राशिस्थाने मन्देऽब्दजनुषोर्हते।।

सर्वकर्मसु वकल्यं वक्रेऽस्ते च तथा पुनः।

कर्मकर्मेशसहमनाथाः शनियुतेक्षितः।।

भाषार्थ – हीन बली शनि वर्षेश होकर दशमस्थान में हो, तो बुरी स्थिति होती है। यदि हीनबली सूर्य वर्षेश होकर जन्मकुण्डली के चन्द्रराशि में हो और शनि जन्मकाल और वर्षकाल में भी पापग्रहों से पीडित हो, तो सभी कर्मो में अपहृता होती है, अथवा शनिग्रह वक्री हो, या अस्त हो तो भी वैसा ही फल कहना चाहिये। यदि दशम भाव दशम भावेश तथा कर्मसहम ये सभी शनि से युत दृष्ट हो तो

वैसा ही फल कहना चाहिये।

षडष्टव्ययगेऽब्देशे कर्मेशे च बलोज्झिते।

सूतावब्दे च न शुभं तत्राब्दे मृतिपे तथा॥

भाषार्थ – वर्षेश वर्षलग्न से ६,८,१२ इन स्थानों में हो, जन्मकाल और वर्षकाल में भी बलहीन हो, तो शुभ नहीं होता है, अथवा वर्ष काल में अष्टमेश निर्बल हो, और ६,८,१२ इन स्थानों में हो, तो शुभ नहीं होता है।

यत्र भावे शुभफलो दुष्टो वा जन्मनि ग्रहः।

वर्षे तद्भावगस्तादृक् तत्फलं यच्छति ध्रुवम्॥

भाषार्थ – जन्मकाल में अच्छा या बुरा फल् को देने वाला ग्रह जिस स्थान में हो उसी स्थान में यदि वर्षकाल में हो तो निश्च वह अच्छा या बुरा फल अवश्य देता है।

ये जन्मनि स्युः सबला विवीर्या वर्षे शुभं प्राक्चरमे त्वनिष्टम्।

दद्युर्विलोमं विपरीततायां तुल्यं फलं स्रूादुभयत्र साम्ये॥

भाषार्थ – जो ग्रह जन्मकाल में सबल हों, किन्तु वर्षकाल में दुर्बल हों तो पहले शुभफल, पीछे अशुभफल को देते हैं। जो जन्मकाल में दुर्बल हों वही वर्षकाल में यदि सबल हों तो पहले अशुभ फल पीछे शुभ फल देते हैं। यदि जन्मकाल और वर्ष काल में भी सबल ही हों, तो शुभ फल ही दोनों समय में देते हैं। यदि दोनों समय में निर्बल ही हों, तो दोनों समय में भी अशुभ ही देते है।

अथ व्ययभावस्थसकलग्रहफलं विचारः -

पापा व्यये नेत्ररूजं विवादं हानि धनानां नृपतस्करादेः।

सौम्या व्ययं सद्व्यवहारमार्गे कुर्युः शनिर्हर्ष विवृद्धिमत्र॥

भाषार्थ – यदि व्ययभाव में पापग्रह हों तो नेत्ररोग, विवाद, राजा से चोर से धनों की हानि करते हैं और व्ययभाव में यदि शुभग्रह हों तो अच्छे कार्यों में व्यय होता है। शनि व्ययभाव में रहने से हर्षवृद्धि करते हैं।

4.4 सारांश

ताजिक शास्त्र में समस्त भावफल षोडश योगों के आधार पर कथित है। वर्षकुण्डली में दशम से लेकर द्वादश भाव तक जितनी भी ग्रहों की परिस्थितियॉ बनती है, उसके आधार पर उन भावफलों का विवेचन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप दशम से लेकर द्वादश भाव तक के भाव फल विचारों का अध्ययन सम्यक् रूप से कर सकेगें। ताजिक की परम्परा में

वार्षिक फलादेश आदि का समन्वय है। ताजिक शास्त्र की विशेष जानकारी हेतु पाठकों को ताजिक के मूल ग्रन्थ का भी अध्ययन करना चाहिये।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

सबल – बल सहित

उपार्जित – उत्पन्न करना

राज्यार्थ – राज्य के लिये

केन्द्र – १,४,७,१०

नीचोऽर्क : – सूर्य नीच राशि का हो

नृपाश्रय: – राजा का आश्रित

राज्यदायक – राज्य को देने वाला

इत्थशाल – षोडश योग में एक योग

पापकर्मत: – पाप कर्म से

शनिस्थाने – शनि स्थान में

त्रिकोण – ५,९

पुण्यागमं – पुण्य का आगम

खलाश्रयात् – पाप के आश्रय से

स्वस्थाने – अपने स्थान में

नृप – राजा

मार्गगमन – मार्ग में जाना

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ख
3. ख
4. क
5. क

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भाव फल विचार को स्पष्ट कीजिये।
2. दशम एवं एकादश भाव फल विचार का वर्णन कीजिये।
3. द्वादश भाव फल विचार का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 5 पंचवर्गी बल निर्णय

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 पंचवर्गी बल निर्णय

बोध प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 की तृतीय खण्ड के पंचम (5) इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार पंचवर्गी बल निर्णय का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने ग्रहों के समस्त भावफल विचार का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। यहॉ इस इकाई में आप पंचवर्गीबल निर्णय का अध्ययन करेगें।

पंचवर्गीबल निर्णय का तात्पर्य ग्रहों के बलाबल से है। ग्रहों के पंचवर्गीबल ताजिक शास्त्र के अनुसार किस प्रकार होगा, कैसा होगा ?

इस इकाई में आप पंचवर्गी बल निर्णय विचार का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. पंचवर्गी बल क्या है।
2. पंचवर्गी बल निर्णय किस प्रकार किया जाता है।
3. ताजिक शास्त्र के अनुसार पंचवर्गी बल क्या है ।
4. ताजिक शास्त्रोक्त ग्रहों के पंचवर्गी बल का निर्णय किस प्रकार होता है।
5. वर्षकुण्डली में पंचवर्गी बल का क्या अभिप्राय है ।

5.3 पंचवर्गी बल निर्णय

पाठक गण आपने अब तक भाव फल विचार के अन्तर्गत प्रथम भाव से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त तक का अध्ययन किया, अब आप यहॉ पंचवर्गी बल का अध्ययन कीजिये। ताजिककार ने पंचवर्गीय बल साधनार्थ कहा है कि –

त्रिंशत्स्वमे विंशतिरात्मतुंगे हद्देऽक्षचन्द्रा दशकं दृकाणे।

मुसल्लहे पञ्चलवा: प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवै: प्रकल्प्या: ।।

अन्वय: - स्वभे = निजगृहे, त्रिंशत् – त्रिंशत्संख्यका (३०) अंशा बलम्। आत्मतुंगे = स्वोच्चे स्थितस्य ग्रहस्य , विंशति: = विंशत्यंशा बलं, हद्दे = स्वहद्दायां , अक्षचन्द्रा: = पंचदश, अंशा बलम्। दृकाणे = स्वदृकाणे , दशकं = दशभागा बलम्। मुसल्लहे = स्वनवांशे, पंचलवा: - पंचमिता अंशा प्रदिष्टा: उक्ता:। एतेषां बलानां वेदलवै: = चतुर्थांशै: ,विंशोपका: - विंशत्यासन्नगता बलाङ्का: प्रकल्प्या:।

भाषार्थ – अपने राशि (गृह) में ग्रह होने से तीस अंश बलवान होता है। अपने उच्च में वीस अंश

बल, अपनी हद्दा में पन्द्रह अंश , अपने द्रेकाण में दस अंश, अपने नवमांश में पॉच अंश बल होता है। किसी ग्रह का गृह – उच्च हद्दा, द्रेकाण, नवमांश के बलों का योग कर चार से भाग देने पर, प्राप्त लब्धि विंशोपक बल होगा।

स्पष्टार्थ –

स्वगृहे = ३० अंश

स्वोच्चे = २० अंश

स्वहद्दायां = १५ अंश

स्वद्रेकाणे = १० अंश

स्वनवांशे = ५ अंश

योग = ८० अंश

अत्र पंचवर्गीय बलयोगाङ्कानामधिकत्वात्सर्वेषां ग्रहाणां बलसंख्या अंकलाघवार्थं चतुर्भिर्भक्ता: कृता :। स्पष्टमेव।

ग्रहों के उनके स्वस्थान से भिन्न स्थल पर बल विचार –

स्वस्वाधिकरोक्तबलं सुहृदभे पादोनमर्धं समभेऽरिभेऽघ्रिं:।

एवं समानीय बलं तदैक्ये वेदोद्धृते हीनबल: शरोन: ॥

भाषार्थ – अपने गृह, हद्दा, द्रेष्काण, नवमांश में जो - जो बल कहा गया है, वह सब मित्र के गृह, हृद, द्रेष्काण, नवमांश में पौने होकर होता है। सम ग्रह के गृह आदि में आधा होता है। शत्रु के गृह आदि में चौथाई होता है। इस प्रकार सभी स्थानों के बल ले आकर योग कर चार भाग देने से बल (विंशोपक बल) होता है। वह यदि पॉच से थोड़ा हो तो ग्रह बलहीन होता है।

स्वगृहे ३०।	स्वहद्दायां १५।	स्वद्रेकाणे १०।	स्वनवांशे ५। .....
मित्रगृहे २२।३० ...	मित्रहद्दे ११।१५ ...	मित्र द्रेकाणे ७।३० ...	मित्र नवांशे ३।४५....
गृहे १५।	समहद्दे ७।३०	सम द्रेकाणे ५। ...	समनवांशे २।३० ..
शत्रुगृहे ७।३०	शत्रुहद्दे ३।४५	शत्रु द्रेक्के २ ।४५ ...	शत्रुनवांशे १।१५ ....

स्वगृहे ३०।...	उच्चे २० ।	हद्दे १५	द्रेकाणे १०	नवांशे ५

ताजिक मत में मित्र शत्रु विचार –

मित्रं त्रिकोणत्रिभवस्थितश्चेद्द्वयर्यष्टरिष्फेषु समो ग्रहः स्यात् ।

केन्द्रेषु शत्रुः कथितो मुनीन्द्रैर्वर्षादि वेशे फल निर्णयाय ॥

भाषार्थ - जैसे जातकों में मित्र सम शत्रु का निर्णय लिखा है । वैसे ताजिक ग्रन्थों में नहीं, यहॉ तो जिस ग्रह को जो ग्रह मित्र दृष्टि से देखता है, वह मित्र है, जो शत्रु दृष्टि से देखता हो, वह शत्रु होता है, इन दोनों से भिन्न ग्रह सम होते हैं । वहॉ ३,५,९,११ स्थानों में वर्त्तमान ग्रह मित्र दृष्टि से देखता है, इसलिये मित्र होता है, १,४,७,१० इतने स्थानों में स्थित ग्रह शत्रु दृष्टि से देखता है, इस लिये शत्रु होते हैं । इनसे भिन्न २,६,८,१२ स्थानों में स्थित ग्रह सम होते हैं । यह निर्णय केवल ताजिक ग्रन्थ में वर्षेश निर्णयार्थ तथा फल विचारार्थ है । नीचे देखिये वर्षकुण्डली को, यहॉ पहले स्थानवश से मित्र शत्रु चक्र है –

वर्षाङ्ग चक्रम्

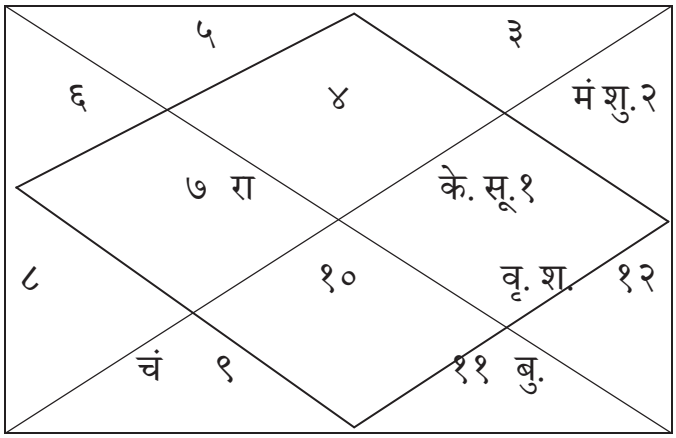

उदाहरण –

मित्रस्थानानि	३	५	९	११
समस्थानानि	२	६	८	१२
शत्रुस्थानानि	१	४	७	१०

अथ ताजिकमतेन वर्त्तमानोदाहरणे मित्रसमशत्रुचक्रम् –

ग्रहाः	सूर्यः	चन्द्रः	कुजः	बुधः	गुरूः	शुक्रः	शनिः
मित्राणि	चं.	सू. वृ. श.	बु.	मं. शु.	चं.	बु.	च.
समाः	मं. बु. शु.	मं. शु.	सू. वृ. श. चं.	सू. वृ. श.	मं. शु. बु.	सू. बृ. श. चं.	मं. बु. शु.
शत्रवः	वृ. श.	बु.	शु.	चं.	सू. श.	मं.	सू. वृ.

वर्षकुण्डली में यहॉ सूर्य के साथ वृहस्पति, शनि हैं। ये शत्रु हुये । दूसरे स्थान में मंगल, शुक्र ये सम हुये। नवम में , चन्द्रमा हैं वह मित्र हुये। बारहवें स्थान में बुध है, वह सम हुये। अर्थात् सूर्य को ताजिकमतेन यहॉ केवल चन्द्रमा ही मित्र हुये, और बुध, मंगल, शुक्र सम हुये और गुरू , शनि शत्रु हुये। ऐसे ही चन्द्रमा से ४ चौथे में बुध शत्रु। पंचम में सूर्य, गुरू , शनि, मित्र हुये। षष्ठ में कुज, शुक्र सम हुये। मंगल के साथ १ स्थान में शुक्र है, यह शत्रु, अष्टम में चन्द्रमा सम, एकादश में बुध मित्र, बारहवें में रवि, गुरू सम हुये। ऐसे ही और ग्रहों के भी मित्र सम शत्रु समझने चाहिये। यहॉ जो - जो ग्रह एक स्थान में साथ स्थित हैं। उनके मित्र , सम एक ही समान होगें। शत्रु में भी और ग्रह यथावत् रहेगें। केवल मित्र सम शत्रु से कौन ग्रह मित्र के या सम के या शत्रु के स्थान होरा आदि में है, यह विचार करना चाहिये।

बोध प्रश्न -

1. अपने राशि में ग्रह स्थित होने से कितना बलवान होता है।
   क. 20 अंश ख. 30 अंश ग. 40 अंश घ. 50 अंश
2. ग्रह 5 अंश बलवान किस परिस्थिति में होता है।
   क. अपने गृह में ख. अपने द्रेष्काण में ग. अपने नवमांश में घ. कोई नहीं
3. सम ग्रह के गृह आदि में होता है –
   क. आधा ख. पूर्ण ग. न आधा न पूर्ण घ. अधूरा
4. निम्नलिखित में सूर्य का शत्रु है –
   क. मंगल ख. चन्द्रमा ग. शनि घ. शुक्र
5. केन्द्रेषु का क्या अर्थ है –
   क. केन्द्र ख. केन्द्र और इषु ग. केन्द्र में घ. कोई नहीं

ग्रहों के चतुर्वगेश्वर चक्र विचार –

ग्रहा:	सूर्य:	चन्द्र:	भौम:	बुध:	गुरू:	शुक्र:	शनि:
गृहेशा:	मं.	वृ.	शु.	वृ.	मं.	शु.	मं .
हद्देशा:	बु.	वृ.	श.	मं.	वृ.	मं.	शु.
द्रेष्काणेशा:	सू.	बु.	श.	मं.	मं.	श.	सू.
नवांशेशा:	चं.	शु.	चं.	श.	मं.	बु.	चं.

यथा सूर्य ०।१२।५७।५० हैं। यहॉ मेष राशि में होने से, सूर्य का गृहेश मंगल हुये। मेष के १२ अंश भोगकर १३ वें अंश के ५७ कला भोग किया है, इसलिये मेष के १३ वें अंश बुध की हद्दा में पड़ा, अत: सूर्य के हद्देश बुध हुये, और मेष के तेरह अंश दूसरा द्रेष्काण हुआ, उसका स्वामी सूर्य स्वयं हुये और १३ अंश चतुर्थ नवमांश खण्ड में पड़ा मेष में मेष ही से नवांश गणना होती है, इसीलिये मेष से चतुर्थ कर्कराशि, उसका स्वामी चन्द्रमा नवांशेश मुसलद्दहेश हुये। ऐसे और ग्रहों के भी विचार कर उर्ध्वलिखित चक्र के कोष्ठ से भरें।

अब विचार करना है कि कौन ग्रह मित्रक्षेत्रादि में पड़ा इत्यादि। अत: यहॉ सूर्य मंगल के गृह में पड़ा, मंगल उनको सम है, अत: गृहेश सम हुआ। सूर्य का हद्दश बुध हैं, वह उनका सम हैं, अत: सूर्य का हद्देश भी सम ही हुआ। सूर्य का द्रेष्काणेश सूर्य ही अत: स्वद्रेष्काण में सूर्य पड़े। सूर्य का नवमांशेश चन्द्रमा हैं, वह सूर्य का मित्र हैं, अत: सूर्य का नवांशेश मित्र हुआ। ऐसे ही और ग्रहों के विचार कर अधोलिखित चक्र लिखिये –

ग्रहा:	सूर्य:	चन्द्र:	भौम:	बुध:	गुरू:	शुक्र:	शनि:
गृहेशसम्बन्ध:	सम	मित्र	शत्रु	सम	सम	स्वभ	सम
हद्देश सं0	सम	मित्र	सम	मित्र	निज	शत्रु	सम
द्रेष्काणेश सं0	निज	शत्रु	सम	मित्र	सम	सम	शत्रु
नवांशेश सं0	मित्र	सम	सम	सम	सम	मित्र	मित्र

अब ' त्रिंशत् स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे इत्यादि ' पूर्व श्लोक के अनुसार स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्भे इत्यादि श्लोक के सहायता से यहॉ समगृही का बल ३० / २ = १५° । मित्रनवमांश का बल ३।४५ इतने हुये। ऐसे ही सभी ग्रहों के विचार कर बलबोधक चक्र लिखना, यहॉ चतुर्वर्ग सम्बन्धी बल साधन हुआ है। उच्च बल ३२ वें श्लोक में साधन किया है। वह वहॉ से ग्रहण करना चाहिये। तब चक्र ठीक हुआ, ऐसा समझना चाहिये।

तब एक – एक ग्रह के गृह, उच्च, हद्दा, द्रेष्काण , नवमांशों के बलों के योग कर '**सर्वबल योग:**' छठे कोष्ठ में लिखना। उसके बाद योग बल का चतुर्थांश करके चतुर्भक्तबलम् सातवें कोष्ठ में

लिखना। यही बलबोधक संख्या होती है।

अथ द्वादशवर्गीय बलम् –

क्षेत्रं होरात्र्यब्धिपञ्चाङ्गसप्तवस्वङ्काशेशार्कभागाः सुधीभिः।

विज्ञातव्या लग्नसंस्थाः शुभानां वर्गाः श्रेष्ठाः पापवर्गास्त्वनिष्टाः॥

भाषार्थ – गृह, होरा, तृतीयांश, चतुर्थांश, पंचमांश, षष्ठांश, सप्तमांश , अष्टमांश, नवमांश, दशमांश, एकादशांश, द्वादशांश, इतने लग्न आदि भावों में तथा ग्रहों में भी समझना चाहिये। यहॉ शुभ ग्रहों के वर्ग शुभ होते हैं, पाप ग्रहों के वर्ग अनिष्ट बल देते हैं। यदि सकल वर्गेश शुभग्रह ही हों तो पूर्ण शुभ फल होगा। यदि सकल वर्गेश अशुभ ग्रह ही हों तो पूर्ण अशुभ फल। यदि आधे से अधिक शुभ वर्ग, तो शुभाधिक्य, आधे से अधिक पापग्रह वर्ग हो तो अशुभाधिक। बराबर होने से न तो शुभ, न तो अशुभ, सामान्य फल देते है।

नीचे के चक्र को अवलोकन कीजिये –

पंचवर्गीयबलबोधक चक्रम्

ग्रहाः	सूर्यः	चन्द्रः	भौमः	बुधः	गुरूः	शुक्रः	शनिः
गृहबलम्	१५।००	२२।३०	७।३०	१५।००	१५।००	३०।००	१५।००
उच्चबलम्	१९।१४।०	३।३७।४३	७।१८।२७	०।५९।५४	९।४५।२७	१३।११।११	१।०।३२
हद्दाबलम्	७।३०	११।१५	७।३०	११।१५	१५।००	३।४५	७।१५
द्रेष्काणबलम्	१०।००	२।३०	५।००	७।३०	५।००	५।००	२।३०
नवांशबलम्	३।४५	२।३०	२।३०	२।३०	२।३०	३।४५	३।४५
सर्वबलयोगः	५५।५५।१४	४२।२२।४३	२९।४८।२७	३७।१४।५४	४७।१५।२७	५५।४१।११	२९।३०।३२
चतुर्भक्तबलम्	१३।५८।४८	१०।३५।४१	७।२७।७	९।१८।४३	११।४८।५८	१३।५५।१८	७।२२।३८
बलभेदाः	बली	बली	मध्यबली	मध्यबली	बली	बली	मध्यबली

अथ होरेशतृतीयांशेशचतुर्थांशेश –

आजे रवीन्द्वोः सम इन्दुरव्योर्होरे गृहार्धप्रमिते विचिन्त्ये।

द्रेक्काणपाः स्वेषुनवर्क्षनाथास्तुर्यांशपाः स्वर्क्षजकेन्द्रनाथाः॥

भाषार्थ - विषम राशियों में पहली होरा सूर्य की, दूसरी चन्द्रमा की, सम राशियों में पहली चन्द्रमा की, दूसरी सूर्य की होरा होती है। राशि का आधा अर्थात् १५° अंश की होरा होती है। राशि के

त्रिभाग को द्रेष्काण कहते हैं। जैसे हर एक राशियों में तीस अंश, उसके तिहाई दस – दस अंश होते है, ये द्रेष्काण कहलाते हैं। उसमें १-१० अंश तक प्रथम, ११-१२ द्वितीय, २१-३० तक तृतीय द्रेष्काण समझना चाहिये। वहॉ जिस राशि में विचार करते हैं, उसी का स्वामी ग्रह प्रथम द्रेष्काणेश तथा उस राशि से पंचम राशि के स्वामी द्वितीय द्रेष्काण का स्वामी तथा उस राशि से नवम राशि के स्वामी तृतीय द्रेष्काणेश होता है।

उदाहरण – जैसे मेष का प्रथम द्रेष्काणेश मंगल, द्वितीय द्रेष्काणेश सूर्य, तृतीय द्रेष्काणेश धनुराशीश (गुरू)होते हैं। वृष राशि में प्रथम द्रेष्काणेश, वृषेश (शुक्र) , द्वितीय द्रेष्काण पति , कन्येश (बुध), तृतीय द्रेष्काणेश मकरेश (शनि) होते हैं। ऐसे ही और राशियों में समझना चाहिये।

चतुर्थांशेश विचार – जिस राशि में चतुर्थांश विचार करना हो, उसका स्वामी प्रथम चतुर्थांशेश, उसी राशि के चौथे राशि का स्वामी द्वितीय चतुर्थांशेश, उस राशि से सप्तम राशि के स्वामी तृतीय चतुर्थांशेश, उस राशि से दशमेश चतुर्थ चतुर्थांशेश होते हैं।

जैसे - मेष के प्रथम चतुर्थांशेश मंगल, द्वितीय चतुर्थांशेश चन्द्रमा, तृतीय चतुर्थांशेश शुक्र, चतुर्थ चतुर्थांशेश शनि, इस प्रकार सभी राशियों में समझना चाहिये -

१. ७।३०

२. १५।००

३. २२।३०

४. ३०। ००

अथ पंचमांशेश द्वादशांशेश –

ओजर्क्षे पंचमांशेशा कुजार्कीज्यज्ञभार्गवा: ।

समभे व्यत्ययाज्ज्ञेया द्वादशांशा: स्वभात्स्मृता: ।।

अन्वय: - ओजर्क्षे = विषमराशिसमुदाये, कुजार्कीज्यज्ञभार्गवा: = मंगलशनिगुरूबुधशुक्रा:, पंचमांशेशा: , भवन्ति = समभे = समराशिसमुदाये, व्यत्ययात् = विलोमात् अर्थात् शुक्रबुधगुरूशनिमंगला पंचमांशेशा भवन्ति।

भाषार्थ – विषम राशियों में प्रथम पंचमांशेश मंगल, द्वितीय पंचमांशेश शनि, तृतीय पंचमांशेश वृहस्पति, चतुर्थ पंचमांशेश बुध , पंचम पंचमांशेश शुक्र होते हैं। सम राशियों में उत्क्रम से जानना चाहिये, जैसे प्रथम पंचमांशेश शुक्र, द्वितीय पंचमांशेश बुध, तृतीय पंचमांशेश गुरू , चतुर्थ पंचमांशेश शनि, पंचम पंचमांशेश मंगल होते है और हर एक राशियों में उसी राशि से द्वादशांशा समझना चाहिये, जैसे मेष में मेष से, वृष में वृष से आदि इत्यादि।

चक्र प्रदर्शनम् –

समभे		**विषमभे**	
१- ६	शु.	१-६	मं
७-१२	बु.	७-१२	श.
१३-१८	वृ.	१३-१८	वृ.
१९- २४	श.	१९-२४	बु.
२५ - ३०	मं.	२५-३०	शु.

द्वादशांश -

१. ..... २।३०

२. ..... ५।००

३. ..... ७।३०

४. ..... १०।००

५. ..... १२।३०

६. ..... १५।००

७. ..... १७।३०

८. ..... २०।००

९. ..... २२।३०

१०. २५।००

११. २७।३०

१२. ३०।००

5.4 सारांश

ताजिक शास्त्र में वर्षकुण्डली विचार के अन्तर्गत पंचवर्गी बल निर्णय का उल्लेख किया गया है। पंचवर्गी बल से तात्पर्य इतना ही है कि कोई ग्रह अपने गृह में , अपने उच्च में , अपने हद्दा में , अपने द्रेष्काण में , अपने नवमांश में कितना – कितना अंश बलवान है। उसकी गणितीय रीति

से ज्ञान कराना ही इस इकाई का मुख्य प्रयोजन है। इस इकाई में वर्षकुण्डली द्वारा यह समझाने का प्रयास किया गया है कि पंचवर्गी बल क्या है ? उसे किस प्रकार जाना व समझा जा सकता है। वस्तुत: इस इकाई में ताजिकोक्त पंचवर्गी बल निर्णय को समझाया गया है, तथापि यदि पाठकगण विशेष रूप से ताजिक ग्रन्थ में उद्धृत विषयों को समझना चाहते हैं, तो उन्हें उसका मूल ग्रन्थ का भी अवलोकन करना चाहिये।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

त्रिंशत् – ३०

विंशति – २०

दृकाणे – द्रेष्काण में

अक्ष – ५

हद्दे – हद्दा में

पंचलवा: – ५ अंश

चतुर्थांश – चौथा अंश

पादोन – एक तिहाई

वेदोद्धृत – वेदों में कहा गया

सम ग्रह – समान ग्रह

निर्णयाय – निर्णय के लिये

विचारार्थ – विचार के लिये

एकादश – ११ संख्या

द्रेष्काणेश – द्रेष्काण का स्वामी

उर्ध्वलिखित – उपरिलिखित

द्वादशांशेश – द्वादशांश का स्वामी

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ग
3. क
4. ग

5. ग

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंचवर्गी बल क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. ताजिक मत में मित्र, शत्रु विचार का उल्लेख कीजिये।
3. पंचमांशेश एवं द्वादशांशेश को उदाहरण सहित लिखिये ।

इकाई – 6 दशा फल

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 दशा फल विवेचन

बोध प्रश्न

6.4 सारांश

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

6.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 की तृतीय खण्ड के षष्ठ (६) इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार दशा फल का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में पाठकगण ग्रहों के पंचवर्गी बल निर्णय का अध्ययन कर लिये है , यहॉ अब दशा फल की चर्चा करते है।

दशा फल से तात्पर्य प्रत्येक ग्रहों की दशा में जातक का उनके उपर पड़ने वाला ग्रहों के प्रभावों से है, ताजिककार ने दशा फल का विवेचन अपने ग्रन्थों में जो किया है, उसी का आप विस्तारपूर्वक ज्ञान प्राप्त करेगें।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

1. दशा फल क्या है, जान लेगें।
2. ग्रहों के दशा फल का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, इसका ज्ञान कर सकेगें।
3. ताजिकोक्त दशा फल का अध्ययन करेगें।
4. किस दशा में क्या फल होता है, का अध्ययन करेगें।
5. दशा फल से जुड़ी अन्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करेगें।

6.3 दशा फल विवेचन

दशाक्रम विचार: -

स्पष्टान्सलग्नान्खचरान्विधाय राशीन्विनाऽत्यल्पलवं तु पूर्वम्।
निवेश्य तस्मादधिकाधिकांशक्रमादयं स्यात्तु दशाक्रमोऽब्दे॥
ऊनं विशोध्याधिकत: क्रमेण शोध्यं विशुद्धांशकशेषकैक्यम्।
सर्वाधिकांशोन्मितमेव तत्म्यादनेन वर्षस्य मितिस्तु भाज्या॥
शुद्धांशकांस्तान्गुणयेदनेन लब्धध्रुवांकेन भवेद्दशाया:।
मानं दिनाद्यं खलु तद्ग्रहस्य फलान्यथासां निगदेत्तु शास्त्रात्॥
शुद्धांशसाम्ये बलिनो दशाद्या बलस्य साम्येऽल्पगतेस्तु पूर्वा।
साम्ये विलग्नस्य खगेन चिन्त्या बलादिका लग्नपतेविचिन्त्या॥

भाषार्थ – सर्वप्रथम लग्न और सूर्यादि सात ग्रहों को स्पष्ट बनाकर उनमें राशि को मिलाकर केवल अंशादिक रखना। अब उनमें जो सबसे छोटा अंश वाला होगा उसको पहली पंक्ति में

लिखिये, अब उससे भी जो आसन्नवर्ती अधिक अंश वाला है। उसके दूसरी पंक्ति में लिखिये, ऐसे ही इस से जो अधिक अंश वाला हो उसको लिखने पर ये हीनांशा कहलाती है।

इसके बाद पहली पात्यंशा पहली, तब दूसरी हीनांशा में पहली को घटाइये, तीसरी में दूसरी को घटाइये, चौथी हीनांशा में तीसरी हीनांशा को घटाइये, इसी क्रम से पात्यंशा सब ग्रहों की बन जायेगी। यहॉ सभी पात्यंशाओं का योग , सब से अधिक हीनांशा अर्थात् सबसे नीचे वाली आठवीं के समान ही होती है। तब एक वर्ष के जो दिनात्मक मान उसको उस सर्वाधिक हीनांशा से भाग देना जो लब्धि आवेगी, वह ध्रुवांक कहलाता है। अब प्रत्येक पात्यंशा को इस ध्रुवांक से गुणा करने पर गुणन फल उस – उस ग्रह के दिनादिक दशामान होंगे।

यदि उनमें से दो या तीन ग्रहों की पात्यंशा बराबर ही हों, तो उन ग्रहों में जो सबसे अधिक बली ग्रह होगा, उसक दशा पहली होगी, उसके बाद उससे न्यून बल ग्रहों की। यदि दो ग्रहों की पात्यंशा और बल भी बराबर हों, तो उन में जो अल्प गति वाला ग्रह होगा, उसकी पहली दशा होगी। यदि लग्न और कोई ग्रह समान पात्यंशा वाले हो जायें, तो लग्नेश की गति और बल के न्यूनाधिकतारम्य से पहले पीछे दशा होगा, ऐसा समझना चाहिये।

अथ लग्नदशा फलम् –

हेममुक्ताफलद्रव्यलाभमारोग्यमुत्तमम्।
कुरूते स्वामिसन्मानं दशा लग्नस्य शोभना।।
लाभं दृष्टेन वित्तस्य मानहीनस्य सेवनम्।
मनसो विकृतिं कुर्याद्दशा लग्नस्य मध्यमा।।
विदेशगमनं क्लेशो बुद्धिनाशं कदव्ययम्।
मानहानिं करोत्येव कष्टा लग्नदशा फलम्।।
क्रूरलग्नदशा मध्या सौख्यं स्वल्पं धनव्ययम्।
अंगपीडां त्वपुष्टिं च कुरूते मृत्युविग्रहम्।।

भाषार्थ – लग्न की शुभ दशा सोना, मोती , धनद्रव्यों का लाभ और आरोग्य, अपने मालिक से सन्मान को करती है। लग्न की मध्यम दशा धन को देखने पर लाभ मानहीन लोगों की सेवा मन के विकार को करती है। लग्न की अधमदशा परदेश यात्रा, क्लेश , बुद्धिनाश , अपव्यय, अपमान को करती है। क्रूर लग्न की दशा यदि मध्यबला हो तो अल्प सुख, धन का व्यय, शरीरपीड़ा, देह दौर्बल्य , मरण और विरोध को करती है ।

पूर्णबली सूर्यदशाफल –

दशा रवे: पूर्णबलस्य लाभं गजाश्वहेमाम्बररत्नपूर्णम् ।

मानोदयं भूमिपतेर्ददाति दशश्च देवद्विजपूजनादे: ।।

भाषार्थ - पूर्णबली सूर्य की दशा हाथी, घोड़ा, सोना, वस्त्र , रत्नों के पूर्ण लाभ और राजा से सम्मान और ब्राह्मण देवता की पूजा से यश प्रदान करती है ।

मध्यमबली सूर्य दशाफल –

दशा रर्वेमध्यबलस्य पूर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते ।

ग्रामाधिकारव्यवसायधैर्यै: कुलानुमानाच्च सुखादिलाभ: ।।

भाषार्थ – मध्यमबली रवि की दशा पूर्वोक्त पूर्णबली सूर्य का जो दशाफल उस के साधारण रूप में देती है, और ग्राम के शासन, पंचायती आदि कार्यों के अधिकार , व्यापार, धैर्य से कुल के अनुसार सुख , धन जनों का लाभ होता है ।

स्वल्पबली सूर्य दशाफल –

दशा रवेरल्पबलस्य पुंसां ददाति दु:खं स्वजनैर्विवादात् ।

मतिभ्रमं पित्तरूजं स्वतेजोविनाशनं धर्मणमष्यरिभ्य: ।।

भाषार्थ – स्वल्प बली सूर्य की दशा पुरूषों को अपने लोगों से दु:ख देती है । मतिभ्रम, पित्त का रोग, अपने पराक्रम का नाश , शत्रुओं से संघर्ष को कराती है ।

नष्टबलसूर्यस्य दशाफल -

दशा रवेर्नष्टबलस्य पुंसां नृपाद्रिपोर्वा भयमर्थनाशम् ।

स्त्रीपुत्रमित्रादिजनैर्विवादं करोति बुद्धिभ्रममामयं च ।।

नष्ट बल सूर्य की दशा लोगों को राजा से या शत्रु से भय , धन की हानि, स्त्री – पुत्र मित्र आदि से विरोध, बुद्धि वैषम्य और रोग देती है ।

अथ पूर्णबली चन्द्रमा का दशा फल –

इन्दोर्दशा पूर्णबलस्य दत्ते शुक्लाम्बरस्रङ्मणिमौक्तिकाद्यम् ।

स्त्रीसंगमं राज्यसुखं च भूमिलाभं यश: कान्तिबलाभिवृद्धिम् ।।

भाषार्थ – पूर्णबली चन्द्रमा की दशा में स्वच्छ वस्त्र , स्वच्छ माला मणि मोती आदि, स्त्रीसंग , राज्यसुख , भूमिलाभ, यश और कान्ति की वृद्धि होती है ।

मध्यमबली चन्द्रमा का दशा फल –

इन्दोर्दशा मध्यबलस्य सर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते ।

वाणिज्यमित्राम्बरगेहसौख्यं धर्मे मतिं कर्षणतोऽन्नलाभम् ।।

भाषार्थ – मध्यमबली चन्द्रमा की दशा पूर्णबली चन्द्रदशा के फल को मध्यम रूप से देती है और क्रय – विक्रय, मित्र, वस्त्र, घर इन सभी का सुख , धर्म में बुद्धि, खेती से अन्न लाभ ये सब फल देते है।

स्वल्पबली चन्द्रमा का दशा फल –

इन्दोर्दशा स्वल्पबलस्य दत्ते कफामयं कान्तिविनाशमाहुः ।
मित्रादिवैरं जननं कुमार्या धर्मार्थनाशं सुखमल्पमत्र ।।

भाषार्थ - अल्पबली चन्द्रमा की दश, कफरोग, कान्तिनाश, मित्रादि इष्ट जनों से भी विरोध , कन्या का जन्म , धर्म, धन का नाश तथा अल्प सुख को प्रदान करती है ।

नष्टबलस्य चन्द्रमा दशा फल –

इन्दोर्दशा नष्टबलस्य लोकापवादभीति धनधर्मनाशम् ।
शीतामयं स्त्रीसुतमित्रवैरं दौःस्थ्यं च दत्ते विरसान्नभुक्तिम् ।।

भाषार्थ – नष्टबल चन्द्रमा की दशा लोगों के अपवाद से भय, धननाश, धर्मनाश , ज्वर , कफ , खांसी आदि रोग , स्त्री , पुत्र , मित्र से विरोध , प्रतिकूल परिस्थिति, कदन्न का भोजन आदि फलों को प्रदान करती है ।

अथ पूर्णबली मंगल दशा फलम् -

दशापतिः पूर्णबलो महीजः सेनापतित्वं तनुते नराणाम् ।
जयं रणे विद्रुमहेमरत्नवस्त्रादिलाभं प्रियसाहसत्वम् ।।

भाषार्थ – यदि पूर्णबली मंगल दशापति हो तो मनुष्यों को सेनापति बनाता हैं , और संग्राम में विजय दिलाता है, इसके साथ – साथ मूंगा , सोना , रत्न वस्त्र आदि के लाभ और प्रिय कार्य के लिये साहस होता है ।

मध्यमबली मंगल दशा फलम् –

दशापतिर्मध्यबलो महीजः कुलानुमानेन धनं ददाति ।
राजाधिकारोऽप्यथ तत्परत्वं तेजस्विताकान्तिबलाभिवृद्धिम् ।।

भाषार्थ - यदि मध्यबली मंगल दशापति हों , तो कुल के अनुसार धन को देते हैं । राजा के यहॉ अधिकार हो और राजा से अभेद हृदय हो , उत्कर्ष प्रभाव होता है तथा चेहरे पर कान्ति और बल की वृद्धि होती है ।

बोध प्रश्न –

1. खचर शब्द का अर्थ है –
   क. आकाश ख. ग्रह ग. राशि घ. नक्षत्र
2. पूर्णबली सूर्य का दशा फल होता है –
   क. शुभ ख. अशुभ ग. मध्यम घ. कोई नहीं
3. पुंसां से तात्पर्य है –
   क. स्त्री ख. पुरूष ग. पित्त प्रकृति घ. क्लीबता
4. निम्नलिखित में स्वल्पबली चन्द्रमा का फल है –
   क. पित्त रोग ख. वात रोग ग. कफ रोग घ. अन्न लाभ
5. महीज: कहते है -
   क. मंगल ख. शुक्र ग. बुध घ. शनि

हीनबल मंगल का दशाफल –

दशापति: स्वल्पबलो महीजो ददाति पित्तोष्णरूजं शरीरे ।
रिपोर्भयं बन्धनमास्यतोऽसृकस्रवं च वैरं स्वजनैश्च शश्वत् ।।

भाषार्थ– स्वल्पबली मंगल दशापति हो तो शरीर में पित्तरोग, गर्मी के रोग को भी देता है । शत्रु से भय और बन्धन होता है । मुख से रक्तपात, अपने परिजनों से विरोध भी होता है ।

नष्टबल मंगल का दशाफल –

दशापतिर्नष्टबलो महीजो विवादमुग्रं जनयेद्रणं वा ।
चाराद्भयं रक्तरूजं ज्वरं च विपत्तिमन्यस्वहृतिं च खर्जूम् ।।

भाषार्थ – नष्टबली मंगल यदि दशापति हो, तो कठिन विवाद, लड़ाई – झगड़ा , चोर से भय , रक्त के विकार से रोग, ज्वर , विपत्ति , पराये के धन हरण करना और खाज खुजली हो ।

अथ पूर्णबली बुध दशा फल –

दशापति: पूर्णबलो बुधश्चेद्यशोऽभिवृद्धिं गणितात्सुशिल्पात् ।
तनोति सेवां सफलं नृपादेर्दौत्यं च वैदूष्यगणोदयं च ।।

भाषार्थ – यदि पूर्णबली बुध दशापति हो, तो गणित तथा उत्तम शिल्प विद्या से यश की वृद्धि होता है तथा राजा आदि की सेवा में सफल , राजदूत और विद्वान होता है ।

मध्यम बुध दशा फल –

दशापतिर्मध्यबलो बुधश्चेद् गुरो: सुहृदभ्यो लिपिकाव्यशिल्पै: ।

धनाप्तिदायो सुतमित्रबन्धुसमागमान्मध्यममेव सौख्यम् ।।

भाषार्थ - यदि मध्यबली बुध दशापति हो, तो गुरू से , मित्रों से, लेख कविता, कारीगरी से धन लाभ होता है और पुत्र , मित्र, बान्धवों के समागम से सामान्य सुख को प्राप्त करता है।

स्वल्प बली बुध दशा फल –

दशापतौ हीनबले बुधे स्यान्मानस्य नाश: स्वजनापवाद: ।

अकार्यकोपस्खलनाद्यनिष्टं धनव्ययं रोगभयं च विन्द्यात् ।।

भाषार्थ - यदि अल्पबलवान बुध दशापति हो , तो अपमान, अपने लोगों से कलंक , बिना कार्य के निरर्थक क्रोध उत्पन्न होता है, गिरने आदि का अनिष्ट होता है और धनहानि तथा रोगभय होता है, ऐसा दशाफल समझना चाहिये।

हीनबली बुध का दशाफल –

दशापतौ हीनबले बुधे स्यात् स्वबुद्धिदोषो वधबन्धभीति: ।

दूरे गतिर्वातकफामयार्त्तिनिखातवित्तस्य च नापि लाभ: ।।

भाषार्थ – यदि हीनबली बुध दशापति हो, तो अपने बुद्धि का दोष होता है, प्राण भय और बन्धन का भय, देशान्तर जाना पड़ता है। वातरोग तथा कफरोग की उत्पत्ति होती है। गुप्त धन का लाभ नहीं होता है।

अथ पूर्णबली गुरू दशा फल –

गुरार्दशा पूर्णबलस्य दत्ते मानोदयं राजसुहृदगुरूभ्य: ।

कीर्त्यर्थलाभोपचयं सुखानि राज्यं सुताप्तिं रिपुरोगनाशम् ।।

भाषार्थ – पूर्णबली वृहस्पति की दशा राजा, मित्र , गुरूओं से गौरव लाभ और यश, धन, लाभ की वृद्धि, सुख, राज्य, पुत्र लाभ, शत्रु नाश, रोग नाश करती है।

स्वल्प बली गुरू दशाफल –

दशा गुरोरल्पबलस्य दत्ते रोगं दरिद्रत्वमथारिभीतिम् ।

कर्णामयं धर्मधनप्रणाशं वैराग्यमर्थं च गुणं न किंचित् ।।

भाषार्थ – अल्पबली वृहस्पति की दशा रोग, दरिद्रता , शत्रुभय , कर्णरोग, धर्मनाश, वैराग्य तथा न तो अल्प धन को और न तो अल्प गुण को ही देती है।

हीनबली गुरू दशाफल –

गुरोर्दशा नष्टबलस्य पुंसां ददाति दु:खानि रूजं कफार्तिम् ।

कलत्रपुत्रस्वजनारिभीतिं धर्मार्थनाशं तनुपीडनं च ।।

भाषार्थ – नष्टबली वृहस्पति की दशा में मनुष्य को प्रत्येक प्रकार का दु:ख होता है, रोग, कफ का प्रकोप, स्त्री – पुत्र - मित्र – बन्धु तथा शत्रुओं से भय, धर्मनाश , धननाश, शारीरिक पीड़ा रूपी फल प्रदान करता है ।

अथ शुक्र दशाफलम् –

दशा भृगो: पूर्णबलस्य सौख्यं स्रग्गन्धहेमाम्बरकामिनीभ्य: ।

हयादिलाभ: सुतकीर्तितोषान्नैरूज्यगान्धर्वरति: पदाप्ति: ।।

भाषार्थ – पूर्णबली शुक्र की दशा में माला, सुवर्ण, वस्त्र, स्त्री इन सभी से सुख और घोड़े आदि सवारियों का लाभ, पुत्र , कीर्ति, सन्तोष केग लाभ, आरोग्य, गान विद्या में प्रेम, स्थान की प्राप्ति आदि फल होता है ।

मध्यमबली शुक्र दशा फलम् -

दशा भृगोर्मध्यबलस्य दत्ते वाणिज्यतोऽर्थागमनं कृषेश्च ।

मिष्ठान्नपानाम्बरभोगलाभं मित्रांश्च योषित्सुतसौख्यलाभम् ।।

भाषार्थ – मध्यबली शुक्र की दशा व्यापार और खेती से भी धन लाभ कराती है और मीठे अन्न पदार्थों के भोग सुख और अच्छे वस्त्रों के भोग – सुख को प्रदान करती है, साथ ही मित्रों से , स्त्री एवं पुत्रों का सुख भी प्रदान करती है ।

अल्पबली शुक्र दशाफल –

दशा भृगोरल्पबलस्य दत्ते मतिभ्रमं ज्ञानयशोऽर्थनाशम् ।

कदन्नभोज्यं व्यसनामयाति स्त्रीपक्षवैरं कलिरप्यरिभ्य: ।।

भाषार्थ – अल्प बली शुक्र की दशा बुद्धि के भ्रम, ज्ञान, यश और धनों का नाश करती है, इसके साथ – साथ कुत्सित अन्न का भोजन , झंझट, रोगों से पीड़ा, स्त्री पक्ष से विरोध, और शत्रु से कलह आदि समस्या उत्पन्न करती है ।

हीनबली शुक्र दशा फल –

दशा भृगोर्नष्टबलस्य दत्ते विदेशयानं स्वजनैर्विरोधम् ।

पुत्रार्थभार्याविपदो रूजश्च मतिभ्रमोऽपि व्रूसनं महच्च ।।

भाषार्थ – नष्टबली शुक्र की दशा, परदेश यात्रा, अपने बन्धु - बान्धवों से विरोध, पुत्र , धन, स्त्री विपत्ति, रोग तथा बुद्धि के भ्रम आदि स्थितियों को उत्पन्न करती है ।

अथ पूर्णबली शनि दशा फल –

दशा शने: पूर्णबलस्य दत्ते नवीनवेश्माम्बरभूमिसौख्यम् ।
आरामतोयाश्रयनिर्मितिश्च म्लेच्छातिसंगान्नृपतेर्धनाप्ति: ।।

भाषार्थ – पूर्णबली शनि की दशा नवीन मकान , नवीन वस्त्र, नई जमीन के सुख को प्रदान करती है और फुलवाड़ी , बागीचा , कुऑ , पोखर, तालाब आदि का निर्माण कराती है । इसके साथ ही म्लेच्छ जनों की अधिक संगति से तथा राजा से धन लाभ कराती है ।

मध्यबली शनि दशा फल –

दशा शनेर्मध्यबलस्रू दत्ते खरोष्ट्रपाखण्डजतो धनाप्तिम् ।
वृद्धांगनासंगमदुर्गरक्षाऽधिकारचिन्ताविरसान्भोग: ।।

भाषार्थ – मध्यमबली शनि की दशा में गधा, उँट, पाखण्डी लोगों से धनलाभ होता है , साथ ही वृद्ध स्त्री का संग, किला की रक्षा की चिन्ता , रसहीन कदन्न भोजन कराता है ।

हीन बली शनि दशा फल -

दशा शने: स्वल्पबलस्य पुंसां तनोति दु:खं रिपुतस्करेभ्य: ।
दारिद्र्यमात्मीयजनापवादं रोगं च शीतानिलकोपमुग्रम् ।।

भाषार्थ – मध्यमबली शनि की दशा में पुरूष को शत्रु , चौरों से दु:ख होता है , दरिद्रता आती है । स्वजनों से कलंक होता है, रोग और सरदी, वायु के उग्र प्रकोप भी उत्पन्न होते हैं ।

नष्टबली शनिदशाफलम् –

दशा शनेर्नष्टबलस् यपुंसामनेकधातुव्यसनानि दत्ते ।
स्त्रीपुत्रमित्रस्वजनैर्विरोधं रोगाभिवृद्धिं मरणेन तुल्यम् ।।

भाषार्थ – नष्टबली शनि की दशा लोगों को अनेक प्रकार के दु:ख को देती है या त्रिदोष के प्रकोप से क्लेश देती है । स्त्री , पुत्र मित्र परिजनों से विरोध, रोग की वृद्धि और मरण के तुल्य कष्ट को देती है ।

6.4 सारांश

ताजिक शास्त्र में वर्षकुण्डली विचार के अन्तर्गत दशा फल का उल्लेख किया गया है । दशा फल से तात्पर्य इतना ही है कि किस जातक के उपर ताजिकोक्त वार्षिक दशाफल का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है । दशाफल विचार के अन्तर्गत हम यह जानते है कि जातक का प्रचलित दशा का किस प्रकार प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है । इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप भली –

भॉति इन विषयों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। वस्तुत: इस इकाई में ताजिकोक्त दशा फल को समझाया गया है, तथापि यदि पाठकगण विशेष रूप से ताजिक ग्रन्थ में उद्धृत विषयों को समझना चाहते हैं, तो उन्हें उसका मूल ग्रन्थ का भी अवलोकन करना चाहिये।

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

सलग्न – लग्न के साथ

ऊन – घटाना

खगेन – ग्रह से

मितव्ययी – अनावश्यक धन खर्च करना

गजाश्व – हाथी – घोड़ा

स्वतेजोविनाशम् – अपने धर्म का नाश

नृप – राजा

इन्दोर्दशा – चन्द्रमा की दशा

कुमार्या – कन्या

प्रतिकूल – विपरीत स्थिति

पूर्णबली – पूरी तरह बलवान

अल्पबली – कमजोर

रिपु – शत्रु

खर्जूर – खाज – खुजली

सुत – पुत्र

मार्गगमन – मार्ग में जाना

6.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. ग
5. क

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दशा फल से क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. सूर्य, चन्द्र एवं मंगल के दशा फल विचार का वर्णन कीजिये।
3. गुरू , शुक्र एवं शनि के दशा फल विचार का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 7 दशाफल में विशेष

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 दशा फल में विशेष

बोध प्रश्न

7.4 सारांश

7.5 पारिभाषिक शब्दावली

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

7.8 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 की तृतीय खण्ड के सप्तम (७) इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार दशा फल में विशेष क्या होता है इसका उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में पाठकगण ग्रहों के दशा फल विचार का अध्ययन कर लिये है , यहॉ अब दशा फल में विशेष की चर्चा करते है।

दशा फल में विशेष से तात्पर्य प्रत्येक ग्रहों की दशा फल में विशेष रूप से क्या - होता है, का अध्ययन करना है ताजिककार ने दशा फल विशेष का विवेचन अपने ग्रन्थों में जो किया है, उसी का आप विस्तारपूर्वक ज्ञान प्राप्त करेगें।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

1. दशा फल क्या है, जान लेगें।
2. दशा फल में विशेष का क्या अभिप्राय है, समझ लेगें।
3. ताजिकोक्त दशा फल विशेष का अध्ययन करेगें।
4. किस दशा में क्या फल होता है, और उस फल में विशेष क्या है, का अध्ययन करेगें।
5. दशा फल में विशेष से जुड़ी अन्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करेगें।

7.3 दशा फल में विशेष

सूर्य दशा फल में विशेष –

लग्नाद्रवि: षट्त्रिदशायसंस्थो निन्द्योऽपि दत्ते शुभमर्धमेव।

मध्यत्वमून: शुभतां च मध्यो यातीत्थमत्यन्तशुभ: स्यात्॥

भाषार्थ – वर्षलग्न से यदि ३,६,१०,११ इन स्थानों में हों तो निन्द्य भी सूर्य शुभ ही फल को देते हैं। हीनबली मध्यफल, मध्यबली उत्तमफल, को देते हैं। यदि शुभ रवि हों अर्थात् पूर्ण बली हों, तो वह अत्यन्त शुभ फल को देते है।

चन्द्र दशा फल में विशेष –

षष्ठाष्टमान्त्येतरराशिसंस्थो निन्द्योऽपि दत्तेऽर्थसुखं दशायाम्।

मध्यत्वमून: शुभतां च मध्यो यातीत्थमिन्दु: सुशुभ: शुभ: स्यात्॥

भाषार्थ – यदि निन्दित हीन बली भी चन्द्रमा ६,८,१२ इन स्थानों से भिन्न स्थानों में हो, तो अपनी दशा में धन सुख को देते हैं। यदि उन स्थानों से भिन्न स्थानों में चन्द्रमा हों , तो हीनबली भी मध्यम,

मध्यम भी शुभ , शुभ भी विशेष शुभ होते हैं।

मंगल दशा फल में विशेष –

त्रिषडायगतो भौमो नष्टवीर्यः शुभार्धदः।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ।।

भाषार्थ – यदि नष्टबल मंगल ३,६,११ स्थानों में हो, तो आधा शुभफल को देते हैं, यदि हीन बली हो तो मध्यम फल, यदि मध्यबली हों तो शुभ , शुभ हो तो अत्यन्त शुभ होते हैं। ऐसा दशा फल समझना चाहिये।

बुध दशा फल में विशेष –

नष्टान्त्येतरर्क्षस्थो नष्टो शोऽर्धशुभप्रदः।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ।।

भाषार्थ - नष्टबली बुध छठें, आठवें तथा बारहवें स्थानों में स्थित न हो तो आधा शुभफल और हीन बली हो तो मध्यम फल देता है। यदि मध्यबली हो तो शुभ फल देता है तथा शुभ हो तो अत्यन्त शुभफल प्रदान करता है।

गुरू दशा फल में विशेष –

षडष्टरिःफेतरगो गुरूर्निन्द्योऽर्धसत्फलः।

मध्यो हीनः शुभा मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ।।

भाषार्थ – नष्टबली वृहस्पति यदि ६,८,१२ इन स्थानों से भिन्न स्थानों में हो तो आधा शुभफल ही देते हैं। यदि हीन बली भी हों तो मध्यम फल को देते हैं। यदि मध्यमबली हों तो शुभ फल देते हैं। यदि शुभ रहते है तो अत्यन्त शुभ फल को प्रदान करते है।

शुक्र दशा फल में विशेष –

षडष्टरिःफेतरगो भृगुनिन्द्योऽर्धसत्फलः।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ।।

भाषार्थ – ६,८,१२ स्थानों से अतिरिक्त स्थान में यदि शुक्र निन्दित भी हों तो आधा शुभ फल को देते हैं। यदि उक्त से भिन्न स्थान में हीन भी हों तो मध्य , मध्यम हों तो शुभ, शुभ हों तो अत्यन्त शुभ होता हैं।

अथ शनि दशा फल में विशेष –

त्रिषष्ठलाभोपगतो मन्दो निन्द्योऽर्धसत्फलः।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ।।

भाषार्थ – ३,६,११ स्थानों में स्थितशनि यदि निन्द्य अर्थात् हीन बली भी हों तो शुभ फल देते हैं। यदि हीन वीर्य भी हों तो मध्य, मध्य भी हों तो शुभ, शुभ भी हो तो अत्यन्त शुभफल होता है।

अथ लग्न दशा फल –

दशा तनोः स्वामिबलेन तुल्यं फलं ददातीत्यपरो विशेषः।

चरे शुभा मध्यफलाऽधमा च द्विमूर्तिमेऽस्माद्विपरीतमूह्यम्॥

भाषार्थ – लग्न की दशा अपने स्वमी के बलानुसार फल को देती है और यहॉ कुछ और विशेष है – चर लग्न में द्रेष्काण भेद से शुभ मध्य अनिष्ट फल होता है। द्वि:स्वभाव राशि के द्रेष्काण भेद से शुभ मध्य अनिष्टफल होता है। द्वि:स्वभाव राशि के द्रेष्काण भेद से विपरीत अर्थात् अशुभ, मध्य , शुभफल होते हैं। विशेष रूप से आप इसे निम्न चक्र द्वारा समझ सकते है –

राशि :	**चर**	**स्थिर**	**द्वि:स्वभाव**
प्रथमद्रेष्काण	शुभा	अनिष्टा	अधमा
द्वितीयद्रेष्काण	मध्या	शुभा	मध्यमा
तृतीयद्रेष्काण	अशुभा	समा	शुभा

लघुजातक के **''वर्गोत्तमा नवांशाश्चरादिषु प्रथममध्यान्त्याः॥** '' वचन के अनुसार चर राशि का प्रथम नवांश , स्थिर का मध्यनवांश , द्वि:स्वभाव का अन्त्यनवांश ये वर्गोत्तम हैं। ऐसे ही चर में प्रथम , स्थिर में द्वितीय , द्वि:स्वभाव में अन्तिम नवांश ये वर्गोत्तम द्रेष्काण हैं। इसलिये इन द्रेष्काणों की लग्नदशा अच्छी होती है।

अनिष्टमिष्टं च समं स्थिरर्क्षे क्रमाद्दकाणैः फलमुक्तमाद्यैः।

सत्स्वमियोगेक्षणतः शुभं स्रूात्पापेक्षज्ञणात्कष्टफलं च वाच्यम्॥

भाषार्थ – स्थिरराशि में द्रेष्काण भेद से अशुभ, शुभ समान फल होता है, इस प्रकार द्रेष्काणों के भेद से शुभाशुभ फल प्राचीनाचार्य कहे हैं। वहॉ शुभग्रह और स्वामी के योग दृष्टि से शुभ और पापग्रहों की दृष्टि और योग से अशुभ लग्नदशाफल समझना चाहिये।

बोध प्रश्न –

1. लग्नाद्रवि: से तात्पर्य है –

क. लग्न में रवि ख. लग्न से रवि ग. लग्न एवं रवि घ. लग्न या रवि

2. षट्त्रिदशाय स्थान है –

क. ३,६,८,११ ख. ३,६,१०,११ ग. ३,६,९,१२ घ. कोई नहीं

3. त्रिक् स्थान होता है –

क. ३,६,९ ख. ६,९,१२ ग. ६,८, १२ घ. २,७

4. नष्टबली बुध त्रिक् स्थानों में गया हो तो –

क. पूर्ण शुभ फल देता है ख. आधा शुभ फल देता है ग. अशुभ फल देता है घ. कोई नहीं

5. ददाति का अर्थ है –

क. खाता है ख. दाता है ग. देता है घ. जाता है

अन्तर्दशा साधन तथा उसके शुभ – अशुभ दशा फल –

दशामानं समामानं प्रकल्योक्तेन वर्त्मना ।
अन्तर्दशा: साधनीया: प्राक्पात्यांशवशेन तु ।।
आदावन्तर्दशा पाकपतेस्तत् क्रमतोऽपरा: ।
शुभेक्षणान्वयान्मैत्रयात्तफलं परिचिंतयेत् ।।
चन्द्रारजीवा: सौम्येज्यशुक्रा रविविधू तथा ।
मन्देज्यशुक्रा: सूर्येन्दुभौमा: सौम्येज्यसूर्यजा: ।।
जीवज्ञशुक्रा: सूर्यादे: शुभा अन्तर्दशा इमा: ।
अन्येषामशुभा ज्ञेया इति वामनभाषितम् ।।

भाषार्थ – जिस ग्रह का जो दशामान आया है उस को महादशा मान कर विंशोत्तरी अष्टोत्तरी में जैसे अन्तर्दशा साधन करते हैं , वैसे यहॉ भी अन्तर्दशा साधन करना चाहिये । जैसे – जैसे ग्रहों के दशामान योग में यदि पृथक् – 2 सभी ग्रहों के दशामान पाते हैं , तो एक किसी ग्रह के (जिस दशा में अन्तर्दशा साधन इष्ट है) दशामान में क्या ? इस प्रकार 'दशा दशाहता कार्या' इसी तरह पहले पात्यांशाओं के वश से अन्तर्दशा साधन करना चाहिये । उसमें पहली अन्तर्दशा दशेश की होगी । उसके बाद जिस क्रम से ग्रहों की दशा है , उसी क्रम से अन्तर्दशा का भी क्रम समझना चाहिये । वहॉ शुभ ग्रहों के योग दृष्टि से शुभ, पाप ग्रहों के योग, दृष्टि से अशुभ कहना चाहिये । अब किसकी दशा में साधारणत: किसकी अन्तर्दशा अच्छी होती है, उसकी जानकारी करिये -

रवि की दशा में चन्द्र , मंगल और गुरू इनकी अन्तर्दशा अच्छी होती है । चन्द्रमा की दशा में बुध, गुरू और शुक्र की अन्तर्दशा , मंगल की दशा में रवि और चन्द्रमा की , अन्तर्दशा , बुध की दशा में शनि , गुरू और शुक्र की अन्तर्दशा , शनि की दशा में वृहस्पति , बुध , शुक्र की अन्तर्दशा अच्छी होती है औरों की अन्तर्दशा अच्छी नहीं होती है । यह वामनाचार्य ने कहा है – वर्ष में किसका कैसा बल है , किस भाव का स्वामी, किस भाव में स्थित है किस से देखा जाता है । किस से संयुक्त है ,

किससे इत्थशाल आदि योग करता है , ये सभी विचार कर शुभ या अशुभ कहना चाहिये। न कि केवल साधारण रूप से रवि की दशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा अच्छी होगी। यदि चन्द्रमा नीच का और ६,८,१२ स्थानों में हो , ईसराफ आदि योग होता है, तो शुभ फल कभी नहीं होगा। ऐसे ही सभी को विचार करना चाहिये।

7.4 सारांश

ताजिक शास्त्र में वर्षकुण्डली विचार के अन्तर्गत दशा फल में विशेष का उल्लेख किया गया है। दशा फल में विशेष से तात्पर्य इतना ही है कि कोई ग्रह अपने गृह में , अपने उच्च में , अपने हद्दा में , अपने द्रेष्काण में , अपने नवमांश में कितना – कितना अंश बलवान है। उसकी गणितीय रीति से ज्ञान कराना ही इस इकाई का मुख्य प्रयोजन है। इस इकाई में वर्षकुण्डली द्वारा यह समझाने का प्रयास किया गया है कि पंचवर्गी बल क्या है ? उसे किस प्रकार जाना व समझा जा सकता है। वस्तुत: इस इकाई में ताजिकोक्त पंचवर्गी बल निर्णय को समझाया गया है, तथापि यदि पाठकगण विशेष रूप से ताजिक ग्रन्थ में उद्धृत विषयों को समझना चाहते हैं, तो उन्हें उसका मूल ग्रन्थ का भी अवलोकन करना चाहिये।

7.5 पारिभाषिक शब्दावली

सबल – बल सहित

उपार्जित – उत्पन्न करना

राज्यार्थ – राज्य के लिये

केन्द्र – १,४,७,१०

नीचोऽर्क : – सूर्य नीच राशि का हो

नृपाश्रय: – राजा का आश्रित

राज्यदायक – राज्य को देने वाला

इत्थशाल – षोडश योग में एक योग

पापकर्मत: – पाप कर्म से

शनिस्थाने – शनि स्थान में

त्रिकोण – ५,९

पुण्यागमं – पुण्य का आगम

खलाश्रयात् – पाप के आश्रय से

स्वस्थाने – अपने स्थान में

नृप – राजा

मार्गगमन – मार्ग में जाना

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ग
4. ख
5. ग

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी

7.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दशा फल में विशेष फल को स्पष्ट कीजिये।
2. अन्तर्दशा के शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।

खण्ड - 4

प्रश्न विचार

इकाई – 1 प्रश्न प्रयोजन

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 प्रश्न प्रयोजन

बोध प्रश्न

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के चतुर्थ खण्ड के प्रथम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार प्रश्न प्रयोजन के विचारों का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने दशा फल एवं दशाफल में विशेष का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहॉ इस इकाई में आप प्रश्न प्रयोजन का अध्ययन करेगें।

प्रश्न प्रयोजन से तात्पर्य जातक के जीवन सम्बन्धित प्रश्नों से है। इन प्रश्नों के आधार पर ज्योतिषी जातक के जीवन सम्बन्धित शुभाशुभ फल का विवेचन करता है।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से प्रश्न प्रयोजन की परम्परा से अवगत हो पायेंगे , तथा उससे सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. प्रश्न क्या है।
2. प्रश्न के प्रयोजन क्या है।
3. ताजिकोक्त प्रश्न प्रयोजन की परम्परा क्या है।
4. प्रश्न प्रयोजन की विधि क्या है।
5. प्रश्न प्रयोजन का क्या महत्व है।

1.3 प्रश्न प्रयोजन

ज्योतिष के कई ग्रन्थों के अध्ययन से यह बोध होता है कि पूर्वाचार्यों ने ग्रन्थ के आरम्भ में प्रश्न करने की परम्परा कही है, बाद में उसका समाधान कहा है। आरम्भिक प्रश्न प्रयोजन दैवज्ञों की विशेषता रही है। सामान्य रूप से हम भी विचार करे तो यह पाते हैं कि किसी भी प्रश्न के बिना उसका समाधान कैसे हो सकता है ? अत: प्रश्न प्रयोजन दैवज्ञों के मत में भी प्रासांगिक था, आज भी है। इसी क्रम में प्रस्तुत इकाई ताजिक ग्रन्थों के प्रश्न प्रयोजन से जुड़ा है। प्रश्न प्रयोजन को बताते हुये आचार्य का कथन है कि –

दैवज्ञस्य हि दैवेन सदसत्फलवाञ्छया।
अवश्यं गोचरे मर्त्य: सर्व: समुपनीयते ।।
अश्रौषीच्च पुरा विष्णार्ज्ञानार्थं समुपस्थित:।
वच लोकनाथोऽपि ब्रह्मा प्रश्नादिनिर्णयम् ।।

ज्योतिषीयों के मत से दैव (भावी प्रारब्ध कर्म) से प्रेरित सभी लोग अवश्य ही गोचर में शुभाशुभ फल की इच्छा से प्राप्त होते हैं। अर्थात् लोगों को गोचर और प्रश्नों से भी भावी शुभाशुभ फल होते हैं।

ऐसा माना जाता है कि प्राचीन काल में लोकस्वामी ब्रह्माजी भी प्रश्न निर्णय ज्ञान के हेतु श्री भगवान विष्णु के पास गये थे। यह दर्शाता है कि देव काल से ही प्रश्न प्रयोजन की परम्परा रही है।

आचार्य भास्कराचार्य भी सिद्धान्तशिरोमणि में प्रश्न प्रयोजन को बताते हुये कहते है कि –

प्रौढिं प्रौढसभासु नैति गणक: प्रश्नैर्विना प्रायशोऽ -
तस्ताम् वच्मि विचित्रभङ्ि.ग चतुरप्रीतिप्रदानाय यान्।
आकर्ण्यापि सुवर्णवर्णवदनं वैवर्ण्यमेति क्षणात्।
तस्याखर्वकुगर्वपर्वतशिर: प्रौढयाधिरूढोऽत्र य:॥
पाटया च बीजेन च कुट्टकेन वर्गप्रकृत्या च तथोत्तराणि।
गोलेन यन्त्रै: कथितानि तेषां बालावबोधे कतिचिच्च वच्मि॥

अर्थात् ज्योतिष की परिपक्व बुद्धि वाला गणक किसी भी ज्योतिषज्ञों की सभा में प्रश्न ज्ञान के बिना प्रौढ़ ज्योतिष विज्ञ नहीं कहला सकता। इसलिए आचार्य विचित्र – विचित्र प्रकार के प्रश्नों को चतुर बुद्धिवालों को प्रसन्नता प्रदान करने के लिए यहॉ कहेंगे। इन प्रश्नों को सुनकर जिहन ज्योतिषियों के चेहरे तथा शरीर की कांति सुवर्ण की आभा के समान है उनके चेहरे का रंग क्षणभर में क्षीण हो जाता है तथा उनका भी जो ज्योतिष के ज्ञान में अपंग समान तथा छोटे कद के होते हुए भी जिनका कुत्सित गर्व अर्थात् घमंड से पर्वत के समान सिर ऊॅचा करके प्रौढ़ ज्योतिषी के पद पर आरूढ़ है।

गोल व यन्त्रों , पाटी गणित, बीजगणित और कुट्टक तथा वर्ग प्रकृति से संबंधित कुछ प्रश्नों तथा उत्तरों को भी कहेंगे।

आपने देखा कि उपर्युक्त श्लोक में कैसे आचार्य ने प्रश्न प्रयोजन के महत्व को बतलाया है।

मुहूर्त्तचिन्तामणिकार रामदैवज्ञ भी प्रश्न प्रयोजन को इस प्रकार कहते है –

''आदौ सम्पूज्य रत्नादिभिरथ गणकं वेदयेत्स्वस्थचित्त।''

अर्थात् सर्वप्रथम गणक को पूष्प एवं रत्नादि (द्रव्यों) को अर्पित करके प्रसन्नचित्त होता हुआ देखकर ही प्रश्नकर्ता को उसके सामने अपने प्रश्न रखना चाहिये ।

उत्तमफलितज्ञज्योतिर्ज्ञलक्षण –

दशभेदं ग्रहगणितं जातकमवलोक्य निरवशेषमपि।
य: कथयति शुभमशुभं तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी॥

जो ज्योतिषी दस प्रकार के भेद वाले ग्रहगणित को और सभी जातक ग्रन्थ को देखकर त्रिप्रश्न सहित अध्ययन मनन कर शुभाशुभ फल को कहता है उसका फलादेश कभी असत्य नहीं होता है।

समरसार में कहा है कि – विनयावनताय दीयमाना। प्रभवेत्कल्पलतेव सत्फलाय ॥

अर्थात् ज्योतिष विद्या विनय नम्रता वाले को ही दी जाने पर सफल होती है। कुपात्रों को इस विद्या को नहीं देना चाहिये।

ज्योतिष शास्त्र में प्रश्न प्रयोजन की प्राचीनकाल से परम्परा रही है। इसके अन्तर्गत प्राचीन आचार्यों ने स्व – स्व ग्रन्थों में जातको के ज्ञानार्थ प्रश्न एवं उसके समाधान करने का वर्णन किया है।

ज्योतिष के प्रश्न विधान में यह भी कहा गया है कि किसी व्यक्ति को अपनी समस्या के समाधान अर्थात् समाधान रूपी प्रश्न लेकर गणक के पास विनम्रतापूर्वक यथासामर्थ्य उसको द्रव्यादि देकर उसके समक्ष अपना प्रश्न रखना चाहिये।

ताजिक शास्त्र के अन्तर्गत वर्ष में प्रश्न विचार –

सामान्यतया आमजनमानस को यह जिज्ञासा होती है कि उसके वर्तमान वर्ष में विवाह, सम्मान, राजयोग या अन्य शुभ फल अथवा अशुभ फल कितना होगा ? एतदर्थ मूल रूप से प्रश्न शाखा में बताई गई नियमावली का प्रयोग किया जाता है। उसमें भी विशेषतया लग्नेश व कार्येश का परस्पर दृष्टि सम्बन्ध, उन पर चन्द्रमा की विशेष दृष्टि, उनकी शुभ भाव स्थिति व बलवत्ता कार्यसिद्धि बताती है। अन्यथा होने पर कार्यहानि कहनी चाहिए।

उदाहरणार्थ –

किसी ने वर्ष में विशेषतया धन – लाभ पर विचार करने के लिए कहा है तो मुन्था की शुभता व वर्षेश की बलवत्ता एवं शुभस्थान स्थिति, सामान्यतया जन्मकुण्डली के नियमानुसार लग्न व भावों की शुद्धता का विचार करना चाहिये।

इसके बाद भी प्रधानतया लग्नेश व लाभेश तथा लग्नेश व धनेश की दृष्टि का, इत्थशालादि का विशेष विचार करके तथा इन पर चन्द्रयोग दृष्टि या इत्थशाल हो तो पूरे वर्ष में व इनकी दशा में विशेष लाभ कहना चाहिए। यही विधि अन्य प्रश्नों पर भी लागू होगी।

ज्योतिष के आचार्यों का मन्तव्य है कि जातक शास्त्र के सभी नियमों का प्रयोग प्रश्न शाखा में भी किया जा सकता है। यथा –

जन्मसमये यदुक्तं शुभाशुभं दिव्यदृग्भिराचार्यैः।
पृच्छाकालेऽपि नृणां तदेव भवतीति विज्ञेयम् ॥

अत: पहले जन्मपत्र के सम्बन्ध में फल विचार जो मूलभूत बातें कही गई हैं,उन्हें हृदयंगम करने के

पश्चात् प्रश्न शाखा का अभ्यास करना चाहिए। जातक शाखा में परिश्रम किए बिना ही जो व्यक्ति प्रश्न शास्त्र में प्रयत्न करता है , मानो वह छेद वाले बर्तन में पानी समेटना का व्यर्थ परिश्रम कर रहा हो।

प्रश्न पीठिका –

1. भावों के विचारणीय विषय एवं ग्रहों का कारकत्व पूर्ववत् मस्तिष्क में बिठाना चाहिए।
2. विचारणीय भाव, भावेशत्व व कारक का सिद्धान्त यहॉ भी लागू करना चाहिये।
3. ताजिक शास्त्र के षोडश योग, मुन्था फल तथा वर्षफल का सम्यक् ज्ञान रखना चाहिये।
4. केन्द्र , त्रिकोण में शुभ ग्रह व ३,६,११ में पापग्रह सदैव प्रश्न कर्ता की सफलता बताते हैं।
5. ८,१२ भावों में ग्रह न हो तो अच्छा है, अन्यथा, शुभ ग्रह भी मध्यम हो जाता है। सामान्यतया प्रश्न में अष्टम व द्वादश में सभी ग्रह रिष्ट होते हैं। सर्वे नेष्टा व्ययाष्टमगा: ऐसा कहा जाता है।
6. विचारणीय भाव को लग्नवत् मान कर उससे भी अनिष्ट व इष्ट भावों का विचार करना है।
7. जिस भाव से २,१२,४,१० व ७ वें में शुभ ग्रहों का योग हो उस भाव की वृद्धि होगी। यदि उक्त स्थानों में पापग्रह हों तो बाधा होगी। ऐसा समझना चाहिये।

वैदिक ज्योतिष की अनेक शाखाएं हैं जिनके द्वारा फलित का विचार किया जाता है। इसमें से एक शाखा **प्रश्न शास्त्र** नाम से है जिसका एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह किसी व्यक्ति विशेष के अचानक पूछे गए प्रश्न के आधार पर कि जाती है। प्रश्न शास्त्र एक ऐसी विद्या है जो समय के अभाव में भी एक महत्वपूर्ण फलित देने में समर्थ होती है। प्रश्न का उत्तर उस समय पूछे गए प्रश्न की कुण्डली बना कर दिया जाता है।

संस्कृत भाषा में समय को अहोरात्री के रूप में दर्शाया जाता है। अहो का अर्थ होता है दिन तथा रात्री का अर्थ होता है रात। इसी प्रकार अहो से हो तथा रात्रि से रा लेकर निर्माण होता है होरा का यही दो भागों में विभक्त होती है जिसे दिन कि होरा व रात की होरा कहा जाता है। यह दिन और रात को बताती है। यह और कुछ नहीं केवल रात और दिन की प्रक्रिया को अभियक्त करने की पद्धति होती है।

इस विषय के बारे में ऋषि पराशर जी ने विस्तार पूर्वक अपनी पुस्तक बृहतपराशरहोरा में बताया है। इसी के साथ ही कल्याण वर्मा, वराहमिहिर और कालिदास जी ने भी इस पर काफी कुछ लिखा है। कई पाश्चात्य विद्वानों जैसे क्लाडियस टॉलमी, विलियम लिली, एलन लिओ ने भी इसमें अपना योगदान दिया।

प्रश्न शास्त्र में फलित के लिए व्यक्ति द्वारा पूछे गए प्रश्न से ही फलित किया जाता है। परंतु कुछ ज्योतिषी इसके साथ जन्म कुण्डली और वर्ष कुण्डली को भी जोड़कर देखते हैं जिसके द्वारा वह कर्म

की अवधारणा को समझकर व्यक्ति का भविष्य कथन करते हैं।

प्रश्न कुण्डली एक बहुत ही प्रभावी फलित कथन है यदि इसका ध्यान पूर्वक विश्लेषण किया जाए तो यह काफी सटीक भविष्यवाणी करने में सहायक बनती है। एक ज्योतिषी को पराशरी सिद्धातों के साथ-साथ ताजिक ज्योतिष व योगों की भी पूर्ण जानकारी होनी चाहिए. उसे ग्रहों की स्थिति, डिग्री, लग्न इत्यादि का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

प्रश्न शास्त्र के अनुसार प्रश्न पूछने वाले व्यक्ति का स्थान एवं उसके द्वारा पूछे गए प्रश्न का समय उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना की जन्म कुण्डली में दिया आपका जन्म समय। व्यक्ति का जन्म उसके कर्मों द्वारा निर्धारित होता है इसलिए उसके जन्म समय का बहुत महत्व होता है। जब जातक अपना भविष्य जानने हेतु किसी ज्योतिषी के पास जाता है तो उस समय जो दैविय शक्ति और समय का संयोजन होता है वह बहुत महत्वपुर्ण होता है इसलिए जन्म कुण्डली और पश्न शास्त्र की अभिव्यक्ति में कुछ न कुछ अंतर अवश्य देखा जा सकता है।

प्रश्न कुण्डली निर्माण -

जो व्यक्ति प्रश्न पूछता है वह प्रश्नकर्ता या क्वेशचन क्वेरी कहा जाता है. जब एक व्यक्ति प्रश्न पूछता है तो उस विशेष पल में ग्रहों की स्थिति की गणना करके प्रश्न कुंडली का निर्माण होता है. हालांकि, प्रश्न शास्त्र में चौदह प्रकार के लक्ष्णों से इसे समझा जाता है जो इस प्रकार से हैं-:सटीक समय, देश अर्थात प्रश्नकर्ता का स्थान), जातक की सांस की प्रकृति, उसकी हालत या स्थिति, स्पर्श, आरूढा, दिशा, प्रश्नाक्षर, स्थिति(प्रश्नकर्ता की चाल - ढाल), चेष्ठा, भाव (मानसिक रवैया), अवलोकन, उसकी पोशाक और निमित्त (उस समय के शुभ, अशुभ संकेत चिह्न)।

प्रश्न कुण्डली में कारक तत्वों का निर्धारण

प्रश्न कुण्डली का लग्न प्रश्नकर्ता का प्रतिनिधित्व करता है। प्रश्न या समस्या को व्यक्ति विशेष का सवाल कहा जाता है, तो जातक के पूछे गए प्रश्न के भाव एवं उसके स्वामी द्वारा उसका निर्धारण किया जाता है।

प्रश्नकर्ता का प्रश्न रिश्ते, वित्तीय निवेश, कैरियर मुद्दों, पारिवारिक मामलों, संघर्ष और मुकदमों, वस्तुओं के खोने या लापता लोगों आदि के बारे में हो सकता है। उदाहरण के लिए यदि पति या पत्नी से संबंधित प्रश्न हो तो सप्तम भाव को देखा जाएगा तथा सप्तमेश उसका कारक होगा।

इसी प्रकार से बिजनेस या काम से संबंधित प्रश्न हो तो दशम भाव एवं दशमेश का अवलोकन किया जाता है. इस प्रकार प्रश्नकर्ता की समस्या में कारक ग्रह प्रभावित होता है. विशेष रूप से उस भाव में स्थित किसी भी अन्य ग्रहों का होना भी हो सकता है जो आगे वर्णनात्मक जानकारी प्रदान कर सकता है, लेकिन समस्या के लिए एक ही कारक लिया जाना चाहिए।

अधिकांशत: चंद्रमा अनेक स्थिति के लिए एक सामान्य कारक रहता है. इसके द्वारा प्रशनकर्ता की स्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है. क्योंकि घटना या सवाल से तुरंत स्पष्ट नहीं हो सकता है कि मामले की गहराई से संबंधित मुद्दों को कैसे समझें इसलिए, चंद्रमा की अनदेखी नहीं की जानी

चाहिए क्योंकि यह एक महत्वपूर्ण सामान्य कारक है।

प्रश्न कुंडली में चंद्रमा की स्थिति प्रश्न के विषय में काफी कुछ बताने में सहायक होती है परंतु हमेशा यह तथ्य कारगर सिद्ध नहीं हो पाता क्योंकि कुण्डली में कई अनेक बातें भी होती हैं जिन्हें जानना आवश्यक होता है तभी हम सही फलित कर पाने में सक्षम हो सकते हैं।

यस्माद् वा व्ययधनकामगा: शुभाख्या।

स्तदवृद्धि: खलखचरैस्तदीय बाधा॥

एवं दशमचतुर्थस्थितैस्तद्वत् कहकर भट्टोत्पल ने ४,१० भावों का भी विचार कहा है।

1. यो यो भाव: स्वामिदृष्टो युतो वा – फल विचार की नींव इसी सूत्र पर खड़ी है। जिस भाव को उसका भावेश या शुभ ग्रह देखें या वहॉ पर योग करें तथा अशुभ ग्रह न देखें, न योग करें तो उस भाव की सदैव वृद्धि होती है। अर्थात् उस भाव से सम्बन्धित प्रश्न में सफलता मिलती है। यदि उक्त प्रकार से पापयोग या दृष्टि हो तो वह भाव अपना प्रभाव खोता जाता है।
2. च्युतिर्विलग्नात् – च्युति अर्थात् भ्रंश, फिसलना, हटना, पतन, टपकना या स्थान परिवर्तन आदि का विचार प्रश्न लग्न से करना चाहिये। अत: स्थान परिवर्तन, आवास परिवर्तन, तबादला, उन्नति आदि विचार परिवर्तन, आरोग्य लाभ, धनलाभ, बचाव,चंचलता आदि का विचार प्रश्न लग्न से विशेषतया करना होता है।
3. हिबुकाच्च वृद्धि – लग्न से विचारणीय बातों के विपरीत सभी बातों का विचार प्राय: चतुर्थ से भी करना चाहिए। बढ़ोत्तरी, स्थिरता, वृद्धि , अंकुरण, आगे बढ़ना, सफलता, सुख , भोग , यश , कीर्ति , सम्पत्ति, आदि स्थिर बातों का विचार चतुर्थ से होगा।
4. मध्यात्प्रवासोऽस्तमयान्निवृत्ति - यात्रा व प्रवास होगा कि नहीं ? इसका विचार दशम भाव से तथा सप्तम भाव से यात्रा निवृत्ति का विचार करना योग्य हैं। दशम में यदि चर राशि हो तथा दशम भाव अन्यथा बली हो तो प्रवास या यात्रा होती है तथा सप्तम भाव पर शुभदृग्ययोग्य हो तो प्रवासी आने का उपक्रम करता है तथा चतुर्थ भाव बली हो तो समझिए कि प्रवासी गृह लौट ही गया है।
5. शीर्षोदयेसमभिवांछित कार्यसिद्धि – यदि प्रश्न लग्न में शीर्षोदय राशि हो तो कार्यसिद्धि का परिचायक है तथा इसके विपरीत पृष्ठोदय राशि प्रश्न लग्न में हो तो कार्य में हानि होती है। यहॉ यह स्पष्ट है कि द्विस्वभाव लग्न में कार्य सिद्धि परिश्रम व प्रयत्नपूर्वक होती है।

ताजिकनीलकण्ठी में प्रष्टु: परिचय –

ऋजुरयमनृजुर्वाऽयं प्रष्टा पूर्वं परीक्ष्य लग्नबलात्।

गणकेन फलं वाच्यं दैवं तच्चित्तगं स्फुरति ।।

लग्नस्थे शशिनि शनौ केन्द्रस्थे ज्ञे दिनेशरश्मिगते ।

भौमज्ञयोः समदृशा लग्नगचन्द्रेऽनृजुः प्रष्टा ।।

लग्ने शुभग्रहयुते सरलः क्रूरान्विते भवेत्कुटिलः ।

लग्नेऽस्ते सौम्यदृशा विधुगुरूदृष्ट्या च सरलोऽयम् ।

यदि गुरूबुधयोरेकः पश्यत्यस्ताधिपंच रिपुदृष्ट्या ।।

तत्कुटिलः प्रष्टा खल्वनयोरेकस्तयोः साधुः ।।

अर्थात् प्रश्नकर्ता सीधा या व्रक है, इस विषय को लग्नवश पहले परीक्षा करके तब शुभाशुभ फल को ज्योतिषी को कहना चाहिये । क्योंकि उस ज्योतिषी के हृदय में उक्त् विषय की स्फूर्ति होती है ।

यदि चन्द्रमा लग्न में शनि केन्द्र १,४,७,१० में हो, बुध अस्त हो और मंगल या बुध की समान दृष्टि से लग्न स्थित चन्द्रमा देखा जाय, तो पूछने वाला कुटिल समझना चाहिये ।

अथवा लग्न शुभग्रह से युत हो, तो प्रष्टा को सीधा समझना चाहिये । यदि लग्न पापग्रह से युत तो कुटिल कहना या लग्न तथा सप्तम स्थान बुध, चन्द्रमा, वृहस्पति से देखा जाय तो सरल कहना चाहिये या यदि बुध और वृहस्पति में एक कोई ग्रह शत्रु दृष्टि से सप्तमेश को देखे तो कुटिल प्रष्ट कहना चाहिये । यदि उन दोनों में कोई एक मित्रदृष्टि से सप्तमेश को देखे तो सज्जन प्रश्नकर्ता कहना चाहिये ।

आदिमं लग्नतो ज्ञानं चन्द्रस्थानाद्द्वितीयकम् ।

सूर्यस्थानात्तृतीयं स्यात्तुर्यं जीवगृहाद्भवेत् ।।

बुधभृग्वोर्बली यः स्यात्तद्गृहात्पंचमं पुनः ।।

अर्थात् यदि प्रश्नकर्ता अनेक प्रश्न एक ही साथ और एक ही काल में करें तो लग्न से प्रथम, चन्द्रमा से द्वितीय, सूर्य के स्थान से तृतीय, वृहस्पति के स्थान से चतुर्थ, तथा बुध – शुक्रों में जो विशेष बलवान् हो उसके राशि से पांचवें प्रश्न का विचार करना चाहिये ।

सम्यग्विचार्य लग्नं ब्रूयात्प्रश्नं सकृद्यथाशास्त्रम् ।

यस्त्वेकं ब्रूतेऽसौ तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी ।।

अर्थात् जो ज्योतिषी शास्त्र के अनुसार अच्छी तरह लग्न को विचार करके एक काल में एक ही प्रश्न को बताता है उसकी वाणी कभी असत्य नहीं होती है ।

बोध प्रश्न –

1. दैवज्ञस्य हि दैवेन सदसत्फलवाञ्छया ।

अवश्यं ..... मर्त्य: सर्व: समुपनीयते ॥

क. लग्ने ख. गोचरे ग. नक्षत्रे घ. वर्षप्रवेशे

2.प्रश्न शास्त्र भाग है –

क. सिद्धान्त स्कन्ध का ख. होरा स्कन्ध का

ग. संहिता स्कन्ध का घ. कोई नहीं

3. प्रश्न सिद्धान्त में मुख्याधार है –

क. राशि ख. ग्रह ग. लग्न घ. प्रश्न

4. गणित शास्त्र के कितने भेद है।

क. 3 ख. 10 ग. 15 घ. 20

5. प्रश्न पूछने वाला कहलाता है –

क. धाता ख. ध्येता ग. प्रश्नकर्ता घ. धर्ता

1.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ज्योतिष के कई ग्रन्थों के अध्ययन से यह बोध होता है कि पूर्वाचार्यों ने आरम्भ में प्रश्न करने की परम्परा कही है, बाद में उसका समाधान कहा है। आरम्भिक प्रश्न प्रयोजन दैवज्ञों की विशेषता रही है। सामान्य रूप से हम भी विचार करे तो यह पाते हैं कि किसी भी प्रश्न के बिना उसका समाधान कैसे हो सकता है ? अत: प्रश्न प्रयोजन दैवज्ञों के मत में भी प्रासांगिक था, आज भी है। इसी क्रम में प्रस्तुत इकाई ताजिक ग्रन्थों के प्रश्न प्रयोजन से जुड़ा है। ज्योतिषीयों के मत से दैव (भावी प्रारब्ध कर्म) से प्रेरित सभी लोग अवश्य ही गोचर में शुभाशुभ फल की इच्छा से प्राप्त होते हैं। अर्थात् लोगों को गोचर और प्रश्नों से भी भावी शुभाशुभ फल होते हैं। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन काल में लोकस्वामी ब्रह्माजी भी प्रश्न निर्णय ज्ञान के हेतु श्री भगवान विष्णु के पास गये थे।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

प्रासांगिक – प्रसंग के अनुसार

दैवज्ञ – ज्योतिषी

सत्फल – शुभफल

समुपस्थित – बराबर रूप से उपस्थित

लोकस्वामी – ब्रह्मा

शुभाशुभ – अच्छा और बुरा

सुवर्ण – सोना

वर्ण – रंग

प्रौढ़ – परिपक्व

कुत्सित – दुषित

आरूढ़ – बैठना

आदौ – सर्वप्रथम

कुट्टक – बीजगणित की गणितीय प्रक्रिया

इत्थशाल – षोडश योग में एक योग

प्रश्नकर्ता – प्रश्न पूछने वाला

प्रतिनिधित्व – व्यक्ति के स्थान पर उसका प्रतिनिधि

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. घ
4. ख
5. ग

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी – नीलकण्ठ दैवज्ञ
2. सिद्धान्तशिरोमणि – आचार्य भास्कर:
3. षट्पंचाशिका – आचार्य पृथुयशस

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रश्न विचार को स्पष्ट कीजिये।
2. ताजिक शास्त्र के अनुसार प्रश्न करने का विधान लिखिये।
3. सामान्यतया प्रश्न प्रयोजन के मूलभूत तत्वों को लिखिये।

इकाई – 2 प्रश्न विधि

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 प्रश्न विधि

बोध प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के चतुर्थ खण्ड के द्वितीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार '**प्रश्न विधि**' का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने प्रश्न प्रयोजन का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहॉ इस इकाई में आप प्रश्न विधि का अध्ययन करेगें।

ताजिक शास्त्र में प्रश्न करने की विधि क्या है ? उसका प्रयोजन क्या है ? उसका महत्व क्या है ? इन सभी विषयों से सम्बन्धित जानकारी आपको प्रस्तुत इकाई में होगी।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से प्रश्न विधि सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. प्रश्न विधि क्या है।
2. प्रश्न विधि का प्रयोजन क्या है।
3. प्रश्न विधि के फल क्या है।
4. प्रश्न विधि के महत्व क्या है।
5. ताजिकोक्त प्रश्न विधि का तात्पर्य क्या है।

2.3 प्रश्न विधि विचार

ज्योतिष शास्त्र के प्रश्न सम्बन्धित ग्रन्थ 'प्रश्नचिन्तामणि' में लिखा है कि –

राशिचक्रं समभ्यर्च्य फलै: पुष्पै: सरत्नकै: ।

प्रष्टा सुभूमौ दैवज्ञानेकं पृच्छेत्प्रयोजनम् ।।

अर्थात् प्रश्न कर्ता को चाहिये कि सर्वप्रथम प्रश्नकुण्डली को पवित्र स्थान में फल, द्रव्य, फूलों से पूजन करके एक काल में एक ही प्रयोजन को ज्योतिषी से पूछे।

दशभेदं ग्रहाणां च गणितं भावजं तथा।

विमृश्यैकञ्च कथयेन्नानेकं प्राह पद्मभू: ।।

ग्रहों के दस प्रकार के गणित और द्वादशभाव के गणित को विचार करके एक समय में एक ही प्रश्न को कहना चाहिये। अनेक प्रश्न को एक काल में नहीं कहना चाहिये ऐसा भगवान ब्रह्मा का कथन है।

दीप्ताद्यं दशभेदं च ग्रहाणां भांशजं फलम् ।

विचार्य प्रवदेद्यस्तु तस्योक्तं नान्यथः भवेत् ।।

ग्रहों के दीप्त आदि दस प्रकार जो राशि अंश से सिद्ध दशा हो उसके वश से विचार करके जो फल कहे, उसकी बात असत्य नहीं होती है।

प्रश्न विधि –

स्वच्छ मनोभावों के साथ, हाथ में भेंट पूजा लेकर, प्रसन्नचित्त से , सुशान्त स्थान पर, स्पष्ट शब्दों में अपने प्रश्न दैवज्ञ के सामने रखने चाहिये। कभी भी दक्षिणा के बीना दैवज्ञ से प्रश्न नहीं पूछना चाहिये। इससे फल नहीं मिलता। जिस ज्योतिषी पर श्रद्धा हो, उसी ज्योतिषी से प्रश्न पूछना चाहिये। बिना स्नान किये, शरीर में तेल लगाकर, पानी के गड्ढे के पास, अपवित्र स्थान में, दैवज्ञ को रास्ते में रोककर, जल्दबाजी में , कठु कठोर वचनों में, अशान्त मन से, काम – क्रोध की अवस्था में कभी प्रश्न नहीं करना चाहिये।

आरूढ़ द्वारा प्रश्न ज्ञान –

यद्यपि उदय लग्न से प्रश्न विचार का प्रचलन अधिक है, तथापि दक्षिण भारत में आरूढ़ द्वारा प्रश्न ज्ञान का भी प्रचलन है। आरूढ़ से तात्पर्य प्रश्नकर्ता द्वारा अधिष्ठित दिशा से है। प्रश्नकर्ता किस दिशा या विदिशा में बैठकर प्रश्न करता है, यह बात प्रश्न निर्णय में विशेष महत्व रखती है।

आर्या सप्तति में प्रश्नकर्ता द्वारा किए गए प्रश्न के प्रथम अक्षर से लग्न निर्णय की बात कही गई है। प्रश्न कर्ता जिस वर्ग से सम्बन्धित अक्षर का उच्चारण करे उसी वर्ग के अधिपति ग्रह की राशि को आरूढ़ लग्न समझ कर विचार करना चाहिए।

अवर्ग	सूर्य	तवर्ग	गुरू
कवर्ग	मंगल	पवर्ग	शनि
चवर्ग	शुक्र	यवर्ग	चन्द्रमा
टवर्ग	बुध	शादिवर्ग	चन्द्रमा

जिस ग्रह को दो राशियों का स्वामित्व प्राप्त हो, उस समय वर्ग का विषमाक्षर होने से विषम राशि व समाक्षर होने होने से सम राशि समझना चाहिये।

उत्तरकालामृत में एक अन्य दक्षिण भारतीय विधि लग्न निर्णय के सम्बन्ध में बताई गई है। तदनुसार लग्न को ज्ञात करके पूर्ववत् उससे प्रश्नकर्ता का शुभाशुभ फल कहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता से १ से १०८ तक किसी एक संख्या को पूछ लें। बताई गई संख्या को ९ से भाग दें जो लब्धि हो, वह मेषादि गतलग्न राशि है। शेष संख्या उस लग्न में व्यतीत नवांशों की होती है। इस लग्न में वर्तमान ग्रहों को स्थापित करके फल कहें। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति हमसे प्रश्न करता है तथा

पूछने पर ९९ संख्या बताता है। ९९/९ = ११ लब्धि , शेष ० है। अत: आरूढ़ लग्न या प्रश्न लग्न में ११ राशियॉ बीत गई है, अत: मीन लग्न माना जाएगा । शेष ० से समझा कि उस लग्न में प्रथम नवांश ही वर्तमान है।

प्रश्न विचार के आधार – तत्कालीन लग्न मात्र से प्रश्न का विचार करना सर्वांगीण नहीं है। केवल प्रश्न लग्न से प्रश्न फल कहने की पद्धति में भी चूक रहने की सम्भावना बनी रहती है। एतदर्थ कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

1. तात्कालीक लग्न 2. आरूढ़ लग्न 3. प्रश्न का स्थान 4. दैवज्ञ का नासिका स्वर 5. प्रश्नकर्ता द्वारा निज अंग स्पर्श अर्थात् पृच्छक की चेष्टा 6. तत्कालीन शकुन

सुन्दर स्थानों पर किया गया प्रश्न सफल एवं अनिष्ट स्थान एवं मुहूर्त्त खण्ड में बताए अशुभ कालों में किया गया प्रश्न निष्फल होता है। प्रश्न विषय से सम्बन्धित वस्तु का दर्शन होने से अभीष्ट लाभ होता है। शुभ सूचक शब्द शुभ फल कारक होते हैं।

उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति सन्तान विषयक प्रश्न करे और बालक का दर्शन या बालक की ध्वनि अथवा सुन्दर फल दिखे तो अभीष्ट लाभ होता है। इस प्रकार समझना चाहिए। शकुनादि विचार के लिए पाठकों को वृहत्संहिता, प्रश्नमार्ग एवं वृद्धयवन जातक का अध्ययन करना योग्य है।

ग्रहों की अवस्था –

दीप्तो दीनोऽथ मुदित: स्वस्थ: सुप्ता निपीडित: ।
मुषित: परिहीनश्च सुवीर्यश्चाधिवीर्यक: ।।
स्वोच्चे दीप्त: समाख्यातो नीचे दीन: प्रकीर्तित: ।
मुदितो मित्रगेहस्थ: स्वस्थश्च स्वगृहे स्थित: ।।
शत्रुगेहस्थित: सुप्तो जिताऽन्येन निपीडित: ।
नीचाभिमुखगो हीना मुषितोऽस्तङ्गतो ग्रह: ।।
सुवीर्य: कथित: प्राज्ञै: स्वोच्चाभिमुखसंस्थित: ।
अधिवीर्यो निगदित: सुरश्मि: शुभवर्गज: ।।

दीप्त, दीन, मुदित, स्वस्थ, सुप्त, निपीडित, मुषित, परिहीन, सुवीर्य, अधिवीर्य, ये दस प्रकार के ग्रह होते हैं। उसमें अपने उच्च में रहने से 'दीप्त' नीच में रहने से 'दीन' मित्रगृही मुदित अपने गृह में स्वस्थ शत्रु राशि में रहने से 'सुप्त' दूसरे ग्रहसे पराजित होने पर 'जित' नीचाभिमुख जाने से 'हीन' अस्तंगत ग्रह मुषित और उच्चाभिमुख रहने से सुवीर्य और उदित, शुभवर्ग स्थित ग्रह अधिवीर्य कहलाते है।

ग्रहों के अवस्था का फल –

दीप्ते सिद्धिश्च कार्याणां दीने दु:खसमागम: ।
स्वस्थे कीर्तिस्तथा लक्ष्मीरानन्दो मुदिते महान् ।।
सुप्ते रिपुभयं दु:खं धनहानिर्निपीडिते ।
सुपीते परिहीने च कार्यनाशोऽर्थसङ्गय: ।।
गजाश्वकनकावाप्ति: सुवीर्ये रत्नसम्पद: ।
अधिवीर्यं राज्यलब्धिर्ग्रहैमित्रार्थसङ्गम: ।।

दीप्त ग्रह रहने से कार्यों की सिद्धि होती है। दीन ग्रह रहने से दु:ख की प्राप्ति, स्वस्थ ग्रह रहने से कीर्ति यश, मुदितग्रह रहने से लक्ष्मी और आनन्द होता है। सुप्तग्रह में शत्रुभय, दु:ख, निपीडितग्रह में धनहानि, मुषितग्रह में तथा परिहीनग्रह में कार्यनाश, धननाश होता है। सुवीर्य ग्रह में हाथी घोड़ा सोना की प्राप्ति और रत्न सम्पत्ति भी होती है। अधिवीर्य ग्रह योगकारक होने से राज्य प्राप्ति, मित्र संगम और धनसंग्रह होता है।

बोध प्रश्न –

1. 'प्रष्टा' कहते है –
   क. प्रश्न को ख. प्रश्नकर्ता को ग. प्रश्नों के समूह को घ. प्रश्नोत्तर करने वालो को
2. पद्मभू: से तात्पर्य है –
   क. विष्णु ख. ब्रह्मा ग. रूद्र घ. कमल
3. दशभेदं ग्रहाणां च ..... भावजं तथा।
   विमृश्यैकञ्च कथयेन्नानेकं प्राह पद्मभू: ।।
   क. ज्योतिषम् ख. प्रश्नम् ग. गणितम् घ. नक्षत्रम्
4. आरूढ़ से तात्पर्य है –
   क. प्रश्नकर्ता के बैठने से ख. प्रश्नकर्ता द्वारा अधिष्ठित दिशा से
   ग. प्रश्नकर्ता द्वारा प्रश्न से घ. कोई नहीं
5. पवर्ग का स्वामी है –
   क. मंगल ख. शनि ग. चन्द्रमा घ. बुध
6. तवर्ग का स्वामी है –
   क. गुरू ख. शनि ग. चन्द्रमा घ. मंगल

रविग्रहस्वरूप -

पूर्व: सत्वं नृपस्तात: क्षत्रं ग्रीष्मोऽरूणश्चल: ।

मधुदृक् पैत्तिको धातु: शूर: सूक्ष्मकचो रवि: ।।

रवि पूर्व दिशा के स्वामी, सत्वगुणप्रधान, राजा, पितृग्रह, क्षत्रियजाति, गर्मस्वभाववाला, रक्त वर्ण, चंचल, मधुसमान नेत्र वाला, पित्तदोषप्रधान, पराक्रमी, महीन केश वाला होता है।

चन्द्रस्वरूप –

कफी वर्षामुदुर्माता पयो गौरश्च सात्विक: ।

जीवो वश्यश्चरो वृत्तो मारूतांशो विधु: सुदृक् ।।

चन्द्रमा कफात्मक , वर्षा ऋतु के स्वामी, कोमल और मातृ ग्रह, दूध का प्रिय, गौर वर्ण , सत्वगुणी, जीवों के स्वामी, वैश्यजाति का स्वामी, शीघ्रगति ग्रह, गोलाकार, वायु अंशवाला, सुन्दर ऑख वाला भी है, चन्द्रमा की कक्षा सबसे नीचे है इससे इनकी गति सबसे अधिक है, अत: यह सदैव शीघ्रगति कहलाता है। शनि की कक्षा सबसे उपर होने से उसकी गति मन्द है इसलिये उसे मन्दगति ग्रह कहते है।

कुज स्वरूप

ग्रीष्म: क्षत्रतमो रक्तो याम्य: सेनाग्रणीश्वर: ।

युवा धातुश्च पिंगाक्ष: क्रूर: पित्तं शिखी कुज: ।।

मंगल ग्रह ग्रीष्मऋतु का स्वामी, क्षत्रिय जाति, लालवर्ण, दक्षिणदिशा का स्वामी, सेनानायक, चंचल स्वभाव, समर्थ, गैरिकादि धातु का स्वामी, पीली ऑखें, क्रूरग्रह, पित्त प्रधान तथा शिखावान होता है

बुध स्वरूप –

शरदीशो हरिदीर्घ: षण्ढो मूलं कुमारक: ।

लिपिज्ञ उत्तरेशश्च शूद्र: सौम्यस्त्रिधातुक: ।।

बुध ग्रह, शरदऋतु का स्वामी, श्यामवर्ण, लम्बे कद का, नपुंसक, मूल कन्द का स्वामी, राजकुमार , लेख में पटु, उत्तर दिशा का स्वामी, शूद्र जाति का स्वामी, वात – पित – कफ के प्रकोप वाला है।

गुरू स्वरूप –

सत्वं वित्तो हिम: श्लेष्म: दीर्घो मन्त्री द्विजो नर: ।

मध्यैशानी कफी जीवो मधुपिंगलदृक तथा ।।

वृहस्पति सत्वगुणी, धनवान, शीतल स्वभाव वाला, कफात्मक, लम्बे कद का, इन्द्र का मन्त्री, ब्राह्मणवर्ण, पुरूषग्रह, मध्याह्न बली, ईशान कोण का स्वामी, कफी और मधुसमान दृष्टि वाला है।

शुक्र स्वरूप –

शुक्रः शान्तो द्विजो नारी वश्यो मन्त्री चरः सितः।

आग्नेयीदिक्ककफश्चाम्लः कुटिलासितमूर्धजः ।।

शान्तस्वभाव, ब्राह्मण, स्त्रीग्रह, वश्य, राक्षसों के मन्त्री , चंचंल , गौरवर्ण, अग्निकोण का स्वामी,कफात्मक, खट्टे रस का प्रिय और काला केश वाला होता है।

शनि स्वरूप –

कृष्णस्तमः कृशो वृद्धः षण्ढो मूलान्त्यजाऽलसः।

शिशिरः पवनः क्रूरः पश्चिमो वातुलः शनिः ।।

शनि काला, पापग्रह, दुर्बल, बूढा, नपुंसक, मूलों के स्वामी, म्लेच्छों के स्वामी, आलसी, शिशिर ऋतु का स्वामी, वायुतत्व, क्रूरप्रकृति वाला,पश्चिम दिशा का स्वामी और वातात्मक है।

राहु स्वरूप –

राहुर्धातुः शिखी मूलं शेषमन्यच्च मन्दवत्।

चिन्तनीयं विलग्ने ज्ञात केन्द्रगाद्वा बलाधिकात् ।।

राहु गैरिकादिधातु का स्वामी है, शिखावान, मूलकन्दों के स्वामी है और बांकी रंग रूप सब शनि के समान ही होता है। लग्न से बुध से या केन्द्रगत ग्रह से या सब से विशेष बल वाले ग्रह से वर्ण कहना चाहिये।

इस प्रकार प्रश्नविधि को समझकर वर्षकुण्डली के आधार पर ग्रहों के स्वरूप एवं उनकी अवस्था आदि के आधार पर फलोदशादि कर्म करने चाहिये।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि प्रश्न कर्ता को चाहिये कि सर्वप्रथम प्रश्नकुण्डली को पवित्र स्थान में फल, द्रव्य, फूलों से पूजन करके एक काल में एक ही प्रयोजन को ज्योतिषी से पूछना चाहिये। तत्कालीन लग्न मात्र से प्रश्न का विचार करना सर्वांगीण नहीं है। केवल प्रश्न लग्न से प्रश्न फल कहने की पद्धति में भी चूक रहने की सम्भावना बनी रहती है। एतदर्थ कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। 1.तात्कालीक लग्न 2. आरूढ़ लग्न 3. प्रश्न का स्थान 4. दैवज्ञ का नासिका स्वर 5. प्रश्नकर्ता द्वारा निज अंग स्पर्श अर्थात् पृच्छक की चेष्टा 6. तत्कालीन शकुन। सुन्दर स्थानों पर किया गया प्रश्न सफल एवं अनिष्ट स्थान एवं मुहूर्त्त खण्ड में बताए अशुभ कालों में किया गया प्रश्न निष्फल होता है। प्रश्न विषय से सम्बन्धित वस्तु का दर्शन होने से अभीष्ट लाभ होता है। शुभ सूचक शब्द शुभ फल कारक होते हैं।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

प्रश्नचिन्तामणि – प्रश्न शास्त्र की पुस्तक का नाम

पृच्छा – प्रश्नकर्ता

ग्रहाणां – ग्रहों में

प्रसन्नचित्त - खुशी मन

सुशान्त: – अच्छे प्रकार से शान्त

विषमाक्षर – विषम अक्षर

स्वामित्व – मालिकाना

अधिपति – स्वामी

तदनुसार – उसके अनुसार

उदाहरणार्थ – उदाहरण के लिये

द्विज – ब्राह्मण

कृश – दुबला पतला

शिशिर – षड् ऋतुओं में एक

पवन – हवा

नृप – राजा

मार्गगमन – मार्ग में जाना

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ग
4. ख
5. ख
6. क

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी – नीलकण्ठ दैवज्ञ

2. ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रश्न विधि क्या है। लिखिये।

2. ग्रहों के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

इकाई – 3 प्रश्न लग्न सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 प्रश्न लग्न सिद्धान्त

बोध प्रश्न

3.4 सारांश

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के चतुर्थ खण्ड के तृतीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार '**प्रश्नलग्न सिद्धान्त**' का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने प्रश्न प्रयोजन एवं प्रश्नविधि का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहॉ इस इकाई में आप प्रश्न लग्न सिद्धान्त का अध्ययन करेगें।

ताजिक शास्त्र में प्रश्न करने की विधि क्या है ? उसका प्रयोजन क्या है ? उसका महत्व क्या है ? इन सभी विषयों से सम्बन्धित जानकारी आपको प्रस्तुत इकाई में होगी।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से प्रश्न लग्न सिद्धान्त सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. प्रश्न लग्न सिद्धान्त क्या है।
2. प्रश्न लग्न सिद्धान्त का प्रयोजन क्या है।
3. प्रश्न लग्न सिद्धान्त के फल क्या है।
4. प्रश्न लग्न सिद्धान्त के महत्व क्या है।
5. प्रश्न लग्न सिद्धान्त में क्या – क्या है।

3.3 प्रश्न लग्न सिद्धान्त

ज्योतिष शास्त्र में प्रश्न लग्न का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। गोचर के अनुसार ग्रहों की स्थिति जानकर प्रश्न कुण्डली के आधार पर जातक शास्त्र के अन्तर्गत फलादेश करने की परम्परा ज्योतिषीयों को सुविदित है। प्रश्न कुण्डली में प्रश्न लग्न होता है। ताजिकनीलकण्ठी में भी षटपंचाशिका के आधार पर प्रश्न लग्न को समझाया गया है। षट्पंचाशिका एक प्रश्न ग्रन्थ है, जिसे ५६ श्लोक है तथा इसके रचयिता आचार्य पृथुयशस है। प्रश्न लग्न का विचार करते हुये उनका कथन है -

यो यो भाव: स्वामिदृष्टो युतो वा सौम्यैर्वा स्यात्तस्यतस्यास्ति वृद्धि।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानिर्निर्देष्टव्या पृच्छतो जन्मतो वा।

प्रश्न लग्न से या जन्म लग्न से जो जो भाव अपने स्वामी या शुभ ग्रहों से युत दृष्ट हों, उन – उन भावों की वृद्धि होती है और जिन – जिन भावों पर पाग्रह हों या उनकी दृष्टि पड़ती हो, उन – उन भावों की

हानि होती है। इस प्रकार सभी भावों का विचार करना चाहिये।

सौम्ये विलग्ने यदि वा स्ववर्गे शीर्षोदये सिद्धिमुपैति कार्यम्।

अतो विपर्यस्तमसिद्धिहेतुः कृच्छ्रेण संसिद्धिकरं विमिश्रम्॥

अर्थ – लग्न में शुभ ग्रह हो, या लग्न में शुभग्रह का वर्ग हो, या लग्न में शीर्षोदय राशि (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला,वृश्चिक एवं कुम्भ) हो तो कार्य सिद्धि होती है। इससे विपरीत रहने से कार्यहानि होती है यदि पाप शुभ दोनों से लग्न युक्त दृष्ट हो तो क्लेश से कार्यसिद्धि होती है।

प्रश्न लग्न से कार्यसिद्धि –

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम्।

लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम्॥

लग्नेशः कार्येशं विलोकयेल्लग्नपं तु कार्येशः।

शीतगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यसंसिद्धिः॥

यदि लग्नेश लग्न को देखता हो, कार्येश कार्यभाव को देखता हो या लग्नेश कार्य को, कार्येश लग्न को देखता हो अथवा लग्नेश कार्येश को, कार्येश लग्न को देखता हो वहॉ उनको चन्द्रमा देखे तो कार्यसिद्धि होती है।

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यो न लग्नपो लग्नम्।

लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगोऽत्र॥

एकः शुभो ग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नं वा।

पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्धो॥

लग्नपतौ दशमे सति शुभग्रहौ द्वौ त्रयोऽथवा लग्नम्।

पश्यन्ति यदि तदानीमाहुर्योगं त्रिभागोनम्॥

लग्नेशदर्शने सति पश्यन्तः पूर्णयोगकराः।

यदि शुभग्रह या लग्नेश लग्न को नहीं देखता हो तो कार्यसिद्धि का एक चतुर्थांश योग होता है। यदि शुभग्रह लग्नेश को देखे तो, कार्यसिद्धि का दो चतुर्थांश योग होता है। यदि एक शुभग्रह लग्नेश को वा लग्न को देखता हो तो तीन चरण योग होता है। यदि लग्नेश दो शुभग्रहों को देखता हो या तीन शुभग्रह लग्न को देखता हो तो तृतीयांशोन योग होता है। यदि लग्न को लग्नेश देखता हो या तीन शुभग्रह लग्न को वा लग्नेश को देखता हो तो, कार्यसिद्धियोग पूर्ण होता है।

क्रूरावेक्षणवर्ज्यश्चन्द्रः सौम्याश्च खेचरा लग्नम्।

चन्द्रमा पापग्रह की दृष्टि से बचा हो, शुभग्रह लग्न को देखता हो तो कार्यसिद्धि योग पूर्ण होता है।

क्रूराक्रान्तः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टश्च यो ग्रहः।

विरश्मितां प्रपन्नश्च सोऽनिष्टफलदायकः।।

जो कोई ग्रह पाप से पराजित, पापग्रह से युत, या दृष्ट हो, अस्तंगत हो वह ग्रह अनिष्टफल देते हैं।

लग्न से कार्यसिद्धिप्रश्न विचार –

अमुकं गदेति कार्यं कदा भविष्यत्यमुत्र पृच्छायाम्।

लग्नाधिपतिः कार्यं लग्नं कार्याधिपः पश्येत्।।

लग्नस्थः कार्येशः पश्यति चेल्लग्नपं तदैव भवेत्।

तत्कार्यं यद्यन्यस्थितं तदा सत्वरं न स्यात्।।

पश्यति तदा च लग्नं द्रक्ष्यति चन्द्रं विलग्नपं च यदा।

लग्ने कार्ये च यदा द्वयोश्च योगे तदा सिद्धिः।।

यदि कोई पूछता हो कि हमारा अमुक कार्य कब सिद्ध होगा ?इस प्रश्न के उत्तर में यह देखना चाहिये कि यदि लग्नेश कार्यभाव को देखें, कार्येश लग्न को देखे तो कार्यसिद्धि होती है अथवा कार्येश लग्न में होकर लग्नेश को देखता हो तो उसी क्षण में कार्यसिद्धि होती है या कार्येश लग्न से भिन्न स्थान में रहकर लग्नेश को देखता हो तो विलम्ब से कार्यसिद्धि होती है। यदि कार्येश लग्न को,चन्द्रमा को और लग्नेश को भी देखता हो तो कार्यसिद्धि होती है। यदि लग्न में या कार्यभाव में लग्नेश का संयोग होता हो अर्थात् लग्न ही में लग्नेश कार्येश दोनों हो , या कार्यभाव ही में लग्नेश कार्येश दोनों हों , तो कार्यसिद्धि होती है।

लग्न से कार्यहानि योग विचार -

यदि लग्नपं न पश्यति कार्याधीशो विलग्नमथ तस्य।

कार्यस्य हानिरूक्ता लग्नमृते किमपि नो वाच्यम्।।

यदि कार्येश लग्नेश को वा लग्न को नहीं देखता हो तो कार्य की सिद्धि नहीं होती है। यहॉ कार्यसिद्धिप्रश्न में लग्न के बिना कुछ भी नहीं कहना चाहिये।

लग्नप्रश्न निरूपणम् –

भूतं भवद्भिष्यन्मम किं कथयेति जातपृच्छायाम्।

लग्नपतेः शशिनो वा बलमन्वेष्यं बलाभावे।।

दृष्टवा नवांशकबलं शुभदृग्योगं च सर्वकालेषु।

प्रष्टुः शुभमादेश्यं विपरीतं व्यत्ययादेषा।।

लग्नेशो मूसरिफो यस्मादतीतमाख्येयम्।

येन युतस्तस्माद्भवदेष्यं यो योक्ष्यते तस्मात् ।
यदि लग्ने लग्नपतिः सौम्ययुतो वा विलोकितः सौम्यैः ।।
तत्प्रष्टुर्व्याकुलता शरीरदोषा विनश्यन्ति ।
पापो यदि लग्नपतिस्तदा कलिव्याधिधननाशः ।।
सौम्ये निर्वृतिबुद्धिर्द्रव्याप्तिः सौख्यमतुलं च ।।

यदि कोई त्रिकाल सम्बन्धित प्रश्न करता हो और यह जानना चाहता हो कि मेरे भूत, वर्तमान या भविष्य में क्या शुभाशुभ फल है, इसका विवेचन करने इस प्रकार करना चाहिये –

इस प्रश्न में लग्नेश और चन्द्रमा का बल साधन करना चाहिये। उन दोनों के निर्बल रहने से कार्य का नाश होगा ऐसा कहना चाहिये।

सर्वकाल में नवांश का बल और शुभग्रह की दृष्टि, शुभग्रह का योग प्रश्नकर्त्ता का शुभ करता है। पापग्रह के योग से, दृष्टि से विपरीत फल कहना चाहिये।

जिस ग्रह से लग्नेश मूसरिफ (इत्थशाल) करता हो, उससे भूत फल कहना चाहिये। जिस ग्रह से लग्नेश युत हो, उससे वर्तमान फल कहना चाहिये। जिस ग्रह से लग्नेश इत्थशाल करेगा उससे भावी फल कहना चाहिये। यदि लग्नेश लग्न में हो, शुभग्रह से युत हो, तो प्रश्नकर्ता की चिन्ता खत्म होती है। शरीर के सभी दोष समाप्त हो जाते है।

यदि लग्नेश पापग्रह हो तो कलह, रोग, धननाश होते हैं। यदि शुभग्रह लग्नेश हो तो स्थिर बुद्धि होता है, धनलाभ होता है तथा विशेष सुख भी प्राप्त होता है।

द्वितीय स्थान का प्रश्न विचार –

धनलाभस्य प्रश्ने लग्नेशेनेन्दुनाऽथ धननाथः ।
कुरूते यदीत्थशालं शुभयुतिदृष्ट्यां भवेल्लाभः ।।
क्रूरग्रहैर्धनस्थैर्दूरे लाभोऽन्यदष्यशुभम् ।
क्रूरमुथशिले धनेशे प्रष्टा म्रियतेऽथवा विलग्नेशे ।।
धनधनपतीथशाले मंदगतिर्यत्र भावानाम् ।
तनुधनसहजादीनां प्रष्टस्तद्द्वारतो लाभः ।।

धन लाभ के प्रश्न में धन भावेश यदि लग्नेश से या चन्द्रमा से इत्थशाल योग करता हो, शुभग्रह का योग होता हो या दृष्टि हो तो धन लाभ होता है। यदि पापग्रह धन भाव में हो तो दूरदेश जाने पर लाभ होता है और भी अनिष्टफल होता है। यदि धनेश को पापग्रह से इत्थशाल होता हो, तो प्रश्नकर्ता का मरण होता है या लग्नेश, धन भाव से या धनभावेश से इत्थशाल करता हो तो लग्नादि जिस भाव

में मन्दगति ग्रह हो उस भाव के द्वारा लाभ होता है।

बोध प्रश्न –

1.प्रश्न लग्न होता है –

क. प्रश्न कुण्डली में ख. नवमांश कुण्डली में ग. द्रेष्काण कुण्डली में घ. वर्ष कुण्डली में

2. षट्पंचाशिका के रचयिता है –

क. वराहमिहिर ख. पृथुयशस ग. गणेश दैवज्ञ घ. भास्कराचार्य

3. शीर्षोदय राशियॉ है –

क. ३,५,६,७ ख. ३,५,६,७,८,११ ग. १,४,७,८ घ. २,७,८,९

4. 'शशि' कहते है –

क. सूर्य को ख. चन्द्रमा को ग. मंल को घ. शनि को

5. सप्तम स्थान से किसका विचार किया जाता है –

क. शरीर का ख. पत्नी का ग. आयु का घ. कोई नहीं

तृतीय स्थान का विचार -

तृतीय भावेश यदि तृतीय भाव को देखता हो या यदि तृतीयेश तृतीयभाव को शुभग्रह सब देखें तो प्रश्नकर्ता के भाई नीरोग रहता है, सुखी रहता है। यदि पापग्रह देखें तो भाई रोगी हों ऐसा कहना चाहिये।

तृतीयेश षष्ठस्थान में हो, षष्ठेश से इत्थशल योग करता हो तो भाई को रोग होगा ऐसा कहना चाहिये।

षष्ठेश तीसरे स्थान में हो, तृतीयेश पापयुतदृष्ट हो तो भाई को रोग होगा ऐसा कहना चाहिये।

चतुर्थ स्थान का विचार –

लग्नेश और चन्द्रमा इन दोनों से जो चतुर्थ स्थान, उसमें उन दोनों में मुथशिल हो, या वहॉ कोई अच्छे ग्रह हों, तो प्रश्नकर्ता को कहीं यात्रा करने में भूमिलाभ होता है।

यदि किसान प्रश्न पूछे कि मुझे खेती से लाभ होगा या नहीं ? तो उस समय का जो लग्न हो उसको किसान समझना, लग्न से चतुर्थ राशि को खेत समझना, लग्न से सप्तम राशि को कृषि समझना चाहिये, एवं लग्न से दशम को वनस्पति सम्बन्धित समझना चाहिये।

पंचम स्थान का विचार –

यदि कोई स्त्री प्रश्न पूछे कि मुझे सन्तान होगा या नहीं ? ऐसी परिस्थिति में कुण्डली में लग्न और चन्द्रमा को पंचमेश से इत्थशाल योग होने से सम्भव कहना चाहिये। तथा पंचमेश लग्न में हो, या

लग्नेश, चन्द्रमा पंचम भाव में हों, तो शीघ्र सन्तान होगा ऐसा कहना चाहिये। नक्त योग होता हो, तो विलम्ब से सन्तान कहना चाहिये। यदि द्वि:स्वभाव भावराशि लग्न हो, शुभग्रह से युत दृष्ट हो, तो एक ही बार दो सन्तान का योग होता है। यदि लग्न से पंचमेश, या लग्नेश, पंचमेश, पुरूष में हो तो गर्भ में लड़का होगा ऐसा कहना चाहिये।

पंचम भाव का विचार इस प्रकार से भी करना चाहिये –

चन्द्रमा यदि विषम राशियों में हो और पुरूषग्रह (सूर्य, मंगल एवं वृहस्पति) में किसी से इत्थशाल करता हो तो गर्भ में लड़का कहना चाहिये या चन्द्रमा दिन में बारह बजे बाद सूर्य के पीछे हो तो कन्या होगी । यह योग कृष्णपक्ष में सार्द्ध सप्तमीतिथि से अमावस तक सम्भव है।

या प्रश्नलग्न की होरा के स्वामी सूर्य होकर यदि विषम राशि में हो, तो गर्भ में लड़का ही होगा या पंचम भाव , वा पंचमेश चन्द्रमा से युत दृष्ट हो या शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो धर्मात्मा सन्तान होती है, अथवा पंचमेश अपने उच्च में हों, उदित हों तो भी धर्मात्मा सन्तान होती है।

षष्ठ स्थान विचार –

कोई मनुष्य रोग से छुटकारा का प्रश्न पूछता हो तो इस प्रश्न में लग्न राशि से वैद्य या डाक्टर का विचार, सप्तम स्थान से व्याधि का विचार और दशम स्थान को रोगी समझना , अर्थात् दशमस्थान से रोगी का स्वभाव लक्षण समझना तथा चतुर्थ स्थान को औषधि समझ कर विचार करना चाहिये।

यहॉ ध्यातव्य हो कि लग्न में पापग्रह हो, या पापयुत दृष्ट लग्न हो तो वैद्यकी दवाई से गुण नहीं मालूम पड़ेगा अर्थात् लाभ नहीं होगा, बल्कि उसकी दवाई से बीमारी और बढ़ सकती है। सभी पापग्रह दशम स्थान में हो अपने कुपथ्य आदि दोष से दवाई का गुण नहीं होता वा सप्तम में पापग्रह हो तो एक रोग से दूसरा रोग हो जाता है। इस प्रकार चतुर्थ स्थान में भी पापग्रह होता है तो भी वैसे ही फल कहना चाहिये।

इसी प्रकार से सप्तम स्थान से स्त्री , अष्टम स्थान से आयु, नवम स्थान से भाग्य एवं धर्म, दशम स्थान से नौकरी , एकादश से लाभ एवं द्वादश से हानि का विचार करना चाहिये।

3.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ज्योतिष शास्त्र में प्रश्न लग्न का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। गोचर के अनुसार ग्रहों की स्थिति जानकर प्रश्न कुण्डली के आधार पर जातक शास्त्र के अन्तर्गत फलादेश करने की परम्परा ज्योतिषीयों को सुविदित है। प्रश्न कुण्डली में प्रश्न लग्न होता है। ताजिकनीलकण्ठी में भी षटपंचाशिका के आधार पर प्रश्न लग्न को समझाया गया है। षट्पंचाशिका एक प्रश्न ग्रन्थ है, जिसे ५६ श्लोक है तथा इसके रचयिता आचार्य पृथुयशस

है। प्रश्न लग्न से या जन्म लग्न से जो जो भाव अपने स्वामी या शुभ ग्रहों से युत दृष्ट हों, उन – उन भावों की वृद्धि होती है और जिन – जिन भावों पर पाग्रह हों या उनकी दृष्टि पड़ती हो, उन – उन भावों की हानि होती है। इस प्रकार सभी भावों का विचार करना चाहिये।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

जातक शास्त्र – फलित शास्त्र

षट्पंचाशिका – ज्योतिष का प्रश्न ग्रन्थ

स्वामिदृष्टः – स्वामि से देखा जाता हो

योः – जो

सौम्य – शुभ

शीर्षोदय – ३,५,६,७,८,११ राशियॉ

कार्यसिद्धि – कार्य की पूर्णता

लग्नपति – लग्न का स्वामी

चतुर्थांश – चौथा अंश

खेचरा – आकाश में चलने वाला

भावेश – भाव का स्वामी

पापग्रह – अशुभ ग्रह

धर्मात्मा – धर्म धारण करने वाला

स्वस्थाने – अपने स्थान में

पुरूषग्रह – सूर्य, मंगल एवं वृहस्पति

मार्गगमन – मार्ग में जाना

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ख
3. ख
4. ख
5. ख

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी – नीलकण्ठ दैवज्ञ

2. ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रश्न लग्न क्या है। लिखिये।

2. प्रश्न लग्न सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन कीजिये ।

3. उदाहरण सहित समझाइये कि प्रश्न कुण्डली का निर्माण कैसे होता है।

इकाई – 4 प्रश्नाक्षर सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 प्रश्नाक्षर सिद्धान्त

बोध प्रश्न

4.4 सारांश

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के चतुर्थ खण्ड के चतुर्थ इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार '**प्रश्नाक्षर सिद्धान्त**' का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने प्रश्नप्रयोजन, प्रश्नविधि, प्रश्नलग्नसिद्धान्त का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहॉ इस इकाई में आप प्रश्नाक्षर सिद्धान्त का अध्ययन करेगें।

ताजिक शास्त्र में प्रश्नाक्षर सिद्धान्त क्या है ? उसका प्रयोजन क्या है ? उसका महत्व क्या है ? इन सभी विषयों से सम्बन्धित जानकारी आपको प्रस्तुत इकाई में होगी।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से प्रश्नाक्षर सिद्धान्त सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. प्रश्नाक्षर सिद्धान्त क्या है।
2. प्रश्नाक्षर सिद्धान्त का प्रयोजन क्या है।
3. प्रश्नाक्षर सिद्धान्त के अन्तर्गत क्या – 2 आता है।
4. प्रश्नाक्षर का महत्व क्या है।

4.3 प्रश्नाक्षर सिद्धान्त

मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु प्राणी है, दृश्य एवं अदृश्य गतिविधियों को जानने के लिये मानव मस्तिष्क मे सदैव उत्सुकता रहती है, क्यों कैसे और क्या हो रहा है और क्या होगा आदि। उसकी यह जिज्ञासा प्रवृत्ति उसके सामने अनेक प्रश्नों को उत्पन्न करती है,जिस बात को जानने की उसकी प्रबल इच्छा रहती है, उसके बारे में पूरी जानकारी हो जाने पर उसे असीम आनन्द मिलता है। यद्यपि मन-मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाली इच्छा आकांक्षा उत्सुकता शंका या चिन्ता का ज्ञान और समाधान करना दु:साध्य है तथापि हमारे पूर्वजों महाऋषिओं और आचार्यों ने मानव की इस स्वाभाविक जिज्ञासा की पूर्ति के लिये प्रश्न-शास्त्र की रचना की। ईशा की पांचवीं शताब्दी से लेकर आज तक इस विषय में सैकड़ों मौलिक ग्रंथों की रचना हुयी,भाषा एवं अपनी शास्त्रीय जटिलता के कारण यद्यपि ये ग्रन्थ आज जनसाधारण के लिये रहस्य बने हुये है,तथापि इनमे मनुष्य की जिज्ञासा और ज्ञान पिपासा को शान्त करने के लिये पर्याप्त सामग्री विद्यमान है।

प्रश्न शास्त्र

प्रश्न शास्त्र ज्योतिष विद्या का एक महत्वपूर्ण अंग है,यह तत्काल फल बतलाने वाला शास्त्र है,इसमे हम तत्कालिक लग्न एवं ग्रह स्थिति के आधार पर व्यक्ति के मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले प्रश्न और उनके शुभाशुभ फ़ल का विचार करते है। केरल, रमल और स्वरशास्त्र इसके अंग है,इन शाखाओं में प्रश्नाक्षर अंक एवं स्वर के आधार पर प्रश्न के शुभ या अशुभ फ़ल का निश्चय किया जाता है। इस शास्त्र में मुख्यत: तीन सिद्धान्तों का प्रचलन है:-

१.प्रश्नलग्नसिद्धान्त

२.प्रश्नाक्षरसिद्धान्त

३.स्वरसिद्धान्त

इसके अलावा अंक तथा चर्चा चेष्टा या हाव भाव के द्वारा भी मनोगत भावों का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है,उपर्युक्त सभी सिद्धान्तों के अन्दर लग्न सिद्धान्त ग्रह स्थिति का कथन करता है,और ग्रह सिद्धान्त दृश्य भी है, उसकी गति भी निश्चित है, इसलिये ही ग्रह सिद्धान्त सबसे लोकप्रिय सिद्धान्त माना जाता है।

प्रश्नाक्षर विचार –

आधानेऽथ प्राप्तौ गमनागमने पराजये विजये ।
रिपुनाशे वा काले पृच्छायां निश्चितं ब्रूयात् ।।
अकचटतपयशवर्गा रविकुजसितसौम्यजीवसौराणाम् ।
चन्द्रस्य च निर्दिष्टास्तै: स्यु: प्रथमोद्भवेर्वर्णै: ।।
ज्ञात्वा तस्माल्लग्नं विज्ञाय शुभाशुभं च वदेत् ।
वर्गादिमध्यमान्त्यैर्वर्णै: प्रश्नोद्भवैर्विषमराशि: ।।
रात्रौ लग्नं प्रवदेत्पृच्छायुग्मं कुजज्ञजीवानाम् ।
सितरविजयोश्च नैवं रविशशिनोरकराशित्वात् ।।
तस्मात्प्राग्वत्प्रवदेत्पृच्छासमये शुभाशुभं सर्वम् ।
कालस्य च विज्ञानादेतच्चिन्त्यं बहुप्रश्ने ।।

गर्भ प्रश्न में धन लाभ के प्रश्न में, या आने जाने के प्रश्न में, तथा जय पराजय के प्रश्न में या शत्रुनाश के प्रश्न में, या किसी भी प्रश्न में उक्त रीति से काल ज्ञान करके कहना चाहिये –

अब यहॉ रवि का अवर्ग, मंगल का कवर्ग, शुक्र का चवर्ग, बुध का टवर्ग और वृहस्पति का तवर्ग, शनि का पवर्ग, चन्द्रमा का यवर्ग और शवर्ग कथित है । यहॉ प्रश्न करने वाले के मुख से जो प्रथम

शब्द निकले, उस का जो पहला अक्षर हो वह जिसके वर्ग में पड़े , उस ग्रह का राशि लग्न समझकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये अर्थात् शुभ ग्रह के लग्न से शुभ, पापग्रह के लग्न से अशुभ कहना चाहिये।

और यदि दैवात् प्रश्न वाक्य का प्रथम वर्ण वर्ग के आदि या मध्य या अन्त्य का हो तो विषम राशि और रात्रि लग्न समझना चाहिये अर्थात् सूर्य – चन्द्रमा को छोड़कर प्रत्येक ग्रह के दो – दो राशि हैं, उस में एक सम दूसरा विषम, यथा मंगल का मेष (विषम) तो वृश्चिक (सम), तथा बुध का मिथुन (विषम) तो कन्या (सम) , शुक्र का वृष (सम), तो तुला (विषम) है, वही प्रश्न से समझना चाहिये। रवि – चन्द्रमा का एक – एक राशि है, इसलिये इन दोनों के वर्ग से एक ही प्रश्न कहना चाहिये और मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र , शनि इन ग्रहों के वर्ग होने से दो – दो प्रश्न कहना चाहिये।

प्रश्न विचार

जिस समय कोई प्रश्न पूंछने आये,उस समय का इष्टकाल बनाकर लगन स्पष्ट भाव स्पष्ट और नवमांश के आधार पर प्रश्न कुन्डली भावचलित चक्र और नमांश कुन्डली बना लेनी चाहिये,बहुधा देखा गया है कि ज्योतिषी आलस्यवश पंचाग से लगन के आधार पर कुन्डली बनाकर फ़लादेश करने लगते है,किन्तु फ़ल का निश्चय करने की क्रिया में लगन आदि भाव एवं नवमांश भी निर्णायक होते हैं,अत: इनकी उपेक्षा करने से निर्णय एक पक्षीय हो जाता है,और प्रश्न का फ़ल या परिणाम यथार्थ रूप से प्रकट नही घटता अस्तु। द्वादश भाव प्रश्न कुन्डली में लगन से प्रारम्भ करके १२ भावों की गणना की जाती है, यह १२ भाव इस प्रकार है:-

१.तनु या प्रथम भाव

इस भाव से शरीर शरीर का रूप शरीर में चिन्ह शरीर के सुख दुख शरीर का स्वभाव शरीर के अन्दर विवेक शरीर में मस्तिष्क की क्रियाशीलता आदि का विचार किया जाता है,इस भाव में मिथुन कन्या तुला और कुम्भ राशियां बलवान होती है,और इस भाव का परिणाम बताने वाला सूर्य ही कारक होता है।

२. धन या द्वितीय भाव

इस भाव से जो शक्ति शरीर के अन्दर होती है,या शरीर को बाहर की दुनिया से मिलती है,और जिस शक्ति से शरीर को इस संसार में निर्वाह करने की क्षमता मिलती है उसका भाव मिलता है,परिवार की शक्ति,आंखों की शक्ति नाक की शक्ति वाणी की शक्ति वाणी में आवाज की शक्ति शरीर में रूप की शक्ति गाने की शक्ति हावभाव प्रकट करने की शक्ति प्रेम करने की शक्ति संसार द्वारा प्रदान किये गये भोगों की शक्ति,चल सम्पत्ति की शक्ति जिसके अन्दर सोना चांदी रुपया हीरे जवाहारात खरीदने और

बेचने की कला आदि की शक्ति को जानने के कारक मिलते है,इस भाव का मालिक गुरु होता है,और गुरु जो इन सबके बारे में ज्ञान देने का कारक है,को देखकर इस भाव की शक्तियों का महत्व जाना जाता है।

३.सहज या तीसरा भाव

शरीर को इस संसार में प्रकट करने के लिये और संसार में अपना पराक्रम प्रकट करने का प्रभाव इस भाव से देखा जाता है,भाई बहिनों का साथ,जो छोटे है और और शरीर की आज्ञानुसार काम करते है,शरीर की ताकत का प्रभाव जिसके द्वारा संसार के सामने समस्याओं से लडने की ताकत होती है,आभूषणों का पहिनना और अपने बारे में शरीर के द्वारा अपनी सभ्यता कला और संस्कृति को प्रकट करना,सेवा कार्य करने की हिम्मत शरीर में होना,हिम्मत और धैर्य की मात्रा का होना,किसी भी प्रकार की आय को प्राप्त करने की शिक्षा का होना,पढाई के द्वारा ली जाने वाली डिग्री डिप्लोमा,कार्य और पराक्रम को प्रकट करने के लिये कम दूरी की यात्रायें करना,शरीर के अन्दर बल नही होने से और दिमाग में साधनों को प्राप्त करने की चालाकी और छल का होना,अपने द्वारा साहस को दिखाना,मीडिया और लेखन द्वारा अपनी योग्यता को प्रकट करना,तरह तरह से शरीर को बनाकर उसके द्वारा लोगों का मनोरंजन करना,शरीर के अवयवों का कमाल दिखाना,आदि इसी भाव के अन्दर आजाते है।

बोध प्रश्न –

1. प्रश्नाक्षर से तात्पर्य है –

   क. प्रश्न अक्षर ख. प्रश्न का आदि अक्षर ग. प्रश्न घ. कोई नहीं

2. प्रश्न शास्त्र किसका अंग है –

   क. सिद्धान्त ज्योतिष का ख. जातक स्कन्ध का ग. संहिता स्कन्ध का घ. तन्त्र

3. प्रश्न शास्त्र के मुख्य कितने अंग है –

   क. 2 ख. 3 ग. 5 घ. 8

4. पवर्ग का स्वामी है –

   क. मंगल ख. शनि ग. बुध घ. गुरू

5. द्वितीय स्थान से विचार किया जाता है –

   क. धन का ख. सन्तान का ग. विवाह का घ. नौकरी का

४.सुहृद या चौथा भाव

इस शरीर के प्रकट करने का स्थान चौथा भाव कहलाता है,पिता की वीर्य और माता की कोख,जिसके द्वारा इस शरीर की प्राप्ति सम्भव हुयी,पैदा होने के बाद इस शरीर को धारण करने का स्थान यानी माता की गोद,और पालने वाली माता या दाई की गोद,शरीर के बडा होने के बाद शरीर की गर्मी,सर्दी और बरसात से रक्षा करने का स्थान यानी रहने वाला मकान,मकान को धारण करने वाला गांव और गांव को धारण करने वाला शहर और शहर को धारण करने वाला प्रांत और प्रांत को धारण करने वाला देश,उस देश की सीमा,विस्तार,और देश की राजनीतिक हालत,शरीर को पालने के लिये प्रयोग किये जाने वाले अन्न,और उस अन्न को पैदा करने का स्थान,शरीर की पालना में अन्य प्रयोग होने वाले कारक जैसे फ़ल सब्जियां दूध दही चावल पानी और रस आदि,शरीर में अच्छे पानी की मात्रा होने से शरीर का निरोगी होना और निरोगी होने के बाद मिलने वाले सुख,शरीर में गंदे पानी का होना और शरीर के बीमार रहने के बाद मिलने वाले दुख,शरीर की पानी की मात्रा के अनुसार शरीर के ह्रदय की हालत,सांस के अन्दर जाने वाली नमी की मात्रा,और शरीर से बाहर छोडी जाने वाली सांस के साथ जाने वाली पानी की मात्रा तथा उस सांस को छानकर वापस शरीर के अन्दर जाने वाली हवा की मात्रा,शरीर के अन्दर पानी की साफ़ मात्रा के अनुसार शरीर में मिलने वाली दया,जो अन्य किसी को भी अपने अनुसार सुखी देखने की कल्पना,दूसरों को अपने द्वारा दिये जाने वाली सहायतायें,शरीर मे गंदे पानी के प्रवाह से मस्तिष्क में प्रकत होने वाले छल कपट,दोस्तों और बडे भाई के द्वारा किये जाने वाले कर्जा दुश्मनी और बीमारी के प्रभाव,माता की पहिचान पिता की वैवाहिक स्थिति,छोटे भाई बहिनो का धन, शिक्षा के प्रति किये जाने वाले खर्चे, बीमारियों का लेखा जोखा,जीवन साथी के पिता का हाल,जीवन साथी के द्वारा किये जाने वाले अपने कैरियर के लिये प्रयास,आदि का विचार इस भाव से किया जाता है,इस भाव में कर्क मकर और मीन राशियां बलवान होते है,बुध और चन्द्रमा इस भाव का संदेशा देते है।

५.पुत्र या पंचम भाव

विद्या बुद्धि मंत्र की सिद्धि विनय नीति व्यवस्था प्रशासन देव भक्ति अचानक धन लाभ गर्भ और गर्भिणी का हाल,सन्तान की संख्या,पेट में अन्न या भोजन को पचाने की शक्ति,स्त्रियों के अन्दर गर्भाशय का विचार इस भाव से किया जाता है,इस भाव का मालिक भी गुरु होता है,और गुरु के अनुसार ही शरीर में इस भाव का ज्ञान मिलता है।

६.रिपु या छठा भाव

विरोध देर होना दुश्मन माया चिन्ता शंका रोग दुर्घटना चोट षडयन्त्र विपत्ति और शारीरिक दुर्बलता का विचार किया जाता है,इस भाव का कारक मंगल और शनि को माना जाता है।

इसी प्रकार से सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश एवं द्वादश स्थान से भी भावों का विवेचन किया जाता है।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि प्रश्न शास्त्र ज्योतिष विद्या का एक महत्वपूर्ण अंग है,यह तत्काल फल बतलाने वाला शास्त्र है,इसमे हम तत्कालिक लग्न एवं ग्रह स्थिति के आधार पर व्यक्ति के मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले प्रश्न और उनके शुभाशुभ फ़ल का विचार करते है। केरल रमल और स्वरशास्त्र इसके अंग है,इन शाखाओं में प्रश्नाक्षर अंक एवं स्वर के आधार पर प्रश्न के शुभ या अशुभ फ़ल का निश्चय किया जाता है। मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु प्राणी है, दृश्य एवं अदृश्य गतिविधियों को जानने के लिये मानव मस्तिष्क मे सदैव उत्सुकता रहती है, क्यों कैसे और क्या हो रहा है और क्या होगा आदि। उसकी यह जिज्ञासा प्रवृत्ति उसके सामने अनेक प्रश्नों को उत्पन्न करती है,जिस बात को जानने की उसकी प्रबल इच्छा रहई है,उसके बारे में पूरी जानकारी हो जाने पर उसे असीम आनन्द मिलता है। यद्यपि मन-मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाली इच्छा आकांक्षा उत्सुकता शंका या चिन्ता का ज्ञान और समाधान करना दु:साध्य है तथापि हमारे पूर्वजों महाऋषिओं और आचार्यों ने मानव की इस स्वाभाविक जिज्ञासा की पूर्ति के लिये प्रश्न-शास्त्र की रचना की।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

जिज्ञासु – जानने वाला

अदृश्य – जो दिखलाई न पड़े

प्रबल – अधिक बलपूर्वक

आकांक्षा – चाह

ज्ञानपिपासा – ज्ञान की प्राप्ति करने की प्रबल इच्छा

प्रश्नाक्षर – प्रश्न का आदि अक्षर

रिपु – शत्रु

ज्ञात्वा – जानकर

गमनागमन – आना जाना

सित – शुक्र

कालस्य – काल का

पुण्यागमं – पुण्य का आगम

दृश्य – जो दिखलाई दे

स्वरशास्त्र – पंचस्वर पर आधारित शास्त्र

नृप – राजा

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ख
4. ख
5. क

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी – नीलकण्ठ दैवज्ञ
2. ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रश्न शास्त्र पर टिप्पणी लिखिये।
2. प्रश्नाक्षर सिद्धान्त की विस्तृत लेखन कीजिये।

इकाई – 5 स्वर सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 स्वर सिद्धान्त

बोध प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई 301 के चतुर्थ खण्ड की पंचम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के अन्तर्गत ताजिक शास्त्र के अनुसार '**स्वर सिद्धान्त**' का उल्लेख किया जा रहा है। इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रश्नाक्षर सिद्धान्त का ज्ञान प्राप्त कर लिया है यहॉ इस इकाई में आप 'स्वर सिद्धान्त' का अध्ययन करेगें।

स्वर सिद्धान्त क्या है ? उसका प्रयोजन क्या है ? उसका महत्व क्या है ? इन सभी विषयों से सम्बन्धित जानकारी आपको प्रस्तुत इकाई में होगी।

इस इकाई में आप मुख्य रूप से स्वर सिद्धान्त सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन प्राप्त करेगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेगें कि –

1. स्वर क्या है।
2. स्वर सिद्धान्त का प्रयोजन क्या है।
3. स्वर सिद्धान्त के फल क्या है।
4. स्वर सिद्धान्त का महत्व क्या है।
5. स्वर सिद्धान्त के अन्तर्गत क्या – क्या आता है।

5.3 स्वर सिद्धान्त

स्वरशास्त्र जातक शास्त्र का ही एक स्कन्ध है। इस शास्त्र में स्वर के आधार पर लाभ – हानि , जय – पराजय , जीवन मरण का विश्लेषण किया गया है। इससे इडा – पिंगला – सुषम्ना नाडीस्वर संचारण वश कार्य की सिद्धि असिद्धि का निर्धारण किया जाता है। नाडीस्वर से सम्बन्धित शिवस्वरोदय आदि ग्रन्थ हैं। स्वर (अ, इ, उ, ए, ओ) शास्त्र में ही नरपतिजयचर्या नामक एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसकी रचना संभवत: १०९६ शकाब्द में हुई थी। इस ग्रन्थ में पॉचों स्वरों अ, इ, उ, ए, ओ के आधार पर ही मनुष्य जीवन के समस्त शुभाशुभ कार्यों का समय साधन किया गया है। स्वर सिद्धान्त का विवेचन ताजिकनीलकण्ठी में नहीं किया गया है।

अन्य मतानुसार ज्योतिष में स्वर ज्ञान नासिका के आधार पर माना गया है। नासिका का बांया स्वर चन्द्र तथा दाहिना स्वर सूर्य संज्ञक होता है,चन्द्र स्वर यात्रा करना शुभ और सूर्य स्वर में अशुभ मानते है,जो स्वर बह रहा हो,उसी ओर का पैर पहले उठाकर यात्रा करने से विजय प्राप्त होती है,जब दोनो स्वर एक साथ चलते हों तो शून्य स्वर कहलाता है,उस समय में यात्रा करना हानिकारक होता है,यह

यात्रा शब्द का बोध दैनिक जीवन यात्रा से भी जुडा होता है,यानी जब हम सबसे पहले अपनी रोजाना की जीवन यात्रा से भी मानकर चलते है,और सुबह जाग कर बिस्तर से पैर को नीचे रखने से ही यात्रा का शुभारम्भ हो जाता है।

ज्योतिष विज्ञान इस बात को स्वीकारता है कि व्यक्ति के जीवन तथा चरित्र को मूलतत्व किस प्रकार प्रभावित करते हैं। जहाँ ज्योतिष के अनुसार तत्व एक ब्रह्मांडीय कंपन के लक्षण बताते हैं वहीं (स्वर) योग सिद्धांत के अनुसार ये तत्व एक ख़ास शारीरिक लक्षण को बताते हैं। शिव स्वरोदय ग्रंथ मानता है कि श्वास का ग्रहों, सूर्य और चंद्र की गतियों से संबंध होता है।

ज्योतिष के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पंचस्वरा' में पॉच प्रकार के स्वर कहे गये है। यथा –

उदितं भ्रमितं भ्रान्तं सन्ध्याऽस्तं तदनन्तरम्।
जन्म कर्म तथाऽऽधानं पिण्डं छिद्रं तत: परम्॥
पंच बालादिकावस्था नामाद्यक्षरतस्तथा।
आद्यो बाल: कुमारश्च युवा वृद्धो मृतोपि वा॥

ग्रन्थकार आचार्य प्रजापतिदास ने वर्णस्वर क्रम से उदित – भ्रमित तथा भ्रान्त स्वरादि संज्ञा की कल्पना की है परन्तु कौन सा पंचस्वर है तथा किस नामादि अक्षर से किस प्रकार ये संज्ञायें कल्पित की जायेंगी इसको नहीं कहा है। वर्णस्वर चक्र में जन्म नक्षत्र का जो नामादि वर्ण हो उसका जो (अ, इ, उ, ए, ओ) इन पॉचों स्वरों में से जो स्वर हो वह उसका **उदित** स्वर होता है। उदित स्वर से दूसरे स्वर की **भ्रमित** संज्ञा, तीसरे की **भ्रान्त** , चौथे की **संध्या** और पॉचवें की **अस्त** संज्ञा होती है। जन्म नक्षत्र वश नामाद्यक्षर के वश वर्णस्वर में बालादि अवस्था होती है। जैसे प्रथम **बालावस्था** द्वितीय **कुमारावस्था** तृतीय **युवावस्था** चतुर्थ **वृद्धावस्था** तथा पंचम **मृतावस्था** होती है।

विशेष -

पंचस्वरा नामक ग्रन्थ में मुख्यत: आयुर्दाय का विचार है अतएव यहॉ जन्मनक्षत्र के अनुसार स्वरों का विचार किया गया है अन्यथा यात्रा, युद्ध, विवाहादि तथा दान, देवार्चन, विवाहादि शुभाशुभ कार्यों के विचार में व्यवहार नाम वाले स्वरों का ही विचार करना चाहिये क्योंकि नरपतिजयचर्या नामक ग्रन्थ में व्यवहार नाम से ही स्वरों का विचार किया गया है जैसे नरपतिजयचर्या में कहा गया है कि –

प्रसुप्तो भाषते येन येनागच्छति शब्दित:।
तत्र नामाद्य वर्णे या मात्रा मात्रास्वर: स हि॥

जिसके व्यवहार नाम अनेक हों उनके लिय किस नाम से विचार होगा। इसका निर्णय निम्न श्लोक से

स्पष्ट है -

संज्ञान्तर सहित वर्णस्वर चक्र –

अ	**इ**	**उ**	**ए**	**ओ**	**पंचस्वर**
क	ख	ग	घ	च	वर्ण
छ	ज	झ	ट	ठ	''
ड	ढ	त	थ	द	''
ध	न	प	फ	ब	''
भ	म	य	र	ल	''
व	श	ष	स	ह	''
उदित	भ्रमित	भ्रान्त	संध्या	अस्त	संज्ञा
जन्म	कर्म	आधान	पिण्ड	छिद्र	संज्ञान्तर
बाल	कुमार	युवा	वृद्ध	मृत	संज्ञान्तर

बहूनि यस्य नामानि नरस्य स्यु कथञ्चन।

ततः पश्चाद्भवो नाम ग्राह्यं स्वरविशारदः ।।

इससे भी स्पष्ट सिद्ध है कि केवल आयुर्दाय को छोड़कर अन्य सभी व्यवहारों के लिये व्यवहार नाम ही ग्रहण करना चाहिये।

कथित स्वरों के फल –

उदिते विजयो नित्यं भ्रमिते लाभ एव च।

भ्रान्ते च सिद्धिमाप्नोति सन्ध्यास्ते मरणं ध्रुवम् ।।

अर्थात् उदित स्वर में कार्य करने से विजय, भ्रमित स्वर में लाभ, भ्रान्त स्वर में सिद्धि और संध्या तथा अस्त स्वर में निश्चित ही मरण होता है।

दशा स्वर कथन –

यत्र नामाक्षरं प्राप्तं तत्र चैवोदितः स्वरः।

तस्माद्वर्षं विजानीयाद्वर्षान्मासो भवेत्पुनः ।।

मासद्वयं विधातव्यं दिनं च द्वादशोत्तरम्।

एवं क्रमेण बोधव्यो वर्षभागस्तु पंचधा ।।

कार्तिकस्य परे भागे नव ग्राह्या यथा तथा।

मार्गपौषो तथा देयं माघस्य च दिनत्रयम् ।।

वर्णस्वर चक्र में जिस स्वर के नीचे का नामाक्षर प्राप्त हो वही उदित स्वर होता है। उसी उदित स्वर

से वर्षारम्भ होता है एवं वहीं से वर्ष का पॉच भाग कर पॉच मास की अर्थात् उदित – भ्रमित – भ्रान्त – संध्या तथा अस्त संज्ञक मासें की कल्पना आचार्य के द्वारा की गई है।

एक एक भाग 'द्वादशोत्तरदिनमासद्वय' अर्थात् बहत्तर – बहत्तर दिन के क्रम से वर्ष में पॉच भाग कर के उदितादि पॉचों स्वर होते हैं। इस तरह एक वर्ष में पॉच कल्पित मास होते हैं।

इस ग्रन्थ में 'कार्तिकान्त नवाहानि' इत्यादि से वर्षारम्भ निर्धारित किया गया है अतएव यहॉ भी वर्षभागस्तु पंचधा कहकर उसी आधार पर इस को स्पष्ट किया गया है जैसे कार्तिक शुक्ल पक्ष के अन्त का नव दिन और मार्गशीर्ष पौष सम्पूर्ण तथा माघ के तीन दिन अर्थात् इन ७२ दिनों को 'अ' स्वर के नीचे। माघ के शेष २७ दिन फाल्गुन के ३० दिन चैत्र के १५ दिन इन ७२ दिनों को 'इ' स्वर के नीचे। चैत्र के शेष १५ दिन वैशाख के ३० दिन ज्येष्ठ के २७ दिन इन ७२ दिनों को 'उ' स्वर के नीचे। ज्येष्ठ के शेष ३ दिन आषाढ़ के ३० दिन श्रावण के ३० दिन और भाद्रपद के ९ दिन इन ७२ दिनों को 'ए' स्वर के नीचे तथा भाद्रपद के २१ दिन आश्विन के ३० दिन और कार्तिक के २१ दिन इन ७२ दिनों को 'ओ' स्वर के नीचे स्थापित करने से पॉच मास होते हैं। यहॉ पर अकारादि स्वर उपलक्षण मात्र है वस्तुत: वर्णस्वर से जिसका जो स्वर उदित हो उसी से वर्ष भाग की कल्पना होती है।

मासात्मक दशास्वर चक्र –

अ	**इ**	**उ**	**ए**	**ओ**	**पंचस्वर**
का. ९	मा. २७	चै. १५	ज्ये. ३	भा. २७	**मासदिन संख्या**
मा.शी. ३०	फा. ३०	वै. ३०	आ. ३०	आश्विन. ३०	**मासदिन संख्या**
पौ. ३०	चैत्र १५	ज्ये. २७	श्रा. ३०	का. २१	**मासदिन संख्या**
मा. ३	०	०	भा. ९	०	**मासदिन संख्या**
७२ दिन	७२	७२	७२	७२	**सम्पूर्ण दिनसंख्या**

तथा स्व स्व जन्मदिवस से ७२ दिन का एक – एक मास कल्पना करके पॉच मास एक वर्ष में होते है। ये ही मास क्रम से उदितादि स्वरों के दशामान होते हैं।

तिथ्यादि स्थापन कथन –

एवं क्रमेण दातव्यो वर्ष पूर्णं यथा भवेत्।
तिथि: प्रतिपदादिश्च कुजादिर्वारनिर्णय: ॥
नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णाश्चापि यथा क्रमम्।

क्रमेणाङ्का: प्रदातव्या ग्राह्यश्चाङ्कसमुच्चय: ।

चन्द्राष्टौ प्रथमे देया नग नागा द्वितीयके ।।

तृतीये चाग्निनवकं चतुर्थे च नवग्रहा: ।

पंचोत्तरशतं देयं पंचमे पंचसुक्रमात् ।।

अकारादि स्वरेष्वेवं तिथ्यङ्काश्च प्रदापयेत् ।

पूर्वोक्त क्रम से अकारादि स्वरों के नीचे प्रतिपदादि तिथि तथा भौमादि वार को देना चाहिये जिससे कि वर्ष पूर्ण हो जाये। तिथि दान में अ स्वर के नीचे नन्दा, इ स्वर के नीचे भद्रा, उ स्वर के नीचे जया, ए स्वर के रिक्ता तथा ओ स्वर के नीचे पूर्णा तिथि देकर क्रम से तिथि के अंकों का योग करना चाहिये।

बोध प्रश्न –

1. नाड़ी कितने प्रकार के होते है –

   क. 2 ख. 3 ग. 4 घ. 5

2. पंचस्वर है –

   क. क, ख, ग, घ, ड. ख. अ, ई, उ, ए एवं ओ ग. अ, क,च,ट,त घ. कोई नहीं

3. नासिका का बॉया स्वर निम्न में किसका संज्ञक होता है –

   क. सूर्य संज्ञक ख. चन्द्र संज्ञक ग. मंगल संज्ञक घ. शुभसंज्ञक

4. पंचस्वरा: के रचयिता है –

   क. आचार्य नरपति ख. प्रजापति दास ग. भास्कराचार्य घ. गणेश दैवज्ञ

5. स्वर शास्त्र सम्बन्धित है –

   क. ज्योतिष से ख. योग से ग. दोनों से घ. कोई नहीं

योग करने पर अ स्वर के नीचे ८१ , इ स्वर के नीचे ८७ ,उ स्वर के नीचे ९३, ए स्वर के नीचे ९९, ओ स्वर के नीचे १०५ होते हैं। कुजादिवार निर्णय में सातवार की घटी ६० × ७ = ४२० इसलिए पॉच से भाग दिया तो ४२० ÷ ५ = ८४ घटी। एक स्वर का मान हुआ।

तिथ्यादि स्वर चक्र –

अ	इ	उ	ए	ओ	पंचस्वर
१।६।११	२।७।१२	३।८।१३	४।९।१४	५।१०।१५	शु. पक्षति.
१६।२१।२६	१७।२२।२७	१८।२३।२८	१९।२४।२९	२०।२५।३०	कृ. पक्षति.
नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	नन्दा

८१	८७	९३	९९	१०५	ति. योग
मं. ६०	बु. ३६	वृ. १२	श. ४८	र. २४	कुजादि
बु. २४	वृ. ४८	शु. ६०, श. १२	र. ३६	चं. ६०	वारघटी
८४ घ.	८४ घ.	८४ घ.	८४ घ.	८४ घ.	योग

अब यहॉ अ स्वर के नीचे भौमवार ६० घटी तथा बुधवार २४ घटी। इ स्वर के नीचे बुध की शेष ३६ घटी तथा गुरूवार की ४८ घटी। उ स्वर के नीचे गुरूवार की १२ शुक्रवार की ६० शनिवार की १२ घटी। ए स्वर के नीचे शनिवार की ४८ रविवार की ३६ घटी। ओ स्वर के नीचे रविवार की शेष २४ घटी और चन्द्रवार की ६० घटी। इस तरह एक – एक स्वर के नीचे ८४ घटी के भाग होते हैं।

अन्तर्दशा फल –

उदितादित्रिकं चेत्स्यादन्योन्यं भाग संस्थितम्।
तदा शुभं विजानीयान् मध्यं सन्ध्यादि संस्थितम्॥
अन्योन्यभागसंस्थं चेत्सन्ध्यास्तेऽरिभयं भवेत्।
तदा क्लेशं विजानीयादुदितादित्रिके समम्॥

उदितादि तीनों स्वरों की परस्पर अन्तर्दशायें शुभफलदायक होती हैं अर्थात् उदित स्वर में उदित – भ्रमित और भ्रान्त स्वर की अर्न्तदशा , भ्रमित स्वर में भ्रमित भ्रान्त तथा उदित स्वर की अन्तर्दशा एंव भ्रान्त स्वर में उदित भ्रमित भ्रान्त की अन्तर्दशायें शुभफलकारक होती हैं। संध्या और अस्त स्वर में उदितादि तीनों स्वरों की अन्तर्दशायें मध्यम फल कारक होती है।

5.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने समझ लिया है स्वरशास्त्र जातक शास्त्र का ही एक स्कन्ध है। इस शास्त्र में स्वर के आधार पर लाभ – हानि , जय – पराजय , जीवन मरण का विश्लेषण किया गया है। इससे इडा – पिंगला – सुषम्ना नाडीस्वर संचारण वश कार्य की सिद्धि असिद्धि का निर्धारण किया जाता है। नाडीस्वर से सम्बन्धित शिवस्वरोदय आदि ग्रन्थ हैं। स्वर (अ, इ, उ, ए, ओ) शास्त्र में ही नरपतिजयचर्या नामक एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसकी रचना संभवत: १०९६ शकाब्द में हुई थी। इस ग्रन्थ में पॉचों स्वरों अ, इ, उ, ए, ओ के आधार पर ही मनुष्य जीवन के समस्त शुभाशुभ कार्यों का समय साधन किया गया है । स्वर सिद्धान्त का विवेचन ताजिकनीलकण्ठी में नहीं किया गया है।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

इडा – नाडी का प्रकार

नरपतिजयचर्या – स्वर शास्त्र का ग्रन्थ

उदित – स्वर के प्रकार

भ्रमित – स्वर के प्रकार

संध्या – स्वर के प्रकार

अस्त – स्वर के प्रकार

बाल्यावस्था – बालक की 5 वर्ष से 10 वर्ष की अवस्था

मृतावस्था – मरने की अवस्था

युवावस्था – 16 वर्ष से 25 वर्ष की अवस्था

पंचस्वरा – स्वर शास्त्र का ग्रन्थ

त्रिकोण – ५,९

पुण्यागमं – पुण्य का आगम

योग – मेल

घटी – ज्योतिष में काल मात्रक

प्रजापतिदास – पंचस्वरा के रचयिता

मार्गगमन – मार्ग में जाना

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ख
4. ख
5. ग

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ताजिक नीलकण्ठी – नीलकण्ठ दैवज्ञ
2. पंचस्वरा: – आचार्य प्रजापति दास

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्वर क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. स्वर सिद्धान्त की विस्तृत व्याख्या कीजिये।
3. मास, तिथि स्वर का विवेचन कीजिये।